



मालवीय जन्म-शती के उपलक्ष्य में प्रकाशित

महामना मालवीय

ॐ ॐ हमारे सामने तो कई ऐसी मिसालें हैं जिनसे हम सीख सकते हैं—  
 आजकल के लोग आजकल के लीजवान बहूत-कुछ सीख सकते हैं मालवीय  
 जी के जीवन से। उनके सामने जो लक्ष्य था वैसे उन्होंने काम किया और  
 सफलता पायी इन सबसे। हम मूर्खियाँ खड़ी करें संभारें बनायें यह तो  
 ठीक है लेकिन-घातुर में सबकुछ सीखें उनकी जिन्दगी से उनके काम से  
 और सीखकर उसी रास्ते पर जैसे आजकल के जमाने में उसको लगाकर  
 पमें और घाये बड़ें तो यही उनका सबसे बड़ा स्मारक हो सकता है।  
 यह प्रश्न है कि समय आया उनकी शताब्दी मनाने का तो पुराने और  
 नये लोग सब फिर सोचें बिचार करें और सीखें कि वे क्या-क्या बातें की  
 जिनसे मालवीयजी इतने ऊँचे महापुरुष हुए कौनसे उन्होंने भारत की आजादी  
 के रास्ते में अगुनी संस्कृति का धारण करने के रास्ते में एकको बढ़ाया  
 और यह कि उनके बतलाये रास्ते पर चलकर भारत की सेवा हम किस  
 तरह करें और आये बड़ें।

—जवाहरलाल नेहरू

# सहामना मालवीय

[ सस्मरखात्मक सचित्र जीवनी ]



लेखक

व्रजमोहन व्यास



भूमिका

माननीय लाल बहादुर शास्त्री

[ गृह मंत्री, भारत सरकार ]



प्रकाशक

साधना सदन

लूरुगज, इत्ताहाबाद-१

पॉष रूपये

प्रकाशक	मुद्रक
सायना कदम	नीक मास्टी मुद्रणालय
मुम्बई ११, इलाहाबाद—१	इलाहाबाद—१
●	●
प्रथम संस्करण	मूल्य
दरबारी १९६३	पाँच रुपये

जवाहरलाल नेहरू

को

जो मानवता को स्रष्टित करने वाली कटुता के  
धुँधले कोहरों से ऊपर हैं

और

सीमातीत विश्व का स्वप्न देखते हैं  
उन्हीं के नगरवासी एक अप्रज की यह जीवनी  
समर्पित है





सत्यमेव जयते

# गृह मंत्री भारत सरकार

२४ दिसम्बर, १९६०

## भूमिका

मातृपीयूषी महारथ मातृपीयूषी महारथ के धर्म नेता हैं। हमारे यहाँ गिरतों एवं पुस्तकों के साथ का विधान हमीनिष् है कि हम उनके जीवन से धर्म जीवन का जोड़ सकें और उनमें प्रकाश और शक्ति प्रकृत कर सकें। मातृपीयूषी के प्रति यथा श्रद्धा करते समय हमें उनका सम्मान करित उनके वैदिक धारण उनका धर्म और भारतीय धारणों एवं परम्पराओं से उनका अविचल निष्ठा से याद धनायास या जाती है।

उनमें अनेक गुण हैं जिन्से उनके जीवन में ही प्रकाश धारणों की पहली भारतीय समाज धर्म-परम्परा में उनका महान विद्वान् धूमनी उनका उच्चत वैश्वविषय। धर्मता से धर्मों की उनमें अविचल एक हो गयी थी—यह ही उनका वैश्व का धर्म वैश्व ही उनका धर्म। एक से युवा धूमनी को बहुत देख नहीं सकते थे। इनीनिष्से अनेक समाज-धुमारणों एवं वैश्व-नेताओं से उनका महान विचलता या धर्मता हम महामैत्र के धारणों में ही नियमता से धुम्प में सकर धर्मने धारण उनका अविचल वैश्व से संबन्ध में वैश्व उस पर महत्व निधारण कर देने के लिए धारण हो उठता था। धर्मविद्वान् से निष्ठा रखते हुए भी धर्म के ऐसे जीवन और धर्म वि विधी से भी धुम्प धर्म श्रद्धा में वैश्व नहीं पाते थे। अन्तर्गत मातृ भी बहुत धारण के लिए रोने से धर्मने धर्म में धर्म धर्म हुए भी



दूजरे बर्नाबिलम्बियो का धारण एवं सम्भाल करते थे । उपदेश देने के स्वाभाविक वाचनार्थ वह सेवा के लिए कष्ट सहने को धारण या करते थे ।

यान जब वे ह्वारि बीच गयी है तब इस बात को समझना ह्वारि लिए उचित धीर व्यवहार है कि उनका जीवन कितने बड़ा तथा या उनकी शक्ति का खोप तथा या वे धरतर से कैसे थे क्योंकि निम्नी महापुरुष की ठीक-ठीक समझ धीर प्राप्त कर ही इन प्रकका धनुकरख-धनुसरख कर सकते हैं । इन दृष्टि से यह पुस्तक समुचित है । इनके सखर १० ब्रह्मोहन ज्ञान का मानवीयजी महाराज जब उनके परिवार से पतिष्ठ धीर पुरावा सम्भव रहा है । उन्होंने उनको धनेक व्यवस्थाओं से गुजरत हुए स्वयं देखा है । बहुत कुछ उनके एवं मानवीयजी महाराज के धारणों तथा शिक्षणों से भी लबला है । वे स्वयं संस्कृत साहित्य तथा भारतीय विद्या के धर्मो धर्मोना है । इन पुस्तक में उन्होंने मानवीयजी के जो हस्तचित्र एवं जीवन रंगारों प्रस्तुत की है उन पर उनकी तरस सीधी की धार है । इनमें मानवीयजी के जीवनधारण उनके जीवन की उछान की रंगा तूब उमरी धीर लपट ही बकी है । ऐनी पुस्तक की धाररवकता की धीर धीरेजनी में इन पुस्तक की धाररवकता का हिन्दी के एक धर्मो की पुष्टि की है ।

(सात बलादुर)





## जीवन कथा

हीमाली कल्पवृक्ष स्वगुणकलत्रतः सज्जनानां बुद्धिम्भी  
 प्रायसं पण्डितानां सुबिरतनिद्रव्यं श्रीमद्वैशातसुत्रः ।  
 सरकृतां नाभमानां पुष्पगलनिधिं बलिखोदारतलो  
 हृदि कः इत्याद्यः सञ्जीवत्यपि कमुणतया धीमतां नाभवीथ ॥

भावार्थ — महामनाजी दीन दुखियों के लिए कल्पवृक्ष थे।  
 अपने गुणों के मार स सठ थे जसा कालिदास ने कहा है मरुति  
 मन्नास्तरव 'फलोद्गमे फल से मव जाने पर बृक्ष झुक जाते हैं  
 या बँसा अनीस' ने कहा है 'जो साहुबे-बौहर हैं, मुके रहते हैं  
 मरुसर'। वे पण्डितों के लिए मादरी व घौर सञ्जरिप्रठा क्या  
 होती है उसके परसने की कसौटी थे। चरित्र-संगठन उनका सर्व  
 प्रथम ध्येय था। वे ऐसे समुद्र थे जिसके किनारे शील थे। सरकृता  
 के करनेबाम, निरमिमान बनुर, उदार पुरुषों में जो गुण होने  
 चाहिए उनके वे माएबार थे। अपने गुणों व उत्कय से वे अभी तक  
 अविभक्त हैं।

इन संस्मरणों में उक्त गुणों के भापको अनेक उदाहरण मिलते  
 भासबीयजी के संस्मरणों की गहराई तक पहुँचने व लिए उनका  
 एवं उनका परिवार वर परिषय नितान्त आवश्यक है। बनुर मन्ना  
 वर सबीह बमाने के पहिले फलक पर उसकी पृष्ठभूमि ए  
 बासाकरण को तयार करता है तभी चित्र गुनता है। पारिवारिक  
 परिषय संस्मरणों की पृष्ठभूमि है जो संस्मरण-नायक वा र  
 सदा कर देता है।

भासबीयजी महाराज के पूर्वज भासबा से 'रस गगन ति

प्रमाण वषे प्रयाग आये । उसी समय भस्मक के पूज्य भी वहाँ से प्रयाग आये । रस—६ यगन—० तिथि—१२ इस प्रकार तिथियों की बक्रागति होने के कारण संवत् १५०६ हुआ । उस साल तत्का भीन शासक के धर्मसम्बन्धी क्रियाचारों से दुःखित होकर थोड़े से श्रीगौड़ ब्राह्मण माक्षवा छोड़कर भाग निकले और यत्र तत्र बस गये और 'मासवीय' कहसाने लगे । अर्थात् माक्षव से घाए हुए । क्रमक्रमानुसार यहाँ के मासवीयों का मालव प्रवेश के अपने ही मार्ग-बिरादरी के श्रीगौड़ ब्राह्मणों से कोई सम्पर्क न रह गया ।

पुण्यतत्र-इतिहास के विद्वाग् भी काशीप्रसाद ज्ञानसिन्हा अपनी पुस्तक 'राज्यसंघ' में लिखते हैं

मासव नाम का अवशिष्ट अब तक उस प्रान्त के निवासी ब्राह्मणों में मिलता है जो 'मासवी' कहलाते हैं । अब इस राज्य को संस्कृत रूप दे दिया गया है और वह मासवीय बना लिया गया है । वे मासवीय ब्राह्मण गौर वर्ण के और सुन्दर होते हैं विशेष रूप से बुद्धिमान् होते हैं । ये भोग बढ़ते-बढ़ते इसाहाबाद तक आकर बस गये हैं और प्रायः वहीं तथा उसके आस-पास पाये जाते हैं ।"

महामनाजी भरद्वाज योत्रीय चतुर्वेदी थे परन्तु अपने को मासवीय लिखते थे । इनके पितामह परिश्रुत प्रेमधर चतुर्वेदी एक धर्म-निष्ठ सत्कारी श्रीकृष्णपण्डेवी बड़े ही सार्विक पुरुष थे । इनके पिता परिश्रुत ब्रजनाथ चतुर्वेदी परम भागवत वपुष्म एवं सद्-गुरुप्य थे । उनको भगवान् श्रीकृष्ण का इच्छ था । अपना जीवन उन्हीं की सेवा एवं कृपा बाधों में व्यतीत करत थे । मारतीय शासक चारों ने 'अन्वय' उग्रवस वंश कर बहुत जोर दिया है । कुमार-दाम ने तो यहाँ तक कह दिया कि

'नेष्वै पर सासवीयो गुरुषोप्यन्वयवर्जित ।

रत्नाद्भवति बुधोऽपि बुद्धिः कः पारमहंस्यः ॥

(चाहे मनुष्य गुणी भी हो परन्तु यदि वह कुछ बंश का नहीं है तो उस कोई ऊँचा पद न देना चाहिये। कौन ऐसा (मूर्ख) हाया जो पैर के गहने को चाहे वह स्नजटित ही क्यों न हो सर पर बड़ावगा ?)

महामनाजी की माता सोभाग्यवती भूनादेवी एक पति-परायणा सती साध्वी गृहणी थीं। यथा पूतम्मन्वो निधिरपि पवित्रस्य महम जिस प्रकार पवित्रता व माण्डार, महर्षि बन्दिष् अन्धती के सहर्षामिणी होने से अपने को पवित्रतर मानते थे वही प्रकार पुण्यात्मा पण्डित प्रजनायजी भूनादेवी ऐसी पत्नी को पारर अपने को कृतार्थ समझते थे। ऐसे पमनिष्ठ माता पिता की सुन्तान महा मानजी थे। उन उज्ज्वल वंश परम्परा के पुनीत वातावरण में पोष कृष्ण व वज्रमाण्ड १६१ = तदनन्तर २३ दिमम्बर मन् १=६१ को महामानजी का जन्म हुआ। पृथोगति से माता पिता की बाँधे गिस गयीं। दोना उस प्रसन्न हुए जन उमाकुली का जन्मना यथा यथा कयमेव तपोपुरवरी — जैसे पार्वती और शिव कातिबेय क जन्म से अपथा राधी भोग इन्द्र अयन्त व जन्म से प्रसन्न हुए थे। जाहिर भी बात है ऐन घमनिष्ठ, अन्धमनुष् सुभावाय ब्राह्मण के घर में मदर्मी के निचे कोई स्थान नहीं था। सार्मी तो ऐन बुद्धि जीवी परिवार न अमनुष् र्दती है और स्वयं उमस दूर र्दती है। कदा भी है

सार्मी धारोनिधिरपि मातो धारोनिधिरपि बह ।  
विभ्यन्ती धीवरेभ्य मा दुराहारं पनामने ॥

(सार्मी धारोनिधि समुद्र की जप जन्तु है। मद्र कवच बहम की बात नदा है सत्य है। अना द धारर ( इतर — मत्तार = बुद्धि मन् ) स दरमी है और दूर मागती है।

होकरार दिरान व हात्र पीरन पात्र । दमान ही न उनो

प्रमाण वयें प्रयाग आये। उसी समय मेसक के पूबज भी वहाँ से प्रयाग आये। रस=६ गगन=० तिवि=१५ इस प्रकार तिवियों की वक्रागति होने के कारण संवत् १२०६ हुआ। उस साल तत्कालीन शासक के समसम्बन्धी अत्याचारों से दुःखित होकर बोड़े से धीगौड़ ब्राह्मण मासवा छोड़कर माग निकले और यत्र तत्र बस गये और मासवीय कहमाने लगे। अर्थात् मासव से भाए हुए। अलक्रमानुसार यहाँ के मासवीयों का मासव प्रदेश के अन्तरे ही मार्ल-बिटादरी के श्रीगौड़ ब्राह्मणों से कोई सम्पर्क न रह गया। पुरातरन-इतिहास के बिद्वान् भी वाशीप्रसाद जामसवास्त अपनी पुस्तक 'राज्यवर्ष' में लिखते हैं

मासव नाम का अवशिष्ट अब तक उस प्रान्त के निवासी ब्राह्मणों में निषठा है जो मासवी कहलाते हैं। अब इस शब्द को संसृष्ट रूप दे दिया गया है और वह मासवीय बना लिया गया है। वे मासवीय ब्राह्मण गौर वर्ण के और सुन्दर होते हैं विशेष रूप से बुद्धिमान् होते हैं। वे लोग बढ़ते-बढ़ते इसाहाबाद तक आकर बस गये हैं और प्रायः वहीं तथा उसके आस-पास पाये जाते हैं।

महामन्त्री भरदाज गोत्रीय जनुवैदी ये परन्तु अपने को मासवीय सिगते थे। इनके पितामह पण्डित प्रेमधर जनुवैदी एक धर्म-निष्ठ सदाचारी धीगुणपदसही बड़े ही सात्विक पुरुष थे। इनके पिता पण्डित ब्रजनाथ जनुवैदी परम भागवत वण्णव एवं सद्गुरुस्य थे। उनसे मगवान् धीगुण्य का इष्ट था। अपना जीवन उन्हीं की सलाह एवं कथा वार्ता से व्यतीत करत थे। भारतीय शासकों ने 'अभ्यय' उग्रव्रत बंश कर बहुत जोर दिया है। कुमार-

श्रीवर्षे वर लक्ष्मीयौ पुष्पीप्यभयवर्षिष्ठः ।  
रत्नाद्वमनि वृक्षीयं नृत्तिं च वारमणम् ॥

(चाहे मनुष्य सुखी भी हो परन्तु यदि वह मूढ़ वंश का नहीं है तो उस कोई ऊँचा पद न देना चाहिये। बौन पेसा (सूख) हागा जो पैर के गहने को चाहे वह खनजटित ही क्यों न हो सर पर धड़ावगा ?)

महामात्री की माता सोमाग्रयती मूनादवी एत पति परायणा सती साध्वी सुहृदी थी। 'यथा पृथग्मग्नो निधिर्धिवि पवित्रस्य महम' जिस प्रकार पवित्रता के भाग्यकार महर्षि पवित्र अद्वयती के सहर्षामिणी होने से अपने को पवित्रतर मानते थे उसी प्रकार पुण्यमात्मा पवित्रत प्रयनापत्री मूनादवी ऐसी पत्नी को पारंग बनाने को कृतार्थ समझते थे। ऐसे धर्मनिष्ठ माता-पिता की सुस्तान महा मानती थे। ऐसे उज्ज्वल वंश परम्परा के पुनीस बासापरण में पौप कृष्ण = बीनमार ११ = तानुमार २१ दिसम्बर सन् १८११ को महामात्री का जन्म हुआ। पुत्रोत्पत्ति से माना पिता की वाछें गिर गयीं। दानों पर प्रसन्न हुए जैन उपाध्यायों के पत्रमना यथा यथा कपलेन लकीपुरगरी—जिस पारसी और शिव नातिरय के जन्म से कपला शर्मा और इन्द्र जयन्त के जन्म से प्रसन्न हुए थे। चाहिर भी बात है ऐसे धर्मनिष्ठ, अल्पसन्तुष्ट सुखाचार ग्राह्य के घर में मर्मा के निच कोई स्थान नहीं था। मर्मा तो उस बुद्धि जीवी परिवार से अमनुष्य रहती है और स्वयं उास दूर रहती है। बड़ा भी है

मानी मासोनिधिंशो मारी मासोद्वे बह ।  
विष्णवी धीबोम्य ता इरासुर् पनायने ॥

(मर्मा मासोनिधि समूह की जन जन्तु है। पर बहय मह्य की बात नहीं है मन्व है। कत द धीर (स्वय —महा—=बुद्धि मन्व) से रहती है और दू भावती है।

होनादर विरान के हाथ पीरने पाठ। बचन ही म उनक



माता-पिता को ऐसा लगता था कि यह बालक होनहार होगा। पूरा परिवार उनपर न्योछावर रहता था। गौर वर्ण चौड़ा ललाट, मुकीसी नाक, गोम मटोल शरीर और इन सबके ऊपर अनुपम सीर्ण्य। जिन सोर्गों ने उन्हें वृद्धावस्था में देखा है इसकी सहज में कल्पना कर सकते हैं। दिन भर उन्हें एक गोद से दूसरी गोद में जाते-बीतता था। सहजा माप का एक दमोक याद आ गया। उसके सिखने का विधेय कारण यह भी है कि उनके देहावसान के थोड़े ही समय पहिने वाली में इस दमोक को जब हमने उनके सामने पड़ा तो वे फटक उठे और हमसे दोबारा पढ़ने के लिये कहा। महा मनाजी को बच्चे बहुत प्रिय थे। जैसे न फटक उठते। मूर्खोंदय का वर्णन है —

उद्यमिन्नरिण्डुं कर्मां वसुधाय रिण्डुं  
 सखमसमुत्पत्तार्थं बीजिनं पचिमीनि ।  
 निततन्नुत्तराणं ताम्बक्यरथा बयोनि  
 पतिपति विषो के हेतया बालमूर्खः ॥

( भाषार्थ—उदयासन के शिखर के प्रांगण में रेंगता हुआ कमलरूपी मुग जिनका हास है ऐसी कमलिनियाँ जिसे देल रही है और जिसे पक्षिपण बलरथ से बुना रहे हैं ऐसा बालक सूर्य अपने मुनायम हाथों को आगे पसारकर, हलता हुआ अन्तरिक्ष रूपी माता की गोद में गिर पड़ता है। )

बापक मदनमोहन तो बड़े भाइयों और एक बड़ी बहिन की देल रेत म पर के आँगन में घुन्नों के बल गिरते पड़त समते रहते थे। वे बचान ही न लगत थे। ऐम जगद्वी बानरु को कोई दिन मर कम ठारु शकता है ? एक दिन पितमते-पिसमस सीढ़ी पर स एग्रे पर पड़ गय एग्रे पर कोई रोरु ( रैनिग ) मरी थी। बहाँ मड़े हाने का प्रयान किया तो एग्रे से आँगन म गिर पड़े। यद्यपि

एतज्ज बहूत ऊंचा नहीं था—आंगन से कोई बारह-तीरह फुट रहा होगा। इतने छोटे आंगन के लिए उतना ही बहूत था। गिरते ही बेहोसा हो गये। मूनादेवी (माँ रमोईया में सम्मिल थीं। पिता सामने की कोठरी में मगवान् धीहृष्य में ठहरीन आँसू मूक जप कर रहे थे। मूनादेवी दौड़ कर रमोई से निकल आई और चिन्नाई वस्त्रो लड़का एतज्ज पर से गिर पड़ा है। तुम बड़े जप कर रहे हो। ब्रजनाथजी ने आचमन कर मगवान् धीहृष्य को प्रणाम किया और बाहर निकल कर बोले 'बबड़ामो मत सब ठीक हो जायगा। इतना बड़बन अपने कमण्डलु से थोड़ा-ना जल लेकर बेहोसा आँसू के मूह पर टिक्क दिया। उसकी बेहोशी दूर हो गयी और वह उत्साह उठकर अपने के लिए मचाने लगा। मूनादेवी को छटपटा रही थीं पर ब्रजनाथजी के बेहरे पर उद्विग्नता क कोई चिन्ह नहीं थे। जब वे जानते रहे हों कि मगवान् धीहृष्य के रहत उनका कोई बूढ़ बिराद नहीं सकता। और वे फिर जप करने में मग्न हो गये।

महामनाजी का पत्रिक मजान प्रयाग के मोहना अहिंसापुर में भारतीय मयन से संयम कृष्ण जीवनशाम के मोतर है। मजान छोटा और बच्चान-वज्र है। यहीं एक सींगभगर गाँव में मा त्वरिजी का जन्म हुआ। सींगभों को देखकर सहसा बगलगा में दबकी के धर्म से मदनमोहन के जन्म की याद आ जाती है। छोटा-सा आँसू, तीन घोर बोठे और बोटरिया। सामने के बोठे में धीहृष्य मगवान् का मन्दिर और ऊपर के मयत्रिब में खररत की बोटरिया। इसीने पूरा परिवार पुनपुन कर रूढ़ा था। मुनिद्विर्विधि के लिए मूह पीरप की बात है कि अब उगने मोहना अहिंसापुर का नाम मानसाय मगर कर दिया है। परिवार में कोई विशेष आर्थिक संकट नहीं था परन्तु अर्थव्यवस्था तो था न मही। फिर भी जो मृग और शक्ति ब्रजनाथजी के परिवार में थी वह पूर्वजन्तियों के मयी

में नहीं थी। कारण सम्पूर्ण परिवार अल्प-सन्तुष्ट और सबाचारी था। जीविका का साधन केवल राजनाथजी की कथा थी जिससे भगवान् प्रीतिपूर्ण भस्त्रे-चुरे पूरा कर देते थे। राजनाथजी बाँसुरी बजाकर कथा बहुत अच्छी कहते थे। अपनी बाँसुरी वे स्वयं बनाते थे। उनकी कथा लिच्छत्य सोकनाथ महादेव पर होती थी जिसे लोग बड़े धाव से सुनते थे। कथा पर जो कुछ चढ़ता था उसे वे अपनी भगवती मूनादेवी को दे देते थे। उसीसे वे गृहस्थी का पालन करती थीं। वष में कबम एक धार के परदेरा भी कथा कहने के लिए जाते थे। वहाँ उनको अच्छी प्राप्ति हाँ जाती थी। कथा पर जो कुछ द्रव्य पत्र इत्यादिक चढ़ता था उस सब का सब साकर पूर्वक्रमानुसार मूनादेवी को द देते थे और कह देते थे कि इन सब को साम भर चलाता। सन् १८५७ की घात है। महामनाजी के जन्म के चार वर्ष पहिले थी। राजनाथजी हर साम की तरह कथा बाँचने परदेरा गये। सब तक सन् ५७ का बिस्फोट नहीं हुआ था। जब ये प्रयाग लीं तो विद्रोहाग्नि भड़क चुकी थी और प्रिटिश साम्राज्य का शासन चक्र निर्यता से चम रहा था। जब ये चौक में पहुँचे तो उन्होंने देखा कि पसरहट्ट के सामने गीम के पेड़ों में आदमियों की साराँ लम्ब रहीं हैं और रांगीन लिए नृराय गोरे टहल रहे हैं। राजनाथजी के हाथ में गोन के भीतर तानपुरा था। पदम तो वे ही, तानपुरा लिए ध्यान घर की ओर भाये। गोरों ने उनको पकड़ लिया। गमभा रि गोम के भीतर कोई अरत है। राजनाथजी ने बहुत अनुमय विनय किया पर न गारे इनरी बात समझ पाते थे और न वे गोरों की। दृष्टान्ते इंगित से यताया कि यह गाने के साथ बजाया जाता है ता गोरों को बड़ा बुराहल हुआ और उन्होंने इनसे गाने और बजाने से लिए बड़ा। राजनाथजी कर ही क्या करते थे ? भगवान् प्रीतिपूर्ण वा स्मरण कर तानपुरा छेड़ा और एक मजन नाया। कथा भयानक दय रहा होगा यद् ! श्रीम पर

मासों मटक रही हैं सामन रक्त-पिपासु गारे मँडरा रहे हैं बीच में ब्रजनायजी तानपुरे पर कौख मू दवर 'नाथ कसे गज के फं छुहामे गा रहे हैं और जीवन और मृत्यु क बीच में रूपावती हो रही है। जब गोरों ने समझ लिया कि यह तो एक निरौह और निर पराय व्यक्ति है तो उन्होंने इनको छोड़ ही नहीं दिया बस दो गोरे इन्हें घर तक पहुँचा गए।

महामनाजी के बचपन की बातें करते-करते मैं उनके जन्म के पहिले की बातें करने लग गया परन्तु उक्त घटना उनके पिता के साप हुई थी और उससे परिवार की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव पड़ता था इसलिए बचाना उचित जान पड़ा।

कालक्रमानुसार बालक महामनाजीन का अक्षररम्य धामदसर पाठशाळा में हुआ। थोड़े ही समय बाद इस पाठशाळा का नाम 'श्रीधर्मज्ञानोपदेरा पाठशाळा' हो गया और यही नाम अब तक चला और यही नाम अब तक चला आ रहा है। उद्धारण की सुविधा के लिए लोग इस हस्तैव गुरु की पाठशाळा बहुत हैं क्यों कि इनके संस्थापक एवं संचालक एक विरक्त संग्यात्री हरदेवजी थे। यह पाठशाळा मुहल्ल ही में महामना जी के मकान के सप्रिष्ठ थी जहाँ विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा पढ़ायी जाती थी। हरदेवजी एक कर्मनिष्ठ निस्पृह एवं महान् आत्मा के व्यक्ति थे और छात्रों पर बड़ा शासन करते थे। उनका विशेष ध्यान ध्यान क आचार विचार, ब्रह्म-सूया एवं चरित्र-संगठन पर रहता था। इनके लिए उन्होंने विस्तार से कर्म-नियम बनाए थे जिसका कड़ाई से पालन करात थे। वे दण्डनीति के अनुयायी थे। पाठशाळा में, एक ठराती पर बड़े-बड़े अक्षरों में यह वाक्य स्वयं बनाकर टाँग दिया था

उठ बुल में अय्य वाय अक्षर न आये मुक्त

पर न पवार बुल बडे मुक्त सब में।

हाथ बाँध बाँध लटकाए मारे केस के

घाबनी बनहीं पुन्हें सेहीं भने डंग में ।

मैंने उक्त कविता का पूर्वार्थ ही सुना था इस लिए उतना ही ज्ञान सका । छापा को जो दण्ड देते थे उसे पहिसे एक कागज पर लेखकर पाठगाला में टगबा देते थे । पाठगाला के पुराने कागजों में छान-बीन करने में मुझे कई कागज इस प्रकार के मिले । एक कागज पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था शिबसहाय (मूख्से के एक छात्र का नाम) आज मूख्से धोती पहनकर और बिना चन्दन मगामे पाठगाला में आया है इसलिये वह पूता उतारने की जगह पर एक बटे बठे । कमर में कैंटा बाँधकर धोती पहिनने को वे पूर्वार्थ धोती कहते थे । धोती को धुनिया कर पहनना और सामने लटकते हुए धुम्म को उठाकर कमर में दास मेमा 'पण्डिताऊ' धोती कसुलाठी थी । मस्तक में तिलक भगाने पर बहुत जोर देते थे । बिना तिलक सबस्ये छात्र दिखमायी पढ़ा और उसे पूते के पास बैठने का दण्ड मिलना अनिर्वाय था । दण्ड की व्यवधि समाप्त होने पर उसके मस्तक पर चन्दन मगामा जाता था और 'मूख्से' पोती बदनकर लटकाम 'पण्डिताऊ' शंभ से पहिनायी जाती थी । फिय जूटि के लिए क्या दण्ड होगा पहिसे से निर्धारित रहता था । मेरे पितामह दुम्पपाद पण्डित सरमीनारायण व्यास की जो स्वयं मनमा बापा ममला पबिनामा वे हरदेवजी से बहुत पठती थी । उनसे मुझे हरदेवजी के सम्बन्ध में तथा इन पाठशाला की व्यवस्था की बहुत कुछ जानकारी प्राप्त हुई ।

पण्डित हरदेवजी सम्प्योपासन पर बहुत जोर देते थे । बहुधा छात्रों से करने मामने पाठगाला ही में सम्प्योपासन बताने दे । उनका यह नियम था कि सम्प्योपासन से निरुत होकर भिना के लिए निरुत जाते थे और माइले में क्वी एक घर के

सामने जाकर एक बार मित्रा के लिए ब्रह्ते थे । उसने जो कुछ दिया उसे लेकर चले आते थे । यदि उसने कुछ न दिया तो खाली हाथ पाठशाला लौट आते थे । किसी दूसरे घर नहीं जाते थे । उस दिन उनका निरुहार होता था । कई बार ऐसा हुआ है कि उनको दो-दो तीन-तीन दिन निरुहार रहना पड़ा है । परन्तु जब उनकी क्शाति बढ़ी तो लोग उनकी प्रतीक्षा करते रहते थे । एक दिन नगर के एक धनाढ्य पुरुष घासी में भोजन की सामग्री लाये । पाठशाला उस समय लगी थी । हरदेवजी ने उनसे पूछा आप थका स मह सब लाये हैं या लोग की देगा देगी ? जब उन्होंने कहा कि न थका स लाये हैं तो हरदेवजी ने कहा कि यदि आप इस घासी को लेकर घूम में आप पंटे राड़े रहें तो मैं ममनू कि आपकी भय है । वे चले गये । आप पंटे बाद उस घासी से जितनी उस दिन के लिये सामग्री आवश्यक थी उस लेकर सब लोग दिया । हरदेवजी हाथ से पैसा कभी नहीं छूत थे । यदि भोजन की सामग्री के माव कुछ दण्डिया भा भाया तो उस लौट न जाना पड़ता था । पैस कठिन वस्तु की देय रोग और निवेष्टण में बानस मन्मोहन का प्रारंभिक विद्याध्ययन हुआ जिसकी अमित छाप उनके जीवन पर सदा बनी रही ।

जब यमनामोदरा पाठशाला में आकर मदनमोहन का विद्याध्ययन समाप्त हो चुका तो उन्हें किसी स्त्रम म मरठी करने का प्रश्न परिवार में उठा । यमनामोदरा पाठशाला में तो निःशुल्क पढ़ने की मिसजा था परन्तु स्त्रम म तो धन देनी होगी । यह एक कठिन समस्या था । जिता ब्रजनाथ चौबेजी की आसक्तिबुद्धि थी । श्रीरनाथ महाराज पर कया करने में जो योड़ा बटुत मिय जाता था वे उसका सम्पुष्ट रूठ प पर उसका एहर्ष्या का पूरा महीं पढ़ता था । यदि घनी पढ़ोनिर्षो स मागत तो धन न लिये ररया मिय जाता कोई बड़ी बात न था । परन्तु स्वामिनारी ब्रजनाथजी को

किसी के आगे हाथ पसारना सहाय न था। जीवन के ऐसे ही छोटे छोटे अवसरों पर मनुष्य की परीक्षा होती है।

भीष्म पितामह कहते हैं कि जब मकरध्वज की माता ने लक्ष्मी से पूछा कि तुम कहाँ रहती हो और कहाँ नहीं रहती तो पहिले कहती हैं कि मैं उन स्थानों में नहीं रहती जहाँ

यश्चात्प्रति प्रायपते न किञ्चिद्

यद्वा स्वभाषोपहृताभ्यतरामा ।

तेष्वल्पमन्तोपररेषु निर्यं

नरेषु नाहं विवस्तामि वैवि ॥

( हे देवि ! जो अपने मन में किसी भी प्रार्थना नहीं करता और जो थोड़े ही में मन्तोप कर नेता है ऐसे पुरुष के समीप मैं नहीं रहती । )

राजनाथजी मैं ये दोनों ही गुण ( मन्त्री के हिसाब से अनपुण्य ) ये तो भला सद्गुणी इनके पास कैसे जा सकती थी ?

यह समस्या कैसे सुधरी ? इस सम्बन्ध में एक छोटी-सी घटना का वर्णन करूँगा ।

एक दिन हिन्दू विश्वविद्यालय में ही आचारवाणी ने मासवीय थी सम्मेलन एक बार्ता रैकार्ड करने का आयोजन किया। यह बार्ता प्रदन और उत्तर के रूप में थी। यह आयोजन विश्वविद्यालय में स्थित मेरे ही बंगले पर हुआ। इस आयोजन में पण्डित श्रीनारायण चतुर्वेदी पण्डित त्रिलोकन पण्डित गार्गी जी के एक प्रमुख मन्त्र और मैं सम्मिलित हुए। श्रीनारायणजी प्रदन करते थे और हम लोग बार्ता बार्ता से उत्तर देते थे। सबसे पहिले मुझी से प्रदन किये गये। पहिले प्रदन था कि मैं स्वयं से मासवीयजी को जानता हूँ। मेरे इस उत्तर पर कि मेरा उत्तरा अतिनिष्ठ गन्तव्य पत्राग बर्ष से उत्तर का है दूसरा प्रदन बड़ा पारगमित हुआ। मुझसे पूछा गया

कि मासवीयजी का व्यवहार अपने परिवारवालों के साथ ऐसा था क्योंकि प्रायः ऐसा देखा गया है कि बड़े सोगा का व्यवहार बाहर के लोगों के साथ तो अच्छा रहता है परन्तु परिवारों के साथ उगासीन और कभी-कभी अकस्मात् होता है। मैंने कहा कि इस प्रश्न का ठीक ठीक उत्तर मुझमें अच्छा और कोई नहीं दे सकता। कारण मेरे एक दत्तन व लगभग श्री० आई० डी० उनके घर में हैं और वे मेरी बहिन और मेरे परिवार की सहेलियाँ हैं जो उनके परिवार में ब्याही हैं जिससे उनके परिवार का बच्चा बहुत मुझे मामूम होता रहता है। मेरी छोटी बहिन ही महामनाजी व पुत्र से ब्याही है। महामनाजी बनुर तो ये ही उन्होंने भी अपना एक बहुत बड़ा श्री० आई० डी० मेरे घर में रख दिया। वह उसकी सगी मातिम है जो मेरे ग्येष्ठ पुत्र की बधू है। महामनाजी का व्यवहार अपने परिवार के सोगा के साथ अतीव म्लिग्ध था।

प्रश्नार्थी विनयायानाडलट्टरु भरलाबिन ।

त रिता गिरल्लाना केचन उम्मेत्तक ॥

( अपनी प्रजा को युष्मार्ग में लाने उनके रक्षण करने उनके मरण-योग्य करने के कारण व ही मुख्य रिता थे। रिता कहलाने वान अथ सोग तो वरत अथ देने भर के रिता थे। ) वापिअम का उक्त वारत महामनाजी पर अक्षरगत् मागू होता है।

तीसरा प्रश्न था—इतना बड़ा और धार्मिक स्वप्नों पर क्या हुआ वह विद्वविद्यालय केचन एवं स्थिति ने किस प्रेरणा से स्थापित कर लिया? इसी प्रश्न के उत्तर में यह स्वरूप की सीमावामी दुर्धी का समाधान निरिा है। मैंने वन विनयायानस की स्थापना करने की प्रेरणा किस प मुखरी है और कोई बल नहीं की गहार्द म है। अनुदेशा म वन "अथ जो करने लगे गये। इस स्पष्ट वाक्य



मैंने कहा—

शुँ के सागर उठेसता हूँ मैं  
 जम घों धील भेसता हूँ मैं,  
 गुप तयस्यत हो क्षर कहता हूँ !  
 अपने कचमों से बेसता हूँ मैं ।

स्पन्दिकाण चाहते हैं तो कैसेजा घाम कर सुनिये ।

ब्रजनायकी की आकाशी वृत्ति और वह भी बहुत योकी होने के कारण बालक मन्म को फीस की कोई ब्यबस्था नहीं हो सकी । परन्तु माता-पिता हतारा नहीं हुए । माता मूनादेवी के हाथ में कड़े थे । पड़ोस में एक पूजीनति आमा गयाप्रसाद की कोठी थी । वहाँ की गियों स मूनादेवी का मेस-ओप था । मूनादेवी अपने बड़े प्रति माम जब फीस दनी होती थी वहाँ गिरबी रख देती थीं और महीने के भीतर जब ब्रजनायकी को बचा-यार्ता में कुछ मिल जाता था तो उन कड़ों को लुका सेती थीं । इस प्रकार प्रतिमास वह कड़ा दिवाह में मचने के लये की तरह इस पर स उस पर और उस पर स इस पर आता आता रूखा था और तब बालक मदनमोहन की फीस ही जाती थी । याह रे विधि की बिहम्बना और मिक है सदमी के इन 'कौस्तुभमाणे अतिनप्युर्यम्' को । आसक मदनमोहन के मातृ एवं पितृमच्छ मुनोमल हृदय में अन्तःप्रसूतवहम एवमत्रिव' (भीतर ही भीतर अवसा हुआ) यह शस्य की भाँति अबश्य पुमता ग्हा होगा । आगे पसरर इसी बामक मदनमोहन ने घति विराक्त शारी हिम्नू बिन्वदिणामय' का संस्थापन एवं परिवर्धन क्रिया अहाँ सँकड़ों गरीब विपार्यों प्रतिबर्ध निगुस्त शिखा पाते हैं । महामनाजी का एक सल्ल स्वभाव भूय था । उनका नाम था बसिहारी । बहुत स गरीब बिपार्यों पस आते थे बिमबी महामना जी तक जाने की हिम्मत नहीं पारनी थी यद्यपि ये सबको गुलम थे । वे बसिहारी स अपना दुगडा फहत थे और बसिहारी महा

मनाबी स कह सुनकर उनकी फ्रीस माफ करा देता था। बलिहारी  
 है उस बलिहारी की। इस प्रकार कोई भी बिचार्यो केवल अपना  
 भाव के कारण वहाँ स कमी सिद्धा से विमुक्त नहीं मीटा।

सरस्वती ने मन्मी से कौड़ी-कौड़ी बदना चुका लिया।

अब तो धर्मशास्त्रोपदेश पाठशाला में प्रत्येक विषय की गारुषी  
 परीक्षा तक की सिद्धा दी जाती है पर उस समय जब बालक मदन  
 मोहन ने वहाँ विद्यार्थ्य किया था केवल नाम मात्र की सिद्धा  
 पढ़ाई जाती थी। हृदयबन्धी ने उसका नाम ही रखा था धीमद-  
 अष्टापाठशाला। अरिच संगठन आभार विचार सुभ्योरामन  
 इत्यादि की अपिच शिक्षा होती थी। प्रतिभावान बालक मदनमोहन  
 को इस आत्मसात् करने में कितना समय लगता! उसके तो घर  
 का बाताबरछ ही ऐसा था। बोटे ही समय में उनके पिता ने  
 उसको बिना धर्म प्रबर्षिनी सुमा की पाठशाला में भेज दिया।  
 उस समय बालक मदनमोहन को उस बचन साठ वर्ष की थी।  
 पाठशाला के प्रबन्धक पहिलठ देवकीनन्दनजी इस होनहार एवं  
 प्रतिभावान बालक से इतने प्रमत्त थे कि वे उसे माप देने में से  
 जाकर वहाँ उससे व्याख्यान निनवाये थे। आंग बन्द कर यह बिच  
 हृदय परम पर गीकने सापक है। माप देने की आगर भीड़ में एक  
 साठ वर्ष का सुन्दर बालक इपत्तर व्याख्यान दे रहा है। बालक  
 मदनमोहन के व्याख्यान देने की दीक्षा यहीं स आरम्भ होता है।  
 पुण्यसतिना भार्यारपी क आगीर्वादि स यं प्रह्लादमियं देवी बार्  
 बभ्येवानुबतते (मन्मूठि) इम साधुय के पीले-पीले काली  
 पतिपरायण ही की मीति अपने मगी। आगे चलकर मारगमित  
 व्याख्यान देने की उमरी गच्छि इतनी बड़ी कि सम्पूर्ण भारत में  
 उमरी टकरर के इने-गिने व्यक्ति थे। परन्तु बाबमाजू के उर्गे  
 कोई नहीं पाता था।

## यज्ञोपवीत

ब्रजनायकी ने अपने पुत्र मदनमोहन का यज्ञोपवीत संस्कार भी र्ण की प्रवस्था में कर दिया। इस संस्कार में उनके भगवत्सक्त माता स्वयं आचार्य थे। उन्होंने ही बालक को गायत्री मंत्र की तोता दी थी। प्रया के अनुसार मदनमोहन ने कौपीन पहिन मूज वि वेदमा धारण कर मृगजर्म की बनी हुई माया गले में डाल रूप में पलाशुंइ से लिया और हाथ में भोक्षी मन्काकर माता के सम्मुख नतमस्तक बोन 'भवति मिला में देहि' (आप मुझे मिला दें) माता की आँखें डबडबा पाई और उन्होंने बालक का पात्र मिला स भर दिया। उस समय यह बोन जान सकता था कि यही वासक भाग्य माता स जीवन भर, उसी की सन्तान क शिष्ण दर दर भीम मांगता किरेगा और मारत माता उसकी भोक्षी उसी प्रकार भरेंगी जैसे उसकी माता ने अपने सन्तान क यज्ञोपवीत संस्कार के दिन मरी थी। जिसमें बदना शक्ति हो वह वासक मदनमोहन की छवि

॥ अस्मत्सोमश्चित्रताग्दन्तुरी पत्त स्वर्च शेरधो ।

मोक्ष्या मेवतथा त्रियग्त्रित्तनपोबागद्व मश्रिष्टिष्य ॥

( पवित्र मम्म स निस्त षण मृगजर्म धारण किये और मूज के घने कन्जिगूत्र में कौपीन को बांधे और मजीर सरंगा वम्ब पहिने ) का स्मरण कर अपने अन्तरात्मा को पवित्र कर से।

( नोट — यह श्रद्धाकारी मय का यजन है। के शत्रिय थे। अन्तर दतना हा है कि शत्रिय श्रद्धाकारी सुर्षा पाग की बनी विगमा पहिनता है और बाह्य श्रद्धाकारी मूज की बनी। )

बापक मदनमोहन घब ब्रह्मगारी हो गया। सोने से मूद्रागा पद गया और बटु निगर आया।

धार्मिक प्रवृत्ति तो उनकी पहिले ही से थी। परन्तु सन्ध्या पासन एवं मायत्री मंत्र जपने की ओर उन्हें विशेष प्रवृत्तता था। वे स्वयं नित्य सन्ध्यापासन तर्पण इत्यादि तो करत ही थे सभा को इसका उपदेश भी करते थे। कई बार तो उन्होंने मुमस ही पूछा कि नित्य सन्ध्यापासन तो करते हो न? बचपन में एक बार इन्हें मायत्री मंत्र जपने की पुन संधार हुई। ये सुपचार पर स निकस जाते थे और किसी नितान्त एकांत स्थान पर जासन जमा कर जप किया करते थे। जब इनकी माता को पता चला तो उन्हें बड़ी चिन्ता हुई कि यह सड़का बड़ी साधु-धर्म म हो जाय। यह चिन्ता उनकी निर्मूल थी। परन्तु माता का हृदय और फिर पुर म्नीलां चेत ब्रह्ममसुरमार हि मवति स्त्रियां का हृदय पूम की तरफ कोमल होता है। एव स्थान पर मानवीय जी स्वयं लिखत हैं— 'धार्मिक भावों की ओर मेरा भ्रूणव सड़कपन ही स था। स्मृत जाने के पहिले मैं रोज हनुमानजी का दर्शन करने जाता था और यह दमोक पढ़ता था —

मनोत्रय भाङ्गतनुस्यवेयं त्रिभेगिर्व बुद्धिर्मा बरिष्ठम् ।

बालतमत्रं बाभरदूकपुत्रं श्री रामतुन गिरत्ता मन्मथि त्

लोकनाथ महादेव के पास सुरभीपर चिम्बन साल मोक्षाल के चतुर्वे पर विचारों तथा बीचने जात थे। मुद्गीगंज के मन्दिर में भी बहु कथा कहने जाया करत थे। मैं दमों जगह कथायें सुनने के लिए नित्य जाता था और उनकी चोरी क पास बैठ कर बड़े ध्यान से कथा सुनता था। विचारों में एक दिन बड़ा— तू बड़ा पछ है। यह सुनकर मुझे बड़ी प्रत्यक्षा हुई थी।

१ 'ये गावरी का जप ब्रह्म किया करता था। एव बार परबाला को संभा हुई कि मैं मापु न हो जाऊ और ब इमलिए मरि निम्न-रानी रखने समे थे।

पूज्य माझवीयजी के कागज-पत्रों में उनका स्वयं लिखा हुआ उक्त लेख प्राप्त हुआ है जिससे उनके बचपन की एक झलकी मिलती है।

ब्रजनाथ अपने पुत्र की शिक्षा के सम्बन्ध में बड़े सजग थे। बालक मदनमोहन की बड़ी इच्छा थी कि वह अंग्रेजी पढ़े। पिता ने अपने होनहार बालक को दिन छोटा होने नहीं दिया। परिवार की गरीबी कभी उसकी शिक्षा में बाधक नहीं हुई। माता के हाथ में सोने के कड़े लो थे ही। परिवार अस्त-सन्तुष्ट था। पिता दूध प्यती थे। भर्तृहृदि कहते हैं :

“इषमुदरदरी सुरत्तपुरा, यदि न भवेदमिमान्बचधूमि।”

( यह पत्र बच मद्धा यदी कठिनता से भरता है और वह मनुष्यों के स्वामिमाग के ताड़ने का स्थल । )

परन्तु ब्रजनाथजी का पेट न सो इतना बड़ा था कि वह भर न सके और न उसने उनसे स्वामिमान को छोड़ाही। ब उन भोगों में नहीं थे जिनके सम्बन्ध में महाकवि अकबर इनाहाबादी ने कहा है—

तामीन है मइशों कि इक दामे-बला है।

ऐ कान कि इस अहृद में हम बाच न होते !

मदनमोहन अब स्कूल में भरती हो गये। इलाहाबाद जिमा स्कूल उन समय चौक में पंटापर के पीछे जहाँ अब महापात्रिका का अगीपर है लगता था। उसी स्कूल में दसवीं कक्षा (भाजकल की तीसरी कक्षा) में अंग्रेजी की शिक्षा आरम्भ हुई। समय से जाना पड़ता था। यह एक गमस्या थी। इतने बड़े परिवार का भोजन बनना और फिर गारुजी का भोग सगना। माता यदि रमोई जल्दी भी बना दें पर ब्रजनाथजी को पूजा में बड़ी देर लगती थी। अतः मदनमोहन बाकी रोजी मट्टे के साथ गारु स्कूल जाते थे। शुद्ध उच्चारण और मुन्दर मिलने का उन्हें ब्यसन था। अत्र

वे बनने लप्यापनों बिरोपनर स्तून के हेड मास्टर गारन माह्व  
 व प्रिय हो गये थे ।

य बड़ी लगन से बियाप्ययन करते थे । परन्तु घर में पढ़ने के  
 स्थान की कोई मुबिया न थी । घर छोटा परिवार बड़ा । पढ़ने के  
 नियम भयग शास्त्र स्थान हुआ तो दूर रहा लोगो को ठीक तरह  
 या रहने ही के नियम स्थान पुरा नही पढ़ता था । इस मक के ऊपर  
 गुरुर्षी या शारगुप्त । ऐसी परिस्थिति में पढ़ाई ही गहना असम्भव  
 था । 'सिद्धस्य गतिदिक्मनीया पढ़ना है तो निश्चय विराजना  
 ही पड़ेगा । घर में थोड़ी दूर पर सोहनशान की घणिया के नाम  
 से एक स्थान था । उसमें मीन-आर वर के पेड़ और दा-आम हनी  
 पूर्ण पोर्शियो थीं जिनमें से एक में मदनमोहन के एक महपार्श्व  
 गंगाप्रसाद रहते थे । स्तून में माने व बाण भावनादि से निकल  
 ही मन्त्र्या ममप एक मापन जोर गिनाब मक व बन जाते थे  
 और दूसरे दिन प्रातः ज्ञान पर वन भाते थे । समय मोग यह म  
 गमभ में कि वे दिन रात पढ़ने ही में लग रहते थे । यान गन  
 विपरीत थी । पढ़ने के अन्त्य में परन्तु उसमें अधिन उनका ममप  
 गपरात गन-रू और शररत में भीतता था । गिनार्दी मढ़ना  
 का एक गुण या विस्तार व अगुभा थ । कोई भा लढ़ना इनपर काम  
 नहीं गौड करता था । उनही दिखी में दृष्ट मरीं था पर किमी का  
 धीन तरेरता उह मक न था । बाणिया म रिद्धर जाना या  
 उनका स्वभाव ही में नही था । मोग ऐसी बाणबिबा में कमी-कमी  
 बात बड़ जानी थी और दो दना में मार-रिण की नीरत मा जाती  
 थी । उसमें भी बड़ हननात न था । यान य है कि यत पर प्राह  
 तिक निमम है कि तत्रन्वी पुनर दूगरे की वरम सत्रस्थिता में नही  
 दग्गा । किमी दृष्ट के वारण मग यह नेम स्वाभाविक हाता  
 है ।

पूज्य माशुवीयजी के कागज-पत्रों में उमका स्वयं लिखा हुआ उक्त भेस प्राप्त हुआ है जिससे उनके बचपन की एक झंझी मिलती है।

ब्रजनाथ अपने पुत्र की शिक्षा के सम्बन्ध में बड़े सजग थे। बामक मदनमोहन की बड़ी इच्छा थी कि वह अंग्रेजी पढ़े। पिता ने अपने होनहार बामक का दिम छोटा होने नहीं दिया। परिवार की गरीबी कभी उसकी शिक्षा में बाधक नहीं हुई। माता के हाथ में सोने के कड़े लगे थे ही। परिवार अस्त-सन्तुष्ट था। पिता दब घबती थे। भर्तृहरि कहते हैं

“इयन्तुररररी कुरन्तपुरा यदि न अबेरभिभ्रामर्मपभूमिः”

( यह पत्र बन गया बड़ी कठिनाता से मरता है और वह मनुष्यों के स्वामिमान के सोड़ने का स्पन्न। )

परन्तु ब्रजनाथजी का पेट न तो इतना बड़ा था कि वह मर न सके और न उसने उनके स्वामिमान को सोड़ाही। वे उन सौगों में नहीं थे जिनके सम्बन्ध में महाकवि अकबर दसाहाबादी ने कहा है—

तात्पीय है तद्वर्षे कि इक शमे-बता है।

ऐ वात्र कि इत घट्ट में हन बाप न होते।”

मदनमोहन अब स्कूल में भरती हो गये। इलाहाबाद जिमा स्कूल उद्य समय घोड़ में गंटापर के पीछे जहाँ अब महापालिका का खुशीपर है, लगता था। उसी स्कूल में दसवीं कक्षा (माजकल की तीसरी कक्षा) में अंग्रेजी की शिक्षा आरम्भ हुई। समय से जाना पड़ता था। पत्र एन ममम्या थी। इतने बड़े परिवार के भोजन बनना और फिर गुरुजी का भोजन समान। माता योनि रमो जल्दी भी बना ने पर ब्रजनाथजी को पूजा में बड़ी देर लगती थी। अन्त मदनमोहन धाँसी रोटी मट्टे के साथ गाँवर स्कूल जाते थे। शूद्र उच्चारण और गूस्तर निगने का उन्हें ब्यसन था। अन्त

वे बनने सम्भावकों विशेषकर मूल के हेतु मास्टर गार्डन माहुर  
 के प्रिय हो गये थे ।

बड़ा समय से विचार्यमान करते थे । परन्तु घर में पढ़ने के  
 स्थान की कोई सुविधा न थी । घर छोटा परिवार बड़ा । पढ़ने के  
 लिए भ्रमण शान्त स्थान होता तो दूर रहा मोगा को टीक नरुह  
 से रहते ही के निम्ने स्थान पूरा नहीं पढ़ना था । इस सब के ऊपर  
 घुड़घोषी का शोरशुभ । मी परिस्थिति में पढ़ाई ही मज्जा कमभव  
 था । सिद्धम्य गतिदिवन्तनीय पढ़ना है तो निराश निराशमा  
 ही पड़ेगा । घर में थोड़ी दूर पर साधनवान का बगिया के नाम  
 में एक स्थान था । उसमें तीन-चार बर के पेड़ और दानीय मूँडी  
 फूली पोटखियाँ थीं जिनमें से एक में मदनमोहन के एक मर्यादी  
 गंगाप्रगाह रहते थे । हूँत में आते के बाद भोजनान्ति से निवृत्त  
 ही गन्ध्या समय एक सायन्त और जित्वाय मरर के घर जाते थे  
 और दूसरे दिन प्रातःकाल घर चल आते थे । इसमें गाण यह न  
 गमक में ही के दिन गण पढ़ने ही में सग रहते थे । यान एक  
 विपरीत थी । पढ़ते के अन्त्य से परन्तु उसमें अपि उतना समय  
 गणगत ऐक-पूद और गणरत में बीतता था । गिरादा सढ़ना  
 का एक गुट था जिसके व अणुमा थे । कोर मी सढ़ना अनपर जान  
 नहीं पोट खज्जा था । उनही किमी में द्वेय नयां था पर किमी का  
 और तरेरता उन् मय न था । बालविद्या में सिद्ध जाना तो  
 उत्तर स्वभाव ही में नहीं था । और इसी वाशविवाद में कभी-कभी  
 बान बड जाती थी और दो दना में मारनीय का मोहन आ जाती  
 था । उसमें भी घुड़घोषान मय । यान यह है कि यह एक प्रातः  
 जिन नियम है कि मज्जाकी पुण्य दूसरे की बयन तद्विधिता में नहीं  
 पढ़ता । जिहा द्वेय के कारण नहीं यह बयन स्वामाविद्य होता  
 है ।



भवसूति कहते हैं —

न तेजस्तेजस्वी प्रसूतमररणां प्रतहते  
 न तस्य स्रो जायः प्रकृतिनियतत्वाबहुतकः ।  
 मयूरीरभान्त तपति यदि देवो दिनकर  
 त्रिमाप्नेयोषावा निकृष्ट इव तेजांसि वसति ॥

( तेजस्वी पुरुष किसी दूसरे तेजस्वी पुरुष के तेज को नहीं सहन कर सकता । यह उसका स्वभाव होता है, प्रकृति के नियमों के अनुसार बगावटी नहीं होता । सूर्य जब अपनी सप्त किरणों से संसार में निम्नतर तपता रहता है तो आग्नेय मणि क्या अपना नित होकर तेज उमलने लगती है ? नहीं यह उसका स्वभाव ही है । )

होनी के दिना में उनका ऊपम दायन सायब होता था । उसको विस्तार से सिगने की आवश्यकता नहीं । इतना ही समझ सीजिए कि जितना ऊपम आवश्यक शरारती मयके करते हैं वह सब ये गुट बाँपकर करते थे । बास्नब में इनके स्क्रूम के दिन बड़ी मस्ती के दिन थे । समीत का इन्हें प्रेम था स्वयं सितार बहुत अच्छा बजाते थे । कबिता करने का इन्हें शौक थापख देने का इन्हें घस्वा । उह इ होने पर भी कभी कृपय में पैर नहीं रक्ता । कभी कोई ऐसा घाबरण नहीं किया जिनमें इनके माता पिता का मस्कर मत हो ।

सन् १८७१ में अट्टारह वर्ष की अवस्था में एन्ट्रेस पास कर लिया । स्क्रूम की गिरा समाप्त हुई । गरीबी होते हुए भी ब्रजनाथ जी ने उनका नाम म्यार सुट्टन नामक में लिखा दिया । उस समय वह माउन्ट बैकिंग में ( जिन अब दरमंगा कमिग कहत हैं ) मगता था । १८८१ में उन्होंने वहीं में एक ए० पाम कर लिया और उमी साल उनका विवाह हुआ गया । विवाह की एक बड़ी राबक पहानी है । जिन समय ये स्क्रूम में पड़ रहे थे उनके चापा पण्डित गदापन्नी मिर्जापुर के गवर्नमेंट हार्ड स्क्रूम में मस्कर के

प्रधानाध्यापक थे। मदापरजी संस्कृत साहित्य के प्रचारक विद्वान् थे। हमारे गुरुदेव पण्डित बामरूप्य भट्टजी न उन्हीं से संस्कृत साहित्य की गिना पारी थी। एक बार जब मदनमोहन जब पाम मिर्जापुर गये तो वही पण्डितों की एक ममा हो रही थी। अपने चाचा के साथ मदनमोहन भी उस ममा में गये थे। बहुत देर तक पण्डितों के व्याख्यान सुनते रहे। उनकी भी इच्छा योत्तने की हुई। आज्ञा मगर उठ गई हुए। मदन बाबादृता तो नम थी ही बिना हिचक टनूने उपस्थित बियव पर इटकर व्याख्यान लिया। उनसे मुन्दर शरीर से तो या ही माग आरुप्य थे एक नवयुवक का ठाठ से व्याख्यान दत्त दग् कर सब योग संनमुष्य से ज्ञा गय। उसी सुभा से पण्डित नन्दायम बैठे थे। वे मामर्षीय थे। उनसे सान पुत्रियां थीं। दादा विवाह ही चुदा था। उनने मदनमाहन की प्राकल्पिता से प्रभावित हारर अपनी छोटी पुत्री कुल्लन द्यो का विवाह उनसे करने के लिए निश्चय कर लिया। यात्प्राप्त पक्षी होने के बाद मन् १८८१ में विवाह सम्पन्न हो गया। उसी गाम मदनमोहन न एक \* का पाम दिया था।

कुन्दन देवा से नाम गणमुष याधर था। अर्गी मुन्दर पर हुए शरीर और कुल्लन ( स्वच्छ गुण ) का संग इत्यर शाकुन्तल का रसोद या आ जाता है —

अरर विमगरताग शोभनदित्यमुषारितो बाहू ।

\* मन्मिर सोधनीय धीचनवैशु मप्रद ॥

( अथगोष्ठ नउपलवक से समान नाम है, दानां गय दा शोभन रत्नगामां की भाँति है और पूष से समान सुमान याना दोबन भंग संय से व्याज्य है ।

उनकी वृद्धावस्था की पक्षि न उनकी शरणावस्था से सुसंय का पोदा-शा भाषाम मिनता है ।

अनुद्वय पर पावर बुन्दन देवी और निम्नर छाई जैसे सोने ( बुन्दन ) में सोहाया । ठीक ही सुमा । सागर उगिष्टवा कस्मिन् महानया प्रवेष्ट्यम् ( सागर को छोड़कर और कहीं महानदी प्रवशा कर मन्ती है ! )

श्यामज म पहुँचकर मदनमोहन क जीवन मे एक नया माह लिया । गमा-भोसाइष्टियों म मध्यम भाग मना लोकसेवा एवं अय सावजनिक कार्यों मे तत्परता क माय जुट जाना इत्यादि स पढ़ाई में बाधा पड़ने लगी । परिश्राम यह हुआ कि १८८३ में जब आमरे बी ए० की परीक्षा देने गय तो फेल हो गये । इस असफलता से हताशा म होकर १८८४ में उन्होंने कनकसे मे बी० ए० पास कर लिया । उतबी बड़ी श्रम था कि स संस्कृत में एम० ए० करें । वं सुरप्रसाद मिश्र के वहाँ जाकर उन्होंने पढ़ाई भी आरम्भ कर दी । परन्तु 'मोर मन कुछ और है, बिधिना क कुछ और गरीबी परिवार का पिढ नहीं छोड़ती थी । उपर विवाह भी हो गया । घोड़ी-सी आमदनी म घोर यह भी आवासी कृति प्रजनापजी कहीं तक करें । माता का पढ़ा कहीं तक लाया साब ? पूरा परिवार मदनमोहन का मुँह जोहता था कि क्या यह पढ़ना मन्द करें और मौनरी कर गृहस्थी का भाग बटवें । मातृबीयजी महाराज उगी पत्र म त्रिमया में ऊपर ग्लमग क चुरा है लिखते हैं ।

अप मे बी० ए० पास हुआ घर में गरीबी बहुत थी । घर के प्राणियों का अन्न-भार का मा कनग था ।

मासूरी मा घर था । घर में गाय थी मा अपने हाथ स उग्रको मारी मसारी थी और उग्रका गाबर उठाती थी । वी आधा वेर गाबर गुम्डो कर सती था और पटी हुई घोतियाँ खीकर गढ़ना करती थी । मैने घट्टन मपों बाइ एक दिन उमम पूछा—सुमने क्या गाय स रान पड़िन क कण बी शिकायत नहीं बी ?

रती मे कदा— गिगासुण करने क्या करती ? व कटी स रती ?

पर का बोना-फोना के जितना जानती थीं उतना ही मैं  
हूँ। मेरा दुःख सुनकर वे रो दतीं और क्या करतीं

### वासिज का जीवन

वासिज में इनका जीवन घड़े मीठ का था। मन लगाकर  
पढ़ने लगे थे ही। माप-माप और मायूम नहीं कितने काम नापे हुए  
थे। उन्हीं जिनो इन्होंने ज्योतिषम नाम का एक प्रहसन लिखा  
था। उसमें उन्होंने दो कवितायें लिखी थीं। एक में भक्त-सिंह के  
रूप में अपना चित्रण किया था और दूसरे में उन्होंने उस समय के  
पढ़े-लिखे ज्योतिषमनों का गारा गाकर उनका मर्यादा उड़ाया  
था। दोनों ही कवितायें नीचे लिखी हैं।

### भक्त-सिंह

गरे शरी के हैं गजरे बड़े रगोन कुपट्टा लन ।  
मता क्या पुदिये पोनी तो हारे ते मंगाते हैं ॥  
कभी हम बारनिग पहिने, कभी बंज्राह का जोड़ा ।  
हमेया नाम बग्गा है वे भक्त-सिंह माने हैं ॥  
न ज्यो से हमें सेना न मापो का हमें देना ।  
कर वंहा जो गान है व बुनिपी को गिनाते हैं ॥  
मनो शिष्टो बना बार्हे न बार्हे हम तनित्तारी ।  
बड़े घतमरु रतने हैं पुर्गे दिन को बिनारी हैं ॥  
न देत हम तरु उमरो जो हमसे मरु म ह सेरे ।  
जो दिन से हमने बिनाते हैं मुर उमरो देत बाते हैं ॥  
मनो रानी चिरर हमरो नि गार्जे तीर पी लकड़ी ।  
बिने तो हमसे लन जाहे मनो मुरी जग्ने हैं ॥  
मनो पारी जो मुग बाणे तो बन्दे के पूरुषो वे ।  
पुत्रे बहुरचना से तो पती हम तो गिनाते हैं ॥

हमें मत धुलना पारो बसे हम पत्त फलमोहन  
हुई है बेर जाले हैं तुम्हारा धुम मनाते हैं ॥

### जेंटिसमैन की दशा

धुले पूरप पुरा जेंटिसमैन कहलाता है हम ।  
बोस्ट से बाबू दूमी मिस्टर कहा जाता है हम ॥  
मगा जाला पूजा अप-तप छोड़ो मे पातक सब ।  
पूरने में मुंह का विरजापर में नित जला है हम ॥  
भांग भाजा चरल बधु घर में छिप-छिप बीते मे ।  
घब तो बेलके हमेशा चार्जिन' इरजाता है हम ॥  
हिन्दुओं का खाना पीना हमको कुछ जाता नहीं ।  
बोफ बमके से बटे होटल में जा पाता है हम ॥  
बाबू भी चाचा कहना लाइक हम करता नहीं ।  
पाया कहना अपने बच्चों को भी निकसाता है हम ॥  
कोट घोर फलान फुले इट एक सिर पर बरे ।  
ईबनिंग में बाट करने पाक को जाता है हम ॥

प्रारम्भ में मायवीय जी मन्द उपनाम से हास्य की बर्हिता  
लिगा करने थे । इस बर्हिताओं ग उतरी मन्नी तो पूटी ही पढ़ती  
है तन्वानीत जेंटिसमनों क प्रति घुणा भी यथेच्छ मात्रा मं टप  
कर्ती है ।

प्रयाग में उन दिना एव भाय माणक मण्डली थी । प्रयाग क  
प्रायः सभी प्रसूत नागरिक उमर सुवम्य थे । उन गण्डली ने एव  
घार यही कार्नीणाम कृत् अभिमान शाकुन्तल माणक लेना । इस  
माणक का अकथी तरङ्ग लेव मना बोई हंगीगेव नहीं था विमोचक  
गज्जल का का पाण गीक तरङ्ग में गिमा देना बोई माणुपी बात न  
थी जब शर्म काविगत का ही गण्डु का नि बीन जाने उना  
दनाग एव माणक का अमिनत्र दर्जात को गमन आने या न घाव ।

इसलिए उन्होंने अभिनय के आरम्भ में सूत्रधार के मुख से यह वक्तवा भी दिया —

“आपरितोषादिदुषो न साधु मये प्रयोषितात्मम् ।  
बलवदपि मिलितानामात्मव्यग्रतपो वनः ॥”

( जब तक विद्वान् लोग मेरे कौराव से मनुष्य न हो जायें तब तक मैं नाटक की कल्पना नहीं कर सकता । क्योंकि मैं इस काम को पूरा उतार खूँगा ऐसी बलवती धारणा पर भी गिश्तियों के सामने स्वयं अपने बिल को विदपाम नहीं होता । )

अब कानिनाम का यह हाल था तो कार्य नाटक मण्डली की कौन गिनती ! मानक भर में शकुन्तला का पार्ट बड़े यशस्व का हुआ । ऐसा लगता था जम सागान् मूर्तिमती शकुन्तला मञ्च पर उतर आयी हो । आप जानते हैं किन्तु शकुन्तला का पार्ट किया था ? वह था मन्त्रमोहन ।

एक बार म्योर मैट्रम कायेज इनाहाबा में ‘मपेगट आफ वेनिम अंप्रेजी नाटक गेता गया । मन्त्रमाहन ने पोरिया’ का पार्ट किया । तिन लोगों ने उस देगा उनका कहना है कि मन्त्रमोहन ने कतना कष्टदा पार्ट किया कि यदि कोई अंप्रेज महिला भी उसे करती तो उनसे कष्टदा नहीं कर सकते थी । जिस समय पोरिया ने अपनी बहम में क्या की दुर्गाई दी तो घोवाघों की धानें इकट्ठा आई । लोगों के हृदय में बगला उतरा कर उन्हें कजा देना यह मातर्वीपजी का हिम्मा था । इस प्रसंग में एक बात मुझे कहना पार आ गयी । प्रथम जर्मन युद्ध का जमाना था । जर्मनी बड़ा पला आ रहा था । अफ्रेजा के हाथ-हाथ घूम गये थे । यह घटी जमाना था । तिसके मन्वन्ध में आन्तर द्वागारागी ने किया था—

हमने तुम को लतालय बनवाए

जिनको हर रोड बंदे करने हैं ।

हर तरह है विघ्नत वर्मन की

बहुत इनके कि बढ़ते जाते हैं।

प्रम पुरो की तबरो से मनीहा यह निकारता है।

कनह सरकार की होनी है कय्या उनका बढ़ता है ॥

उस सदाई में भारतीय मेगाओं न अद्वैतों की मदद करने का निदय कर लिया था। मेपोहाग में अवर डे क नाम स एक गमा हुई थी। सर हुनरी रिषहू स इसाहाबाद हाईकोर्ट के प्रधान म्यायापीरा सभापति थे। महामना मामवीयजी प्रथम बच्चा थे। मैं उस समय समा स उपस्थित था। जब मामवीयजी महाराज युद्ध क मयाव्य एवं बागखिज परिणामा का धारप्रबाह बखन करने लगे तो धोनाआ की बांग आद्र हा गयीं। सर हुनरी बगावर आने आंमू समास स पोंठने आस थे। मदनमोहन के बासिज के जीवन-गुण क बीग स उक्त घटना क कहने का यह ठान्य है कि 'वपान ही ग उमरी वागी में कनी शक्ति थी कि थोनाआ को वह शक्ति नर ली थी।

गोमाल स जब मदनमोहन कायत्र मे पड रहे थे उस समय 'बती मरामहोताध्याय पालिन आन्विराम मद्राबाय जी संसूत के प्रधानाध्यापक थे। व ती मदनमोहन क गुणेश्वर। मद्राकार्य मरोच एक कसंध्यनिष्ठ धमलि और महान् आत्मा के व्यक्ति थे। लगभग बीबीग वरं हूण मवन् १९१२ में महामना मामवीय से अरा गुणेश्वरी एव टोरीमी जीवनी निर्मा थी। उस जीवनी में घटाघना जी विगत हैं :-

मध्य प्रेश में गागर क विगतय में मन् १९०२ ई० क प्राग्म में न मरामहोताध्याय के पद पर नियुक्त हुए। उनी समय प्रयाग स म्योर मद्रक बाउत्र क नाम स सरकारी कालज स्थापित किया गया। कार्मीव सरकारी संसूत पासत्र में भाग

अंग्रेजी भाषा के अभाव में हीकर करीब साईं इरम तर रहे। यह पद उन दिनों अंग्रेजों के लिए मूर्खता था परन्तु परिणतरी ने कुछ दिना के लिए इमता मुनोभित किया था। भाष ही ऐस भारतीय विद्वान् थे जो इम पद पर पहिल-इरम नियुक्त किए गये थे। पीछे जब टीपो मात्र जो अर्जन थे उन पद के लिए स्थायी रूप से नियुक्त हुए भाष तब के प्रयाग कामज के अने पुगने पद पर लोट आय।

बड़े ही स्वायत्तिक ध और किमी के साथ तनिर भी पदा पात मर्ते करते थे। प्रयोजन पढ़ने पर बड़े स्पष्ट वक्ष्य थे। एम पाग्रा कमी अभी अरमर लोग उनसे बिड जान थे ता भी उनकी स्वाय-परायणता के कारण उनका मता सम्मान करने थे।

हिन्दी के भी वे बड़े ही प्रेमी थे और हिन्दी साहित्य की उपरति के लिए महा उत्साह लिगत थे। उन समय हिन्दी भाषा में कोई अच्छा साहित्य पत्रिका नहीं थी। एम अभाव को दूर करने के लिए उन्होंने बहुत प्रयत्न की थी और जब प्रयाग के हिन्दु प्रेम ने मा स्त्री नाम की पत्रिका निकाली तब उन्होंने बड़ा मन्तोप हुआ। वे भारतीय नागरिक-प्रशासिका म्मा के सम्बन्ध और सुभेच्छु थे।

य समय प्रान्ता के राजा का समान भाव से आर्य करण थे और जो छात्र एम प्रान्ता में पढ़ने के लिए आत थे उनसे तो पाग भी अति कृपा करत थे। गवर्नर जीवर होने के कारण ये एम अति कामों में योगदान करने पर मुरते थे तथाकि राजा को समर्पित उपाय बरकर देत रहत थे और एम के काना में ममान भक्ति भी मगत थे वे एम के बनी हुई समुदाय के अन्तर्गत के विषय में बड़े बक्ष्य थे प्रयाग में हिन्दू समाज एकी के उपाय और प्रोत्साहन के स्थापित हुए थे। अंग्रेजी राज्य के समय में हिन्दू समाज के संरक्षण का यह पहला प्रयत्न था। एम अंग्रेजी के उपाय और प्रोत्साहन में ही उनका सम्बन्ध हो गया था। मे



उस समय म्योग सेंट्रल कमेज का छात्र था। परिदृष्टिजी मुझ पर बहुत स्नेह रखते थे। उनके सम्पर्क से मुझमें देश भक्ति का भाव बढ़ होता गया।

हिन्दू लड़कों का स्वयंसेवक धारावस्था से ही प्रेम बना रहे और वे दूसरों के बहकाने से बचकर इस अभिप्राय से जब १८६८ ई० में श्रीमती एनीबेमेंट बाबू गोविन्ददास डाक्टर मगवानदास भाबू उपेन्द्रनाथ वसु तथा अन्य सज्जनों ने सेंट्रल हिन्दू कमेज सोसायटी का परिदृष्टिजी ने—उसके एक बड़े समर्थक के रूप में—उत्साहपूर्वक उसमें सहयोग किया था फिर जब अरशी-हिन्दू विद्वविद्यालय स्थापित करने की खर्चा उठी तब फिर परिदृष्टिजी का उत्साह दुना हो गया। यद्यपि इस समय उनकी अवस्था अपिक हो गयी थी तथापि उस कार्य में उन्होंने बहुत प्रोत्साहन दिया। विद्वविद्यालय के स्थापित हो जाने पर उसमें प्रो-वाइस-चांसलर का उच्च पद ग्रहण कर वे फिर कारीर में और सन् १९११ से १९१८ ई० तक बड़े परिश्रम और उत्साह से उस पद का काम करते रहे। एक महीने आराम विद्वविद्यालय की संस्थापना और उसका संगठन करने के लिए वृद्धावस्था में परिदृष्टिजी को बहुत परिश्रम करना पड़ा। इससे यह परिणाम हुआ कि उनका नेत्रों की ज्योति जाती रही और गरीर भी दृष्ट गया। अतएव ७१ वर्ष की अवस्था में वे अपने प्रयाग के मकान में श्वाभिए। और तीन वर्ष बाद उनका गरीर भी दृष्ट गया। १८ अक्टूबर सन् १९२१ ई० ( कार्तिक शुक्ल द्वितीया संवत् १९७८ ) को अरणोदय के समय वे उसी भवन में परब्रह्म में लीन हो गए।

परिदृष्टिजी काव्यारम्भ से ही बलिष्ठ तन्त्रम्बी और उच्च शील थे। धारावस्था से प्रोफेसर तथा बराबर व्यापार करते रहे। ... गृहस्थी में रहकर भी वे वृद्धावस्था का पावन करते थे। उनके शिष्यगण ने उनसे काम के लिये करते थे। वे सत्यवादी और

स्पष्ट ब्रह्म थे। पुमा-पिराकर बानें करना नहीं जानत थे।  
 वे परमार्थ-आधर में निश्चयपूर्वक लगे रहत थे। अपने जीवन की  
 निश्चयबर्षा में वे यह बात निश्चयमा गए हैं कि अपनी गृहस्था की काम  
 और पारमार्थिक काम इन सभी की तत्पश्चात् ध्यान रखकर और  
 इनका सामंजस्य कर मनुष्य का कर्म तत्पश्चात् कमशील होना चाहिए।  
 मनुष्य के एक गृहस्थ योगी थे।

पण्डितजी के शरीर में अरु सुख बन रहा अरु सुख के निश्चय  
 साधनका विवेकी तट को जान थे। मूर्ख की उपासना भी कियोपत्त  
 न करत थे। रात्रि में तीन बजे उठकर पूजन आदि करके सुषों  
 दय के समय मूय के अष्टोत्तर शतनाम का पाठ कर उमरो  
 गायत्री प्रणाम करत थे।

पण्डितजी का वासस्थान भी बढ़ा उत्तम था। उनका मजान  
 प्रयाग के वागागंज मुहूर्त्त में गंगातट पर प्राचीन दगा-रमेपजी  
 में बना हुआ है। उस उम्हने १८७३ ई० में गीता था। जिस समय  
 यहाँ पण्डिते कोई मजान नहीं था। उस समय मोरड़ी बनाकर एक  
 बड़े बिनान् मरुतुत्त रहत थे। उनका नाम शिवशर्मा था। वे जान  
 ब्रह्मचारी विष्णु महारमा नपाए देगे थे। उन्हीं के नाम पर  
 पण्डितजी ने अपने घर में एक मंथन पाठशाळा स्थापित करायी  
 है जिसका प्रथम पाठा द्वि-वि-विद्यालय कहता है। वे हिन्दुओं  
 की प्राचीन गति और धर्म के प्राग-व्यक्त शास्त्रों का मुद्दा  
 अथवा धर्म मयमने थे। उस बात में उसका अन्तर होने में एक  
 मन्त्रि हो जाने का भी उद्देश्य ही काशीर पर। अन्तर मंथन  
 विद्या द्वारा उच्चिष्ठ आनी स्वात्तरेणम सब गति इन्हींके  
 पोषण के लिए अर्पित कर गा है। वे काशी-वि-विद्यालय  
 के साथ म सुर्गात है और बने के प्रथम में उस पत्र के अन्तर्गत  
 द्वारा अपने गंगातट के मरुत में पाठशाळा के बनाने की व्यवस्था

व अपनी मृत्यु के पहिले ही कर गए हैं। ०

माता ! फिर वं० वेणीमाधव मट्टाचार्य और वं० आदित्यराम मट्टाचार्य के समान गृहस्थ तपस्वी त्यागी भगवत्प्रेम देशभक्त हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति के प्रेमी धर्म में हड़ पुरुषों को जन्म दो।

उन महात्माओं का भक्त और स्नेहभाजन  
मदनमोहन मासनीय

वं० आदित्यरामजी व सम्बन्ध में कुछ विस्तार से लिखने का यह तात्पर्य है कि ऐसे पवित्रात्मा अध्यापक के संसृष्ट में आने से बालक मदन का सम्पूर्ण जीवन शुद्धतर हो गया। यदि मट्टाचार्य महोदय सरिले अध्यापक एवं उपकृष्टपति हमारे विश्वविद्यालयों में हों तो उनमें जो छात्र-कर्म समुचित बातावरण हो रहा है वह न होने पाव।

मदनमोहन आदित्यरामजी स संसृष्ट पढते थे। यों तो उस कक्षा में बालक से संसृष्ट के विद्यार्थी थे और पण्डितजी यही लगन स सचको समान रूप स पढाते थे परन्तु छात्र मदनमोहन उनसे संसृष्ट पढ़कर गिर उठा। पण्डितजी के पढ़ाने की शैली बड़ी मन मोहिनी थी। के गोरों को उहीं छम्पों की ध्वनि में गाकर पढाते थे।

मदनमोहन मणि थे उनसे पढ़कर भवभया उठे। मन्त्रि मन्त्रेणु हि पनातक हौनहा का पढाता सही करत है। आदित्य

---

० विश्वविद्यालय से उगके महात्मन क लिए एक ग्यास समिति बनाई है। ( सारा उग समिति का म्यामथा० है और आदित्यराम पाठशाळा का मंत्री और प्रबन्धक है ) पण्डितजी के उद्येष्ठ छात्र वं० वेणीमाधवजी भी एक बड़े परित्रयान् पुरत थे। बाल्यनात ही से ये पढ़े गानारी और मण्डित हिन्दू थे।

मर्जी उन्हें पुत्र के समान मानने लगे। मदनमोहन को महामना  
 नाने में उनका बहुत बड़ा हाथ था। एक प्रकार से पण्डितजी  
 तक पय-प्रदराज थे। जीवम की लोच-घात्रा बटिल नहीं होती।  
 प्र-प्रदराज कुर्मम होता है।

आन्ध्रियरामजी के लिए मासवीय जी के हृदय में व्यथाम धडा  
 थी। मासवीयजी उनका बसल आर्य ही नहीं करत थे उन्हें दब  
 व्य समभत थे। एक दिन की बात है। नित्यनियम के अनुसार  
 • आन्ध्रियरामजी प्राण-काम दशाद्वयेय के सामने गगात् स  
 ीत रहे थे। उगी समय मासवीय जी महाराज तट की ओर जा  
 रहे थे। दोनों की उग म्बध्द वामुनयम मैगल में भेट हो गयी।  
 मासवीयजी महाराज ने रेत पर सटकर आदित्यगमजी को साष्टांग  
 प्रणाम किया। दार भर के लिए इस धिय को अपने मानसपटम  
 र धारिण। मन्दाकिनी की पवित्र रत पर मूर्ध-ममप्रभ तपस्वी  
 आदित्यगमजी पड़े हैं सामने पगड़ी दुपट्टा इत्यादि सम्पूरा वस्त्र  
 हिने मासवीयजी बाधू पर सटकर पण्डितजी के धरणा में  
 साष्टांग प्रणाम कर रहे हैं और धाई दूर पर वं० श्रीनारायण  
 मूर्धुणी ( इस समय मरम्बती के सम्पादन ) शरिदिवाकरयो  
 कट्ट और सूर्य के म्बुव गम्भिरत के दाय का ल्य रहे हैं। यह  
 म्बुवैसीजी का मोमाय था। उस समय उग बाधू के म्गल की  
 (मा) शामा हर्द पस —

उदयनि विनमोर्धरि करुणा-  
 बहिरुधी ह्यपादि धानि धानम् ।  
 धानि विरिरयं विगम्भि दा  
 ह्यपरिधातिवाराएगहोनाम् ॥

माय — शिगुरानवप ।

{ एर ओर आदित्य उग्य हा रहे है (आन्ध्रियरामजी ग है)

दूसरी ओर चन्द्रदेव अस्त हो रहे हैं (चन्द्रमा के समान शुद्ध माल वीयजी रेत पर मटे हैं) इस प्रकार वह रीवसक पवठ (बाधू का मदान) उम श्वेस हापी के समान शोभायमान हुआ जिसके दोनों ओर लमकसे घंटे सञ्क रहे हैं।

मदनमोहन का कामिज का जीवन बड़ा व्यस्त था। पढ़ने सिगने का जो मार था वह सो था ही समा सोगाइटियों का इतना भार उन्होंने अपने सिर पर न मिया था कि उससे न बेखस उनके अध्ययन में बाधा पड़ती थी बलिक स्वास्थ्य पर भी। आखिर मेहनत की बार्ई-हव हाठी है मदनमोहन ने इसकी लतिक भी परवाह नहीं की। सन् १८८० में पण्डित आदित्यगम मद्रासाय की प्रेरणा से प्रयाग में हिन्दू समाज की स्थापना हुई। मदनमोहन उसका प्रमुक्त कार्यकर्ताओं में थे। इनका कार्य जोरों से चल ही रहा था कि सन् १८८४ में मदनमोहन ने मध्य हिन्दू समाज नाम की एक समा स्थापित की। यह हिन्दू समाज से तगडी थी। दशाहरे के अवसर पर ममुना किनारे महाराज बनारस की विशाल कोठी में बड़ी धूम धाम से मध्य हिन्दू समाज का उत्सव हुआ। प मदीनारायण ब्यास ( मगक के पितामह ) के प्रस्ताव करने पर बरीब क राजा परमवण्ड भी महावीरप्रसादनागयणमिहत्री ने अध्ययन का आसन ग्रहण किया। उही दिना कामावीर के राजा स्वर्गीय राजा रामपालसिंह मये-नय बियायत में सोये थे। ब इस जलसे में परा-नेरा रहत थे और समारति का काम में भीष भीष में उटपर बापा दावते थे। कोई भी ब्यागमान दे रहा हो क उडकर स्वर्ग बोनन मगत थे। राजा रामपालसिंह बड़े प्रभावशाली और रोबीन आदर्मी थे। यर्षा ग प्रसार क उनका व्यवहार से सभी अमनुष्ट क स्याति किर्मी की उनका कृप्य करने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। आखिर मदनमोहन म ग रहा गया। अब जब राजा माहब इस प्रकार बापा दावते तो मदनमोहन सुरस्त उत्तर उनका नाम में

कृष कर्तृते मय जाते थे । व उन्हें बोलने से रोक्ते थे । वास्तु यह है कि मदनमोहन ठाठ-बाट और राजा क नाम से दहननेवाले ठी थे मही । 'ठाकुर के शर्मा में मदनमोहन का स्वभाव था

बैर प्रीत करिबे की मय में न रास लक

राजा राव वैदिक न दाती पाट-बा डरी ।

सापने उमंग के निवाहिये की चाह दिग्हें

एक सों विमान लिग्हें बाप और बाकरी ।

'ठाकुर' कहन में विचार कई बार देख्यो

यही मरदानन की टेक बाप पाकरी ।

मही तीन पही बाल दाड़ी तीन दाड़ि कई

करी तीन करी बास ना करी सो ना कयो ॥

राजा साहब को इस प्रकार उन्हें रोक्ने का साहस करना सपना था पर कर ही क्या सकन थे । गलती उन्हीं की थी । कबप मुसमुस देते थे ।

अपिपशान बड़े ठाठ-बाट में समाप्त हुआ । उन दिनों राजा साहब 'हिन्दुस्तान नाम का एक पत्र निकालते थे । उसमें उन्होंने अपिपशान की प्रशंसा तो की पर यह भी लिखा कि— 'उसमें दा एक सौडे एक कीर थे कि बड़े बड़े राजा-रजसों और बाबूकों (बकशामा) को ध्यायान देने समय उनका नाम में समाह देने की श्रुति करते थे ।'

राजा साहब का मदनमानन की भार नगित था यह स्पष्ट है । पणु राजा रामपाल सिंह बड़े गुणकारी थे । पाठे ही समय बाद उन्होंने मदनमोहन का अपने पत्र 'हिन्दुस्तान का समाचार बना लिया । इसी वर्षी, प्रसंग आने पर कहा गा ।

एक प्रचारक १८६१ प्रतिवर्ष मध्य हिन्दू समाज के अधिवेशन होने रहे । मध्य हिन्दू समाज के साप-साप उन्हीं काचित्त में एक

सापियों ही के कारण य संसार में बदनाम हो गयी और उनमें बहुत से दुर्गुण आ गये । याणमदृष्ट कहते हैं —

“इयं हि सुमदृशः क्लमगदसोऽप्यल्लपनविभ्रमभ्रमरीमदमी क्षीरसागरात् पारिजातपल्लवेभ्यो गगम् इन्दुराकसावेभ्रन्तवक्रताम् उच्चन्यवसदचक्षुपता बालकूटान्मोहनराशिः मदिरामा मद श्रीस्तु ममणेरतिनप्युर्यम् इत्यशानि महवातपरिचयवशाद्विरहविनोदधि ह्वानि गृहीत्वेवोदगता ।

कादम्बरी — दुष्नासोपदेश

भाषार्थ — ( उज्जयिनी व महाराज तारापीठ के महामात्य दुष्नाम युवराज चन्द्रापीठ को राज्याभिषेक के समय उपदेश पठते हैं । यह विस्तृत उपदेश संस्कृतसाहित्य-भागर का अनुपम रत्न है ) दुष्नाम कहते हैं — तनिक इस सभ्यी की ओर ध्यान दीजिए । यह सभ्यी बड़े-बड़े योद्धाओं के रणभूमि रुग्णी व मत्त-जन की भ्रमरी है । जब यह मायके ( सागर ) में थी तो इसका माय बहुत बुरे मोगों का था । उन सबकी बुराई अपने में लेकर यह संसार में आयी है । पारिजात वृक्ष से सौंदर्य अर्धचन्द्र से घोर कृटिमता उच्चथवा घोड़े से चंचलता बालकूट महाविष से व्यामोह मदिरा से ठम लता और कौस्तुभमणि से भयंकर बटोरता इन सब से अपने सापियों का परिचय देती हुई उन्हें अपने माय लेकर यह सभ्यी समुद्र से निकली है । इस सभ्यी से महा सजग रहना । ”

मदनमोहन बात्पापस्था से ही सभ्यी के डंके नहीं गये । सदा अपने मोगों व मभी की ओर उनके सहयोग एवं अपने पोषण से बड़े बड़े काम कर डाले ।

एक बार जब मदनमोहन कानिज में पढ़ने थे साह्य रिपन प्रवाण से आये । साह्य रिपन एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ थे । साह्य के लिच्छु थे । उनके पिता भारतीयों के हृदय में आदर का और दृष्टी का रण अक्षेत्र उनसे चिह्नित थे । जब मदनमोहन का पता पला

नि साईं गिन प्रमाण घा रहूँ तौ उहौने पूम-याम म उनहे स्वागत का आवाहन किया। कातित्र क तत्पार्थीन प्रिम्पिरत्त हैरिमन सायेब यदपि बई मन धे लयादि शीली मस्ती नहौं गिल सस्त घ। उहौने स्पष्ट आजा दे दी कि स्वागत म होगा। परन्तु मदनमोहन तो स्वागत करने की ठान चुक थे। फिर अनिग्रयिता गिन मानुषं द्विजवर राद्दु हि क शब्दन मानवता ब गुरों स। समग्र तस द्विजर्षे ष को कौन राह सकता या ? घगम दिन बड़ी पूम-याम स जुगुस निवन्ता। साइ गिन का स्वागत किया गया और उरू मानवन भा दिया गया। बिरोधी साग स्तम्भित रह गय और तब हैरिमन मात्र बौ पना बना रि।

दीर्घावपुत्रस्य तदा विधेर  
 ब्रह्मवापारब्धं गुराणाम् ॥

( शक्ति क शीघ्र हाने पर तब उहौने जाना कि मनुष्यों में गुरों का उत्पन्न उनक स्पष्टिध पर आपागित होता है। )



## अध्यापक मालवीयजी

ताम् विद्यामवद्या बुद्धमस्तु महिमा रूपसम्पत्ति शीर्ष  
 स्वत्वाने सर्वशोभा परमुलकवने बाह्यदुस्तावद्व ।  
 पावन पाप्मदुस्तानि स्वबुद्धपुत्रतिमि प्रीयिताप्रयवववाह  
 हे बाबा नास्ति तर्ज न च नवानमपीत्यादि बाबा प्रचारः ॥

( विद्या गुणों के समूह की महिमा रूपसम्पत्ति और शीर्ष  
 अपने घर में पूछ, दूसरे की प्रशंसा में पुन धांपना यह सब तभी  
 एक सम्बन्ध है जब तक रमोई सु आबुस अपने घर की मित्रियाँ  
 पुत्र की भेजकर यह नहान कहवातीं कि बाबा ! घर में न तो तेज है  
 न निमरू रमोई बस बने ? )

कृष्ण दूरी प्रचार का वातावरण परिष्कृत ध्वजनायकी ( मदन  
 मोहन क विता ) की गृहस्थी का था । सम्पूर्ण परिवार चातक के  
 समान स्याती का बूट की प्रणाला करता था । माता पिता यहाँ  
 एक कि पट्टी बोटी को सीकर पहिनने वाली मदन मोहन की सद्  
 धर्मिणी भी गगना प्रामरा मगाय दिन गिन रही थी कि कब  
 मदनमोहन का विद्याभ्ययन समाप्त हो और सब य चार पहा घर  
 में लावे ता घर का बोझ हलान हो । परन्तु मदनमोहन ता भीर  
 ही गुन में थे । वे स्वयं निगने हैं :—

श्री० ए० पाम होने क बाद मरी दृष्टा हुई कि बाबा और  
 पिता के समान मे भी क्या वहु और धम का प्रचार कर । किन्तु  
 घर की गरीबी स सब प्राणियों को दुग हो रहा था । उहाँ जिना  
 उनी गवर्नमन् ग्रूप में त्रियम मेन पदा था एक अध्यापक की  
 जगद गारी हुई । मरे पहले भाई पंडित जयगोविन्दजी उद्यम हुए

पंडित थे। उन्होंने मुझसे कहा कि इस जगह के लिए कोशिश करा। मेरी इच्छा धर्म-प्रचार में जीवन लगा देने की थी। मैंने नहीं कहा। उन्होंने माँ से कहा।

माँ मुझसे कहने के लिए आई। मैंने माँ की ओर दगा। उनकी बातें डबडबा जाती थीं। ये बातें मेरी आँसुओं में झरकर पसी हैं। मेरी सब स्थितियों में माँ का धोखा म द्रव्य पयो और मैंने कबिन्तु कहा—माँ तुम कृप्य न बहो मैं नोचनी कर सुगा। जगह पारीम रूपम महीने की थी। मैंने इसा वेतन पर रूपा में अध्यापक की नोचनी कर ली। दो महीने बाद मरा वेतन ६० रुपया हो गया।

सन् १८८५ म २४ वर्ष की अवस्था में मन्मनोत्रन अध्यापक हा पय और माय ही साय पंडित मन्मनोत्रन मानवीय कहनाते लगे। अध्यापकों म जो गुण होने चाहिए उनही उनमें प्रसुरता थी। छोड़े ही दिनों में बिगारों इनम हियमित्त गये। बिहोंने इनम पडा है उनना कहना है कि ऐसा योग्य अध्यापक देगने में मनें आया। प्रयाग के प्रमुख प्राणरिष स्वर्गीय डा० सर्तीराचन्द्र बनर्जी पबनमेंट हार्ड्यूम में मही क छात्र थे। हार्ड्यूम में जब बनर्जी मन्मोत्रन बकापन करते थे तो लोग उनकी विद्वता का मात्र मानते थे। उनमें मतमनसाह्वन कृष्णभूषण भरी थी। मघना के प्रतीक थ। तेय मुन्मनाय और सुयोग्य शिष्य पर मानवीयकी को अधि मा पा था।

एक बार मूत्र में परीक्षा क समय एक बमरे में मायवीय जी गाद थे। एक विद्वार्थी नरम कर रखा था। मातवीयत्रा ने देग विदा और सुरन्त उम बमरे के बाहर विदाय लिया। बह पदरा पय बहवदाता एपा मना कि बस क रूना मुमम लेगे। वह शत्रु बामाग पा और भानी गृह क लिए प्रन्ताय था। मातवीयकी मूत्र पदर ही आया जाया करत थ। एक मदन की मन्ता क मा सागां ने इनन पदर आने जाने क लिए मना लिया। बस कि

लड़का इतना बदमशा है कि बिना कोई बारदात किये न मानेगा । पर मानवीयजी इतने धामे तो ये नहीं । वोसे 'क्या हमारे हाथ पाँव नहीं हैं ? अगर हम पर बार करेगा तो क्या हम उसे छोड़ देंगे ? और बारबार पैदम आते आते रहें । उस लड़के की हिम्मत न पड़ी कि बहू बृद्ध करता । और मानवीयजी ने व्यक्तिस्व का उस पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि एक दिन वह उनके पैरों पड़ा और उसने माफ़ी माँगी !

मानवीयजी की वेद भूषा एक खास तौर की पगड़ी धगा दुपट्टा और पायजामा सभी मफेद कपड़े न । यही बेरा सूपा उनके छात्रावासा में था और यही थी जब वे स्कूल में घब्यापक हुए । बच्चा मफेद मोजा और चद गया । यही पहिमाबा उनका अन्त तक कायम रहा । एक मोठी छड़ी वे सदा हाथ में रखते थे । काम कपड़े न उन्हें बड़ी चिढ़ थी । जीवन-पर्यन्त उन्होंने काला कपड़ा नहीं पहना । हार्डमोट में बवालत करने के समय भी काला गीत वे कभी नहीं पहिनेते थे । जीवन में केवल एक बार जी ममोसकर उन्हें एक प्रतिकूल करना पड़ा । महाराणी विक्टोरिया के तिभन के भवमर पर मगर के बड़े गिरजे में गविम हुई थी । मानवीयजी का उसमें सम्मिन्त हाना अनिवाय था । परन्तु उसमें बिना काला कपड़ा पहिने कोई सम्मिन्त नहीं हो सकता था । मानवीयजी के लिए यह एक बड़ी गमस्था थी । उसका निवास उन्होंने इस प्रकार निवास । उस दिन न मिया उन्होंने कमाना गीत (सबादा) बन पाया । उस एक मृष्य मकर उनका साथ गिरजापर गया । गिरजा पर के हाथ में गुप्तने दर उन्होंने उसे घाट सिना और वहाँ का कार्यक्रम समाप्त होने पर गयेके पहिम उनारकर उस मृष्य को दे लिया तब बंद की मीन मी । पर पर आरर करने मग कि जय के उग्र काय गीत का ओडे गिरजापर में बठे थे उन्हें बड़ा मानमिन्त करता हो रहा था । अपने जीवन में वह पहिनी और अन्तिम बार

या जब किसी कामे करदे वा उन्होंने स्वयं किया हो। उन्हें धरम देवत बन्ध ही पसंद था।

मेने अभी मुना है कि आगामी महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय शताब्दी के लिये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में उनकी बडी ( LifeSize ) मूर्ति की स्थापना या आयोजन हो रहा है। मुझे विश्वस्त मूत्र स यह भी पता था है कि शताब्दी कमिटी ने यह निर्णय किया है कि यह मूर्ति ब्राँझ (Bronze) की होगी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में मालवीयजी महापुरुष की कानी मूर्ति की कल्पना कर ही मैं ठा काँ उठा। मालवीयजी के भावों का इससे बड़ा अनादर मेरी समझ में नहीं हो सकता। मालवीयजी की आत्मा को इससे रिक्तता बड़ा आघात पहुँचिगा यह समझा जा सकता है। संवाचकों को चाहिये कि वे इतनी मारी मूत्र न करे जो जिससे मालवीयजी के मर्यादा का जी दुने।

जब तक मालवीयजी गवर्नमेंट हाईस्कूल में अध्यापक थे, सड़कों के अध्यापन का काम नहीं लगान से करते रहे। परन्तु उनका कार्यभार स्कूल की परिधि के भीतर सीमित नहीं था। गवर्नमेंट की मोकुरी करने हुए वे सभी सामाजिक एवं राजनीतिक बाधों में बराबर भाग लेते रहे।

सन् १८८२ में भारतीय राष्ट्रीय महासभा की स्थापना हुई। उसका प्रमुख अधिदेशन सन् १८८६ में करकेते में हुआ। मालवीय जी अपने गुरुद्वय पण्डित आदित्यराय मद्रासबाय के साथ इस जयि बेरान में सम्मिलित हुए। मद्रासी को मानो स्वच्छ जन में बिबरने का अवसर मिल गया। इस समय मालवीयजी गवर्नमेंट हाईस्कूल में अध्यापक थे। बाँडेस के इस अधिदेशन स उनकी जीवन-गाय बन्ध गयी। मंत्र पर न जो उनका स्थापना हुआ उनसे सम्पूर्ण देश उनकी धोर आर्ष्ट हो गया।

काशीबाँडे (ब्रजराज) के स्वर्गीय राजा यदुनाथ सिंह

कांग्रेस के एक और तार मेला थे। उन्हीं दिनों के विनायक से एक  
 युरोपियन महिला से विवाह कर लीं थे। व एक तजस्वी पुरुष  
 थे। अंग्रेजी रहन-सहन वेश-भूषा के साथ उनमें अपने देश के प्रति  
 प्रगाथ मस्ति थी। पूव और पश्चिम का एक ही समय में यह  
 विभिन्न समन्वय प्राप्तयजनक था। साधारणता के अंग्रेजी  
 विवाह म रहन से पर राष्ट्रीय सभाओं में अपने देशी वस्त्र पहिन  
 कर आते थे। उनकी यह निश्चित धारणा थी कि जब तक गरीब  
 साधारण जनता का उद्धार नहीं होगा देश कृष्ट उन्नति न कर  
 सकेगा। और यह तभी सम्भव होगा जब जन-साधारण अपनी  
 मातृभाषा से पूर्णरूप से परिचित होगा और उसके द्वारा सम  
 दश की दीन दशा की जानकारी होगी। एतदर्थ उन्होंने हिन्दो  
 रत्न नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकालना आरम्भ किया।  
 उनका एक योग्य गणनादक की तलाश थी। मन् १८८६ के कांग्रेस  
 के अधिवेशन में उन्होंने दया कि वही मद्रका जिमने मन् १८८४  
 के मध्य हिन्दू समाज के अधिवेशन में उन्हें बीच-बीच में बोसने की  
 रीति से की अनधिकार घृणा की थी आज कांग्रेस के अधिवेशन  
 में बड़े बड़े बख्शों के सामने ठार से ब्याख्यात द रत्ना है तो राजा  
 शाह बिना उगरी और आगुल हुए न रह सक। राजा शाह  
 गुणकारी थे। उन्होंने दाण भर में पश्य किया कि मानवीयता  
 एसा सुयोग्य सुभाषण उक्त यदि मिस जाय तो उनका पत्र समक  
 उते। उन्होंने मुख्य मानवीयता से बड़ा कि अपनी मातृ भाषा  
 मानि की मातृरी भाषा हिन्दोस्तान का गणनादक करो और  
 दग की गया करा। साथ साथ में यथासक्त भी परो। मै भाषा  
 दा गो एव मानि किया कर पा।

मानवीयता पडे अगमंजम में गते। मानवीय जी रत्न-मन्  
 गान-गान रत्ना में बड़ा गनाजनपती शाहण्य थे और दगक  
 प्रिन्स राजा शाह दिगायत की दया गाण हुए एक मन् मांस

भोजी शत्रिय थे। जहाँ तक भोजन का सम्बन्ध था उसमें कोई कठिनाई नहीं थी। राजा साहब के साथ उन्हें भोजन करना तो था नहीं। मन्त्रि एक बड़ी समस्या थी। मन्त्रि और गंगाजल का सम्बन्ध एक बड़ी चीज थी। राजा साहब मन्त्रि प्रेमी थे। पत्र के स्वामी और उनके सम्बन्ध को प्रायः परामर्श के विषय मिला ही पड़ता है। इस कारण 'हिन्दास्थान' के सम्बन्ध होने में बड़ी हिम्मत थी। राजा साहब के २००) मामिल का उन्हें कोई लोभ नहीं था। जिन व्यक्ति का कल्प सम्बन्ध परम्परा दस पाँच रुपये मासिक आय पर परगा जाता और गयनमें स्तूप के ०) ग पाल हो रहा था उमा हृत्त म राजा साहब के २०० का बार्द महत्त्व नहीं था। परन्तु वे अक्सर बड़े देश-सेवा समाज का कार्य धर्म भी तथा करने का एक माध्यम मानते थे। और इन समाज के माध्यम-साधक हिन्दी भी गया जाने का अवसर हाथ से जाने नहीं दिया चाहते थे। बहुत सोच-विचारकर मामवीपत्री ने पत्र पर पत्र का सम्बन्ध स्वीकार किया कि जिस समय राजा साहब मर गये हों तो पत्र का उन्हें सुनावें और न उसमें कोई घातपीन करें। पत्र बड़ी थी पर राजा साहब ने उस स्वीकार कर लिया। मामवीपत्री ने गयनमें स्तूप म त्यागपत्र दे दिया।

### पत्रकार मामवीपत्री

सन् १८८७ में मामवीपत्री अन्धकार म पत्रकार हो गये और प्रयाग लोहर बर्ग म तीस मीन पर कायादीहर में रहने लगे और बर्ग म हिन्दोस्थान का सम्बन्ध करने लगे। म मन्त्रि में मन्त्रि कातादीहर में रहा थे। और प्रदेश रक्षितार को प्रयाग पत्र भान थे। पत्र के सम्बन्ध संस्कार का सम्बन्ध स्वयं राजा साहब करत थे। मामवीपत्री के सम्बन्ध म पत्र निरार का और उग्रही साहब-अन्धकार बन्ध बन्ध ली।

कांप्रेस के एक औरदार नेता थे। उन्हीं दिनों वे बिनामत से एक  
 युरोपियन महिला से विवाह कर सीटें थे। वे एक संजम्बी पुरुष  
 थे। अंग्रेजी रूढ़-महान वेरा-सूपा के माथ उनमें अपने दस के प्रति  
 प्रगाथ भक्ति थी। पूव और पच्छिम का एक ही समय में यह  
 बिभिन्न समयव्य घादबर्पजनक था। साधारणता के अंग्रेजी  
 निवास में रहने से पर राष्ट्रीय समाजों में अपने देशी वस्त्र पहिन  
 कर जात थे। उनकी यह निश्चित धारणा थी कि जब तक गरीब  
 साधारण जनता का उद्धार नहीं होगा देग कुछ उन्नति न कर  
 सकगा। और यह तभी सम्भव होगा जब जन-साधारण अपनी  
 मानभाषा में पूर्णरिति में परिचित होगे और उसका द्वारा उस  
 देग की वीन दगा की जानकारी होगी। एतदथ उन्होंने हिन्दो  
 स्टान नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकामना आरम्भ किया।  
 उनको एक योग्य सम्पादक की मन्त्राशा थी। मन् १८८६ के कांप्रेस  
 के अधिवेशन में उन्होंने दगा कि वही लक्ष्य जिमने मन् १८८६  
 के मध्य हिन्दू समाज के अधिवेशन में उनके बीच-बीच में बोसन की  
 रातने की मनपितार धृष्टता की थी घाज कांप्रेस के अधिवेशन  
 में वह बड़े बख्ताभा के सामने ठाठ से ब्याख्यान दे रहा है तो राजा  
 घाब बिना उमठी और आगुष्ट हुए में रह गव। राजा साहब  
 गुणघाटा थे। उन्होंने दस भर में पण्य किया कि मासवीयकी  
 एगा सुयोग्य सम्पादन उन्हें यदि मिल जाय ता उनका पत्र पमक  
 ८८। उन्होंने तुम्हें मासवीयका में क्या कि अपनी मास पण्य  
 मासिक की मोहरा होकर हिन्दोस्तान का सम्पादन करा और  
 दगा की गया करो। मास मास में बरानस भी पढो। मैं आता  
 हो गो गये मासिक किया कर गा।

'मासमासकी का अग्रमंजम में पट। मासवीय की रूढ़-महान  
 मान-मान समाज में पट्टर समाजतपमी प्राशय्य थे और इनके  
 प्रशिक्षण राजा मास्य विद्यालय की दगा गाए हुए एक मठ मास

मोर्ची साम्रिय थे। जहाँ मुर मोहन का सम्बन्ध था उसमें कोई कश्चित्ता नहीं थी। राजा साहब के माप उन्हें मोहन बना तो था नहीं। मद्रिण एक बड़ी समस्या थी। मद्रिण और गंगाप्रम का सम्बन्ध एक बड़ी शीर थी। राजा साहब मद्रिण प्रमी थे। पत्रक स्वामा और उमर सुम्नादर को प्रायः परामर्श व नियम मिलता ही पड़ता है। इस कारण हिन्दोस्तान के सम्बन्ध होने में बड़ी हिम्मत थी। राजा साहब के २००) मामिला का उन्हें कोई सोम नहीं था। बिन ध्यक्ति का कल्प सुन्तु परिवार म्यु पाँच म्युद मासिक आवे पर परगा बना शीर गवर्मन्ट म्युप के २०) स मय ही रहा था उमर म्युद म गजा साहब के २०० का बार्ड महत्त्व नहीं था। मन्तु ब अगवार को देरा-भवा मयात्र तदा एक मय की सेवा करने का एक माध्यम मानत थे। और इन सबों के माय-माय हिन्दी की सेवा करने का अवसर हाप स जाने मर्त मिया चाहते थे। मद्रिण सुष-बिन्तारकर मायबीयडी में म्यु मर्त पर पत्र का सम्बन्ध स्वामार किया कि जिस समय राजा साहब मद्रिण हा तो बन ता उन्हे सुनाते और न उनम बार्ड यावधीन करें। मर्त कड़ी थी पर राजा साहब ने उम स्वामार कर मिया। मानबीयडी ने मर्तमट म्युन म म्यापत्र दे मिया।

### पत्रकार मायकापजा

मनु १८८७ में मानबीयडी अन्वारा म पत्रकार हो गय और प्रवाण हादकर बनी म मीन मीम पर बाभादीर में रहने लगे और मर्त म हिन्दोस्तान का सम्बन्ध करने लगे। य मत्रा में म मद्रिण बाभादीर म म्या थे। और मद्रिण सुषार का प्रवाण पने भान थे। पत्रक मायमि मंत्रार का सम्बन्ध म्युद राजा साहब करने थे। मायबीयडी के सम्बन्ध में पत्र मिया उम और उमरी साहब-भवा म्या बट म्या।



कांग्रेस का एक जोरदार नेता थे। उन्हीं दिनों वे बिनामत से एक युरोपियन महिला से विवाह कर लीं। वे एक तेजस्वी पुरुष थीं। अंग्रेजी रहन-सहन देश-भूषा के साथ उनमें अपने देश के प्रति प्रगाथ मस्ति थी। पूर्व और पश्चिम का एक ही समय में यह विचित्र समन्वय आश्चर्यजनक था। साधारणता के अंग्रेजी विद्वान से रहन से पर राष्ट्रीय समानों में अपने देशी वस्त्र पहिन कर जान थे। उनकी यह निश्चय धारणा थी कि जब तक गरीब साधारण जनता का उद्धार नहीं होगा देश कुछ उन्नति न कर सकेगा। और यह तर्क मजबूत होगा जब जन-साधारण अपनी मानमाया से पृथगीति से परिचित होगा और उसके द्वारा उस देश की दीन दगा की जानकारी होगी। एतदर्थ उन्होंने हिन्दो स्थान नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकालना आरम्भ किया। उसका एक योग्य सम्पादक की तलाश थी। मन् १८८६ क कांग्रेस के अधिवेशन में उन्होंने देखा कि वही लड़का जिसने मन् १८८४ क मध्य हिन्दू समाज क अधिवेशन में उन्हीं बीच-बीच में बोसने की रोशन की मनपिकार घुम्ता की थी आज कांग्रेस क अधिवेशन में वह बड़े दृष्टमा क सामने ठान से ब्याप्तमान व रहा है तो राजा खानद बिना उगरी और आरुण हृण न रह सक। राजा चाहक गुरुप्राण थे। उन्होंने दाण भर में परम लिया कि मानवीयता एगा सुयोग्य सम्पादक उन्हे यदि मिल जाय तो उसका पत्र घमा रहे। उन्होंने तुरन्त मानवीयता में कहा कि अपनी माठ गये मानविक बंधनकारा छोड़कर हिन्दोस्थान का सम्पादन करो और दल की सेवा करो। साथ साथ में बराबर भी रहो। मैं आणका दो गो गये माणिक रिया कर गा।

मानवीयता के अगमजय में गटे। मानवीयता की रहन-सहन मान-मान कर्या में बट्टर मनानकवर्मी श्रावण थे और न्यत्र प्रशिभूत राजा गादुर निगायत थे। दृष्टा गान हृण एक मय मांस

भारी दायित्व थे। जहाँ तब भोजन का सुखमय या उसमें कोई कृत्रिमता नहीं थी। राजा माह्व के साथ उन्हें भोजन करना भी था नहीं। मन्त्रिण एक बड़ी समस्या था। मन्त्रिण और गंगादण्ड का सम्बन्ध एक बड़ी खीर थी। राजा माह्व मन्त्रिण प्रती था। पत्र के गन्नामा और उसके सम्बन्ध का प्रायः परामर्श के विषय मिलना ही पड़ता है। इस कारण हिन्दुस्तान के सम्बन्ध होने में बड़ी हिंसा थी। राजा माह्व के २००) मानिस का उन्हें कोई लोभ नहीं था। जिन व्यक्ति का रूप सुन्दर परिवार इस पवित्र रूप माह्विक भाव पर परमात्मा का योग्य बनने में शुरू के योग्य बन ही रहा था उसके रूप में राजा माह्व के २०० का का महत्त्व नहीं था। परन्तु वे अन्तर्गत को शान्तता समाप्त गया एक घम की गवा करने का एक माह्विक मानस था। और इन सबों के गाव-गाव हिंसा की सवा करने का अवसर हाथ में आने लगे लिये कहते थे। बहुत मोष-विचारकर मामवीयत्री ने यह शर्त पर पत्र का सम्बन्ध स्वीकार किया कि जिन समय राजा माह्व मन्त्रिणों हा हा व न ता उन्हें बुलावे और न उसमें कोई बाधनीय करें। जिन बड़ी थी पर राजा माह्व ने ठम स्यारार कर लिया। मानवीयत्री ने गर्वमय रूप में स्यागपत्र द दिया।

### पत्रार माह्वीयत्री

सन् १८८७ में माह्वीयत्री अन्तर्गत में पत्रार हो गया और प्रयाग लाइबर करने में तीस मीन पर कामातीर में रहने लग और वही में लियोन्तान का सम्बन्ध करने लगे। वे मन्त्रिण में थे कि कामातीर में लगे थे। और प्रन्देश रजिस्टार को प्रदान करने आते थे। पत्र के माह्विक संस्कार का सुम्बन्ध स्वयं राजा माह्व करने थे। माह्वीयत्री के सम्बन्ध में पत्र लिखा गया और उसकी सम्बन्ध बना हुआ है।

मानवीयजी बड़े विकट प्रकृति रीति थे। पहिले तो वे अपने मेरु को कई बार काट-छाँटकर फोरमन के पास भेजते थे। प्रकृति जाने पर बड़े ध्यान से पढ़कर उसकी अशुद्धियाँ ठीक करते थे और पत्र के छपते उपले मेरु की भाषा में संशोधन करते थे। किसी भी प्रेस का फोरमन प्रकृति की अशुद्धियों पर तो अवश्य सज्जित होता है और कम्पाजिटर्स को सुस्त सुस्त कहता है परन्तु यदि मेरुक बार-बार अपने मेरु को घटाता-बढ़ाता है तो फोरमन बहुत क्रुद्धमुद्रता है। परन्तु मानवीयजी अपनी आदत से माचार थे और यह आदत उसकी जीवन भर बाधक रही। क़ारी हिन्दू विद्वान्बिद्यालय में जब वे बाह्य-सांसारिक से अपने हो निरवकाश या शिथिल हुए पत्र में टाइप हो जाने पर कई बार काट-छाँट करते थे और जब तक उसकी भाषा पूर्ण रीति से परिष्कृत नहीं हो जाती थी उनका जी महल मरता था। किसी पत्र-पत्रिका में प्रकृति की अशुद्धियों को वे बहुत ही अनूचित और पत्र की मान-हानि की बात समझते थे।

कई वर्ष तब मानवीयजी ने बड़ी जान-बूझ से 'हिन्दोस्तान का सम्मान किया। राजा साहब भी अपनी शर्त का पालन करते रहे। परन्तु होमहार, एक दिन जब वे गिये हुए थे उन्होंने मालवीयजी का जो एक आव-यन काय के सम्बन्ध में परामर्श करने के लिए बुला भेजा। मानवीयजी उनके पास गये पर उन्होंने तुरन्त साइ दिया किन्तु समय राजा साहब मते में है। परामर्श देने के बाद मानवीयजी ने उनका बड़ा दिमाग अपने अपनी शक्त तोड़ दी जब मैं गुप्तान्त का काम न करूँगा। राजा साहब ने बहुत समझा-बुझा पर मानवीयजी अटिग रहे। साधारण होकर राजा साहब ने कहा कि छुट्टा जाओ यकारन पड़ो। जब तक पड़ोगे उसका पूरा गर्न मैं दूँगा। उन्होंने अपने वचन को पूरा किया और वे मानवीयजी को शहर २२) महीना भेजत रहे परन्ति मानवीयजी ने उन्हें बहुत मना किया।

यद्यपि मानवीयजी को कामून पदकर बरामत करना बहुत नापसन्द था तथापि राजा रामपालसिंह जेस उन्हा एक हिर्नीपी व्यक्ति और परिश्रम मुन्दरभाक्त तथा उनके भाई बमदेबराम दस जेस घनिष्ठ मित्रों की समाह को ब बसे कुम्हगत ? घत पप्रकारिता का ख्याल छोड़े दिन ब लिए छोड़कर बानून पदमे में जुट गये और १८२१ म १७०० एम० बी० नाम कर लिया । दो वर्ष बाद हाकीर् में बकासत करने लगे और उनमें बकासत शुरू बमकी । एक बार पतद्विज अयोध्यानाथ जी ने ह्यूस माहुर स शिरायस परी कि जब ए मानवीयजी बकासत करने लगे हे तब स ब बनेयेन क काम में दिनाई बग्ने लगे हे । ह्यूस माहुर ने कहा 'ठीक ठीक है । इन्हें कामून की आर ही पुरा बिलत भगामा चाहिए और फिर मानवीय जी की आर देखकर बोले कि 'येरो महतपोहन ! दिना मे तुम्हें तीव्र बुद्धि दी है । अगर मन लगाकर तुम दस बरस भी बकासत कर लाग ता तुम निबबय महम आगे बड जाओगे । सब तुम अपनी प्रतिष्ठा ब बारभ अधिक बममवा कर सकोगे और सब तुम शैर की भी घणित सेवा कर सकोगे । मानवीयजी घरने हिर्नीपी का मग भादर बलम प । बक उहने ह्यूस महोप्य के उददेशानुसार कुछ दिनों बमबर बरानत की और बहुत कुछ गय्या भी बमाया । एम गबब मे एक रात्री भी घना घा आ गयी । मानवीयजी की बानतत अभा टीक तद मे बम न पार्या थी कि उनरी महरी का विवाह गिर पर आ पईना । उधर निा बितने घन की घाबयबना थी उाना घन गाम म न था । उनरी घमपन्नी भीमायबती कुम्हत लेवी बई बिलिन हूँ । परन्तु मानवीयजी को बोई विष्णा नर्त हूँ । उन्हें पूज विराग था कि भगवान् इसरा समय पर आन श्री प्रबड कर देगे । परी ह्यूस । जोई बडा मुहम्मता तद मम गया विगुम पीक ह्यूस गाम ह्यूस बानून म निर्पाणिम पीप ब दिना । उगान उम कुम्हन्नी क गप म गग निरा और भाने उगन

दायित्व से निवृत्त हो गये।

इस मुकाम में जीत जाने से मालवीयजी की यकामत खोरी। सचम निरन्त्री। वे उन दिनों शहर ही में रहते थे। उसी वृत्त में मालवीयजी में जहाँ उनका पसन्दक मकान था मुष्ठी सुन्दराम के मकान में उनका दफ्तर था। सुबेरे ही से मकानिकों की भीड़ लग जाती थी। जिसकी इतनी बढ़ी यकामत हो वह कोई और काम तो कर नहीं सकता। मालवीयजी केवल यकामत से अपना बटोरने के लिए पदा नहीं हुए थे। उनका ध्येय सा दूसरा ही था यकामत तो उसका माध्यम मात्र थी। यकामत के कारण अपने मुख्य ध्येय में बाधा पड़ते देख मालवीयजी यवरा उठे और उमरी उभेना करने लगे। आप स्वयं समझ सकते हैं कि

“पुरा भारतकालमे विरुचकारसातिरुचकान्  
परान्तुरभीकृते पवति वस्य धार्मं वयं ।  
त यम्बतत्रते पितृहनेऽभेकाकृते  
मरालकुलनायकं वचय रे वर्यं रे वर्तताम्” ।

परिहतरात्र आपमान

अर्थात् जिन राजहंस ने एत समय मानसरोवर में जिनका जम मण्डलों से बिगरे हुए गुण-परण स सुरमित हो रहा था जाना जीवन व्यतीत किया था वह अब एक दीण और गन्दे जम यामी तनया में जिनमें भेकवृन्द अपनी टर-टर से वजन पतं दानते हैं मया वयं यद् गराता है।

परिणाम यह हुआ कि मकानिकों की उधेसा होने लगी औ मारजनिक कामों को मानवायजी प्रायमिच्छा देने लगे। परिणाम यानुक्रम मद्र मालवीयजी को बहुत मानत थे। एत दिन प्राण वान मद्रजी उनम मिसने के लिए उनके दफ्तर में आये एत समय तक मालवीयजी नहीं आये थे। मद्रजी के अतिमिच्छ

परिष्कृत हृदयनाथ बुजक, मुंगी ईश्वरशरण्य तथा बहुत से मन्त्रिजन  
 उनसे प्रतीक्षा कर रहे थे। इतने में स्नानाधिक से निवृत्त हाफर  
 मामवीय जी दफ्तर में आये। जाते ही पहिल उम्हाने सब मय  
 किस्मों को विद्या कर दिया। निखी स यह कह कर कि हम बेलाश  
 नाथ काटक को लिये दले हैं वे तुम्हारे मुकदम की पैरबी कर दोगे  
 क्रियो स यह कह कर कि फिर जाना आज हमें उनिब भी छुट्टी  
 नहीं है। लाचार, सब मयविकल बस गये। मट्टजी कोने में बैठ  
 दम सब व्यापार को देगकर मन ही मन बृङ्क रह्ये। आन्विरकार  
 उनसे न रहा गया। बोम मदन ! ( मट्टजी मामवीयजी स दस  
 वय बडे थ ) ई तुमरा इंग हमें समझी नहीं सोहाता। जो तुम्ह  
 पार पैसा देय आव रहें उन्हें तो तुम टरकाय दिहा और इन जावा  
 रन क माप बैठ के अपना बगत पराब करवो। इन्ह तो न कृप  
 करना है न धरना। सुभी मट्टजी क स्वभाव न परिचिन थे और  
 उनकर आशर करन थे। मामवीयजी मुसकिरा कर बास मट्टजी !  
 आज इन लोगो स एक अस्पन्त आयश्यक राजनीतिक विषय पर  
 परामर्श करना। मट्टजी बुदकर बोन जाय रहे दव। हम सब  
 जानित है। इनम सी बातपान संभ्य क भी होय मबठ छी।  
 मोअकिरम ता जो गय सो गय। हम जादत है। फिर भाबे। यह  
 कहकर मट्टजी उठ गड़े हुए और पन मये।

एक दिन जब मामवीयजी अपने दफ्तर न उठ ही रहे थे कि  
 एक अनजान व्यक्ति इनके पास आया और गभामा होकर बोला  
 "आज हाईकोर्ट न मेरा मुकदमा है। मुंगी बामिनीप्रसाद मेरे  
 बराम है पर वे क्यों बाहर बन गय है। मैं उन्हें पूरी पीस दे  
 चुका हूँ। मैं बहुत गरीब आश्रमा हूँ। मेर पास किधी दूसरे बर्बल  
 को देन के लिए मय नहीं है। जिन बर्बल क पास जाता हूँ उनक  
 मुंगी पहिल पीस मांगता है। गमभ म महीं भाता क्या कर  
 जान धर्मोमा है इशानिए घायबी शरण्य म भाया है।" मानवीय

जी के सुनोमल हृदय का बीज देने के लिए, गरीबी धर्म और दरशागत ये तीनों बाण इतने अचूक थे कि इनका वार कभी खासी नहीं गया। उस दिन मालवीयजी बहुत व्यस्त थे। तुरन्त उन्होंने उस व्यक्ति को अपने एक खास आदमी के साथ मुंशी गोकुल प्रसाद बर्धन के पास भेज दिया। उस गरीब आदमी का नाम बिना पस-पौड़ी के हो गया। आगे दिन मालवीय जी के पास पेश-शरणागत और गरीब आया करते थे और उनका नाम निश्चुरक हो जाया करता था। इसी समय उन्हें रानी बोरकोट का एक भारी मुकदमा मिला जो उनकी वकालत की एक कीर्ति सम्झी जाती है। इस मुकदमे में यश के साथ-साथ बहुत सा धन भी मिला जिससे उन्होंने अपने आस-सम्भान से सम्बन्ध भूमि पर एक बड़ा-सा मकान बनवा लिया। प्रायः इस प्रकार बहुत-सा धन मिलने से धन का लोभ बढ़ता है परन्तु मेरी तो निश्चित धारणा है कि रानी बोरकोट के मुकदमे में अधिक धन मिलने से उसका प्रभाव मालवीय जी के हृदय पर उलटा पड़ा। उन्होंने गृहस्थी के उत्तरदायित्व से मुक्त होकर बकासत में मुह मोड़ लिया और वे दरसवा में लग गये। बकासत में जो उन्होंने स्याति प्राप्त की थी उससे उन्हें अपने उदर में बड़ी महायत्ना मिली। हलूम माहब की भविष्यवाणी पूरी उत्तरी। उनका उल्टा कृति मालवीयजी के वैभव का मूल मंत्र है उस पुनः उद्भूत करता है।

देखा मन्मोहन ! ईश्वर ने तुम्हें तीव्र बुद्धि दी है। अगर मन लगाकर, तुम उस रूप में वकालत कर लोगे तो तुम निश्चय सबसे भाग बढ़ जाओगे। तब तुम अपनी प्रतिष्ठा के कारण अधिराज्य-मारा कर सकोगे और तब तुम दरा की भी अधिन मत्ता कर सकोगे।

मालवीयजी बड़ों का आदर करते थे और दिन चाहने वालों के उल्टे को मानते थे। वे उन लोगों में नहीं थे जिनके सम्बन्ध

में बाणमदूत ने कादम्बरी के शुक्ताशेषपत्रों में कहा है —

“निष्कामाहात्म्यमवनिभरा न प्रणमति देवतास्यो न मानयति  
मम्यात् प्राणप्रणापरिभङ्ग इह नृजति कश्चिदोपदेशात् कुप्यति स्तिवादिभै”

( जो मूठे बड़प्पन के लक्षिमान में बुर रहत हैं व दबताका को प्रणाम नहीं करत और गुम्जना का आदर नहीं करत यह समझ कर कि इसमें उनकी बुद्धि की हेन्नी होयी, समाह्वाराय स रीत्या करते हैं और हिनन्दुओं पर क्रुद्ध होते हैं ।)

बड़े बड़े बकासल कर मामबीयजी में दण दिया कि घना का बराना और पहनाई का बजाना दोनों एक साथ सम्भव नहीं है एक के हाकर रजना हागा तो उन्हें भरना मार्ग निर्धारित करन में दर न लगी। यकामत में उन्होंने क्रमशः हाप लोंक दिया और देण-सबा में लगन के साथ जुट गए। उनकी व्याख्या में देण-सबा के अन्तगत गुमाज-सबा एक घम-सबा निहित थी, तीना ही का अन्वयान्याय्य सम्बन्ध था। एक बार मैं उनसे कहा था कि माप में नीति की सुन्दर व्याख्या एक छोटे से अनुष्ठान के द्वारा में कर दी है। गमभ्य था कि उस मुनकर मामबीय जी प्रसन्न हुए। यह शोक इस प्रकार है

यत्पौरुष वाम्नाभि इवम्भोनिर्गतीवरी ।

तद्वरीशय वृनिभि वाचस्पत्यं प्रनापने ॥

माप-निर्गुणानवय-२-३०

( भरना उदय और गडु का हाप उनकी ही तो नीति है। गम मूक विज्ञान का मानकर नीतिम बटुय या निरपक बरयाम बरता है ।)

रत्नार को मुनः ही मामबीयजी में नाक निरोह कर कहा कि यह दुष्पी नीति है। भरना सम्पूर्ण हो और दुग्दर का भी अन्व



हो यही धर्मानुमोदित नीति है। उन्होंने कहा कि वही नीति आदरणीय है जिसमें —

सबे उत्र बुद्धिज सन्तु सबे सन्तु निरासयाः ।

सबे अज्ञानि परस्यन्तु मा कश्चित् दुःखसाक भवेत् ॥

( प्राणी मात्र सुखी हों सभी रोग स मुक्त हों सभी का कल्याण और किन्ही का भी दुःख न हो ।) जब मैंने परिहृत वामहृष्य मः ट स यह बात कही तो बे बोस माप ने ठीक ही तो कहा है। मास-र्यामजी उम नीति का सपना देखते हैं जो हानी चाहिए। माप उस नाति की बात पत है जो वास्तव में है। मासवीयजी को व्याख्या में कल्याण है माप में वास्तविकता। अद्वे को संसार स स्वार्थ परता हूँगी और बाहे को मासवीय जी का स्वप्न पूरा होगा? बाहे को भी मन लेन होई काहे गथा तपिहें ?

मन् १६०७ की बात है। मट्टजी क दहावसान क छ वर्ष पहिल की बात है। उम साम बाधिम का अधिवेशन मूरत स हुआ था। उम समय देश का राजनीतिक पाठावरण बड़ा दुःख था। ब्रिटिश शासन और दण क नेताओं म एक प्रकार स रस्साबना हा रही थी। उपर आपस म भेद करा देने में निष्ठ-हस्त ब्रिटिश शासन अपनी बात में था और इपर भारतीय नेतागण देश को स्वतंत्र करने क लिए उत्साहम ठा रहे थे। उमी परिस्थिति म राजनीतिक विचारपाय का दो भाग में विभक्त हो जाना स्वाभाविक ही था। मूरत क अधिवेशन म मासवीय जी और मट्टजी दोनों ही माप गय थे और साब-साय ठहर भा थे। यन्वि दोनों ही महापुरुषों में धनिक भर्ती थी। सचार्पि उनर राजनीतिक विचार बिलपुन मिश्र थ। एक तीर पाट ना दूगरा मर पाट। मासवीयजी मरम दण में थे और मट्टजी मरम रन क पथर्ता थे। मट्टजी को मरम दण उह पूरा भाग मही घोडाता था।

उनका क्याय था कि —

यह बात लड़े-भंग कभी मत नहीं लखती ।

रज्जु के बराले से बना टल नहीं लखती ॥

मासवीयजी का क्याय था कि जब देश की माँग यापोषित और धर्म-सम्पन्न है तो इन्डिया शासन को समझाने बुझाने से कार्य सिद्ध हो जायगी । मद्दजी का कहना था कि —

गुरु यह बात रही उनसे — 'बुझारो उतको ।

बर बुझा माँग को क्या देने हो ? जारी उतको ।

अकबर

यदि इसी बात को मद्दजी के दावों में बहू तो यह होगा 'साठ के देवता बात से नहीं मानते ।

मूरत के अधिबेशन में जो बाएड हुआ उम सभी जानते हैं । उसके बुराने की यही कोई आश्चर्यकथा नहीं है । इतना कहना पर्याप्त होगा कि इस प्रकार बायेस के अधिबेशन के भग होने से मासवीयजी के हृदय में बड़ी ठेस लगी । वे व्यथित हो उठे । पर अकबर के विस्तर पर सट रहे परन्तु उन्हें मीद नहीं आई । बीच बीच में वह उठने से हाथ तिसक हाथ तिसक मद्दजी निकट ही सटे से । उनसे म रूडा गया सहना बात उठे 'हमारे तिसक को बाहू बहूठ हो जाने का नहीं कहते उ मासवीय जी बहूठ दुगी से, बुरा नहीं बात ।

मासवीयजी की बबानत छोड़ने की चर्चा करत-करत थोड़ा बिषयान्तर हो गया । यह पहिले में बहू बुरा है कि मकर्ममेंट स्तूप की अम्माजी छोड़ने के बाद मासवीय जो बायाकीर के 'हिन्दुस्तान' का गम्मान्त करने लगे से । एक सिद्धान्त की बात पर उन्होंने उम छोड़ दिया था और बबानत पाम कर बबानत करने मग से । देश की सबा में अजना मन्तूरु समय मगाने से विष्ट उन्हाने बबानत करना भी छोड़ दिया । देश मग का विष्ट मभाचार-बब

नितान्त उपयोगी साधन होते हैं अतः मासवीयजी ने पुनः इस ओर ध्यान दिया।

### मासवीयजी पुनः पत्रकार

कासाकाँवर के 'हिन्दुस्तान' समाज छोड़ने के बाद मासवीयजी पण्डित अयोध्यानाथ के अंग्रेजी पत्र 'इण्डियन ओपिनियन' के सम्पादन में उनका हाथ बटाने लगे। पण्डित अयोध्यानाथजी निर्भयता से अपना सानी नहीं रखने थे। जैसे वे गिर्मय केहरि समान अविषम जमि हिमाचल थे वैसे ही उनका 'इण्डियन ओपिनियन' भी था। आगे चलकर वह पत्र मसमऊ के पत्र 'एडवोकेट' में मिला गया। फिर भी मासवीयजी उस अपना सहयोग निरन्तर दते रहे।

परन्तु मासवीयजी ठो अपना निज का पत्र चाहते थे और वह भी हिन्दी में जो जन-साधारण की भाँति रोप सक। यह वह समय था जब अंग्रेजी का बोझ-बाधा था। लोग अंग्रेजी रहन-सहन बोझ-बाम बस-भूषा के बिकृष्ट अनुकरण ही में गौरव का अनुभव करते थे। यह वह समय था जब

पुरीद-बदर हुए बज्रम नपरबो कर ली ।  
भये जनम की तपना में उरुगुणी कर ली ॥

समाज का पूर्णतः एवं मंगलमय वर्धन सिद्धि हाँ रहे थे और होंग उनका स्थान से रहा था। प्राचीन भारतीय पद्धति का अनुकार बने हुए मध्य प्रगाद की मौल्य जरूरत ही पूर्ण थी। आत्म-सम्मान की मौल्य भूत चुके थे। भाँ-भारत केवन स्मृतिमानाबनी रह गया था। इस भी बोर्ड मर निटने की चीज है नम लोग जानत ही म थे क्या गुर त्रिगुण मुठनाबादी म बदा है —

अम्बर

नजर समाप्त की क्या, बर्क भी हो तो सरब जाये।  
धमी धाया नहीं खिचकों को जाने-धातियाँ होना।

जब यही नहीं मानूम था कि आशियाँ क्या चीज है तो जाने  
आशियाँ होने की बात कस हो सकती है ? ये सब ममस्पाए मास  
बीयजी को भीन स सोने नहीं देती थीं।

### अभ्युदय

ऐसे वातावरण में सन् १९०० में यस्त-पंचमी के दिन  
अभ्युदय का उदय हुआ। मेरे गुरुदेव हिन्दी के युगप्रवर्तक पं०  
मासवीयजी के अमित्र मित्र पं० बासवृष्ण भट्ट ने इस पत्र का  
नामकरण किया। मुझे अथवा सरह स्मरण है कि उस समय कृष्ण  
सोगों ने इस नाम की बहुत ही उड़ाई थी। सोग ने मजाक में  
अबुदा' ए बेहदा कहते थे। उन बेचारा को दो कम्प्लायर्स थे।  
एक तो इस संस्कृत शब्द का उच्चारण करना उनके लिए बर्तन  
था। दूसरे इस बेहदा शब्द के अर्थ समझने के लिए उन्हें कोर की  
आवश्यकता थी। उर्दू-पत्रखी का बोन बापा था। बोगारते  
पिजिया शिरियाने बरीही में मोटवबिम हो गये हैं" का ममम् सेना  
उमने लिए अधिक सरस था। 'अभ्युदय' के अर्थ को ममम् पाना  
उनने बून की बात न थी। मानबीयजी को हिन्दी की बिन्ता भी  
सताये रहती थी। इन सब को राह पर साने के लिए मानबीयजी  
के लिए 'अभ्युदय' एक माध्यम हो गया। बड़ी मगत स उर्दूनि  
पत्र का सम्पादन किया। दो बार बार मानबीयजी प्रांतीय कौषिक  
के मन्त्र हा गये और उन्होंने अभ्युदय का मास स्वयं (भारतम्न  
राजनि) गुणोत्तमदास टहन के हाथों में गौर किया। उनर बाद  
छोटे समय तक पण्डित गत्यान्त जोशी और तन्नार १९१० म  
मानबीयजी के अर्थात् पं० कृष्णदास मासवीय स्वयं  
अभ्युदय के सम्पादन हा गये। कृष्णदासजी एर जोरगर और

सुयोग्य सम्पादक थे। वे मेरे मित्र थे। सामाजिक बातों में उनके विचार बड़े उदार थे और 'अभ्युदय' में वे सामाजिक कुराहियों की बड़ी कटु घातोल्लास करत थे। राजनीतिक समस्याओं पर वे अपने यत्नीर विचार बड़ी निरीकता से लिखते थे। इतना सब होते हुए पत्र की नीति एवं मर्यादा का निर्देशन तो मालवीयजी व्यस्त होते हुए भी निरन्तर करते ही रहते थे। कृष्णकान्तजी का स्वभाव और उनके विचारों को देखत हुए यह घात कुछ ऐसी थी जैसे किसी पहरेबाज थोड़े की लगाम किसी फूक फूककर पाँव रखनेवाले सारथी के हाथों में हो। अतएव कृष्णकान्तजी को जी मर कर अपने हृदय के उद्गारों के व्यक्त करने का अवसर न मिलने पाया। और यदि वे कभी ऐसा कर बैठते थे तो उन्हें मालवीयजी से बहुत मुस्त सुननी पडा। इस सम्बन्ध में विशेष न कहकर मैं दो पत्रों को नीचे प्रस्तुत करता हूँ। एक पत्र है मालवीयजी का कृष्णकान्तजी के नाम और दूसरा उमदा उत्तर है। दोनों ही पत्र बड़े महत्व के हैं अतः कुछ लम्बे होते हुए भी दोनों को पूर्णतया उद्धृत करता हूँ। कृष्णकान्तजी ने 'अभ्युदय' में विषयों की समस्या पर एक अप्रामाण्य निगा या जो मालवीयजी को पसन्द नहीं आया क्योंकि उन्हें उसमें कई बातें अपने मित्रताओं के विरुद्ध समझ पड़ीं। उसे पढ़कर उन्होंने कृष्णकान्त को यह पत्र लिखा था। ये पत्र मुझे पं० कृष्णकान्तजी के मुमुत्र पण्डित पत्रांत मालवीय के मौज्जम में प्राप्त हुए हैं और प्रयाग नगरमहापालिका के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

### मालवीयजी का पत्र

१—वि० कृष्ण

निदर्शनी राज हमने स्वयं देगा या कि 'अभ्युदय' प्रेस में एक प्रबंधन भाग लग गयी है। अग्नि का ज्वालना प्रबंध वेग से ऊपर

जा रही थी। इस समय हाथ में आये हुए २३ संख्या के अम्युदय को पढ़कर जो बेदना हमको हुई वह उससे बहुत अधिक है जो स्वप्न में प्रेस को जमत देकर हुई थी। यदि विद्युत्सी मंत्रा का प्रदान मेरा छपने के पहिले प्रेस मम्म हो गया होता तो हमको उतना दुःख न होना जितना इस मय को अम्युदय में छपा दखकर हुआ है। यदि पत्र को बन्द कर देने से हमका प्रायश्चित्त हो सकता तो हम पत्र को तुरंत बन्द कर देते किन्तु बहु भी नहीं हो सका। जब तक हम जीत हैं तब तक तुमको अम्युदय या मर्यादा में ऐसे मात्र प्रकाश करना नहीं उचित है जितना कारण हमको समाज के सामने अरिपक्ष बनना और लज्जित होना पड़े। तुम समाज का हित चाहते हो। समाज का सेवा किया चाहते हो। किन्तु समाज कभी तुम्हारी सेवा न स्वीकार करेगा—तुमका सेवा का अवसर ही न होगा—यदि तुम मर्म की बातों में समाज की मर्यादा का पालन न करोगे और समाज को मर्मबेधी बचन सर्वसाधारण में बहु दुःखित और लज्जित करोगे। जो बातें घर में बँटकर घोरता घोर दुःख के साथ विचारने की हैं उनको इस रीति से धर्म शब्दों में पत्र में प्रकाश करना अत्यन्त अरिपक्ष है।

गणधार्य का उत्साह प्रशंसनीय है—किन्तु यदि वह मात्रा और मर्यादा के भीतर रहे। जो उत्साह की बाढ़ में बिके और विचार को बह जाने दोगे तो कुछ भी उतकार नहीं कर सकोगे। हमें आशा है कि काम तुम ऐसी शोचनीय मूल न करोगे। मट्टों याबा पर मजहूम मगाना—मट्टों बिनों का पठर समाज के शरीर से निरावना—मट्टों और पिनों के अंग काटने के प्रचार से उग्र शरीर को पवित्र और पुष्ट बनाना है। परन्तु यह सब ठमी मंत्र है जब मर्यादा का पालन करत समाज का आन्दोलन मान मन में प्रदान रखा गया कराने और घोरों को दली गवा करने का उपदेश करोगे।

हम एक सेल में बैठे हैं। इसकी आगे की संख्या में—जो आगामी शनिवार को—२० पून को—छपेगी, छपवा दो। हिचिकना मत। इससे कम में काम नहीं हो सकता। इसना करने पर भी समझेगा कि नहीं यह निदबय नहीं। दूसरी संख्या के लिए फिर सेल में जाओ।

गुम्हार  
मदनमोहन

१७-६ १४

उर्ध्व परामार भी थोड़ा कम उद्यत किया करो।

शुद्धमानजी का उत्तर

प्रयाग  
१८-६ १४

●बाबू,

कृपापत्र मिला। आपको क्या पढ़ी इसका हमें बहुत दुःख है किन्तु इतना करने के लिए हम अब भी दामा चाहते हैं कि अपनी समझ में हमने मग में कोई अनुचित बात नहीं लिखी। मग सीमा है बहुत है, एक दो स्थानों पर यह सीमा को डीक गया है किन्तु इस सबका एग्मात्र उद्देश्य यही था कि लोगों को बोट पहुँचे हपोडे की घोट से वे जार्में और कठम्य पथ के निदबय करने पर से उद्यत हों। हम सम्बन्ध में हम एक मग भूमिका की भाँति इस संज्ञ के पहिले निजाम पुर है। हमने उममें साप-भाफ विग दिया था कि विषया बरा सुधार के दो ही उपाय हैं एक तो बंधाहिक अवस्था को बढ़ाना दूसरे विषया-आधमों का स्थापित करना। आपको माधुम होगा कि एक विषया-आधम के स्थापित करने के लिए हम उद्योग

●मागरीयत्री के शिवाय के उममें छोटे व्यक्ति उन्हें बाबू के सम्बोधन से मुगग करत थे।

कर रहे हैं। बस उम्मीद के लिए मोहमठ तैयार करने को हम वे  
 सरल निकल रहे हैं। विधवा-विवाह के लिए कभी एक शब्द हमसे  
 नहीं निकला है। इसका यह मानी नहीं है कि कभी अवस्थाओं में  
 वह अनुचित है। हमने उसका लिए कभी कुछ नहीं लिखा। उमरा  
 एकमात्र कारण यही है कि हम इस बात को जानते और समझते  
 हैं कि जनसाधारण के बीच में रहकर ही हम अधिक उपकार कर  
 सकते हैं। साथ ही साथ हम समझ ही नहीं कर सकते भी हैं  
 कि यदि हम जनसाधारण से दूर चले जायेंगे या आगे बढ़ जायेंगे  
 तो हमारा सम्बन्ध-दोष छोटा हो जायगा और हम अधिक उमरी  
 काम न कर सकेंगे और उपकार भी कुछ न कर सकेंगे। बस  
 बस सरल में टिप्पणियों के लिए म्यात या उसके व्याख्या की  
 आवश्यकता थी वह हम आधी क करीब मिल चुके थे और हमसे  
 संख्या में वह सब प्रकाशित हो जाता। संभव था उस पदका लोग  
 यही समझते कि वह आपका या लालची (माया माजपत शाय)  
 का किया हुआ है। बस अब आपका मेरा हुआ मेरा इस संख्या  
 में प्रकाशित होगा। समय होता था यही होने तो इसमें हम  
 आपकी सफेद धार कर लेंगे। बातें सब म ही रहतीं, शायद सब  
 ही रहते बचन दूग बन जाता, साथ ही साथ अन्तुदय की बात  
 बौद्धिक ओर की हो जाती। अब तिन तरह म सब एव ग्रा है  
 उस पढ़ने ही लोग समझते कि वह आपका किया हुआ है और  
 आप रह कर रहे हैं। अन्तु। मार यह न समझते कि अन्तुदय या  
 मर्यादा में कभी भा कोई बास्तबिक मनाउन धर्ममूलक निदान के  
 बिना को बाग कभी जान में प्रकाशित होगी। इन सब मर्कों के  
 निम्नले का एक प्रश्न बारदा यह भी है कि हम अदार्ष्टिक अन्तुदय  
 को बढ़ाना चाहते हैं। प्रश्न जो वे उनमें गाए-गाए किया था  
 कि "मुझसे वे साथ विषयों के वन को मुगदर बनाना।" सब से  
 जहाँ बसुर मर्ण है यह गावित्त किया था यहाँ भी यही नि



गया था कि उसे अच्छी परिस्थिति में रहने का सौभाग्य न था था  
 सिद्धित न थी भादि ।

आपका  
 कृप्या

मालवीयजी के उपर्युक्त पत्र से उनके हृदय की एक ऐसी भाँकी  
 मिसती है जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं हो सकती ।

पारम्भ में तो 'अभ्युदय' साप्ताहिक ही निकलता था परन्तु  
 'भागवान' का लेख मूठ जाँतता है । कृष्णकान्तजी देना प्रबन्धान्त  
 सम्पादक पाकर बह सन् १९११ में दैनिक हो गया । दैनिक पत्र का  
 सम्पादन कोई हसी-रोस नहीं । मंचालक एवं सम्पादक दोनों ही  
 को दौड़ों पसीने आते हैं । यह हाल विशेषकर हिन्दी दैनिक पत्रों  
 का है सिवाय इसके कि उसके पीछे कोई पूजीपति हो । इसके  
 अभाव में हिन्दी दैनिक का भगवान् ही मालिक होता है । मर्णा  
 अभ्युदय के पीछे मालवीयजी थे तथापि वे पूजीपति नहीं थे ।  
 इतना अवश्य है कि मालवीयजी के अथ ही अजान हिंसा देने से  
 पूजीपति लोग अभ्युदय की आर्थिक व्यवस्था पूर्णरूप से कर देते  
 पर मालवीयजी अपने पत्र के लिए देना करना अपनी मर्यादा के  
 प्रतिशूल समझते थे और देना उगुने कभी नहीं किया । पर कृष्ण-  
 कान्तजी हुंठारा नहीं हुए । अभ्युदय के कारण उनके सामने जो-जो  
 आर्थिक तथा अन्य बाँझाझ्याँ आई और जिस प्रकार कृष्णकान्तजी  
 ने उनका सामना और निराकरण किया उनसे थोड़ा बहुत में  
 समाधान उनकी माना सौभाग्यवती भूनादेवी ने अपने हाथ के कड़े  
 को घिरवी रंग रतकर कर दिया था तो ऐसी विपन्न परिस्थिति में  
 सौभाग्यवती न होते हुए भी कृष्णकान्तजी की पुत्र-वत्सला माना  
 धर्मनी परिजानेकी ने अपने उन पर के गहने ग्योदाकर कर  
 अभ्युदय को सन्हाय किया यह कोई आश्चर्य की बात न थी ।

कृष्णकान्तजी भी तो अपनी चुन के पकड़े थे। हिप्पी के साथ प्रविष्ट महाशक्ति ठाकुर गोपालगणमिह कशानों में उनका भी तो सिद्धांत था कि

करते चाघो जो करना है  
 घापी घापी है घाने हो।  
 लहरों को भय दिखताने हो।  
 हिमालयों को टकराने हो।  
 नाबिक ! न रोकरा नाव कभी।  
 लहर के बार उतरना है।  
 करते चाघो जो करना है।

इस प्रकार अम्युन्य की गाड़ी मसहल व कछ-भमकर किसी तरह निरस आई और आपत्तियों में निम्न अम्युन्य बाहर निरस आया जब

बिनाकरकरना सुनकरपर्वतपुत्र  
 कला इव गरीयाम् विगिराहृष्यमागः ।  
 पुनश्चरसबिह् वापावोपाहृताकि-  
 बलनिदिरजलवाप्यादेव उताप्यैर-हं ॥

माप-शिशुनासबज ११-४४

माकार्य-समुद्र के अनाथ जन राशि में निम्न जैस लम्बी रस्मियों के सहारे दूबा हुआ मारी बनरा निरागा जाता है बड़े सूर्य बाहर निकल आया।

अम्युन्य की आदिक समस्या इन प्रकार मन-बुरे हल हो गयी। बाहर बापों को कुछ पता न बन पाया कि जब बला टपी और जैसे टमा। यहाँ तक कि मायवीयत्री तक को कुछ पता न था। के दिग्गी में थे। जब प्रयाग आय तो उन्हें पता चला कि

\*लौने के बाप बन उठे क्या रित के बाप के।  
 इन घर में चाप तप गई घर के बिराप के ॥

वे बहुत दुखी हुए। पर जो क्रोध होना था वह तो ही पुका था।  
केवल थोड़ा सा आसू गिराकर खसे गये।

पं० कृष्णकान्त मानवीयजी सामाजिक मामलों में तो मासवीयजी से थोड़ा-बहुत समझौता कर सकते थे परन्तु राजनीतिक विषयों पर उनके विचार बड़े उग्र थे। अतः मासवीयजी से उनकी पटरी खाना असम्भव हो गया और वे सन् १६ में त्यागपत्र देकर दम्बाई खसे गये। उस समय से लेकर सन् १८ तक अम्युदय के सम्पादन का भार पण्डित बेंकटेश्वरारायण तिवारी ने लिया। परन्तु सन् १९ के प्रारम्भ में मानवीयजी ने कृष्णकान्तजी को फिर बुला लिया और अम्युदय उन्हें सौंप दिया।

भाँग मतलब तो सहज है 'महुर-कठिन पे होय' पत्र का निकाल देना तो सहज होता है पर उस कठिनाइयों के बीच से ले वि जाना कठिन हो जाता है। अम्युदय निकाला तो लेकिन बहुत खर्चीला पड़ा। जब तक मानवीयजी या पुरपोलमदास टण्डन जी तथा अन्य सख्त उमका सम्पादन करते थे मानवीयजी उसकी आर्थिक व्यवस्था बचावत छोड़ देने पर भी कमी तभी एक-आप मुख्यमा लेकर कर दिया करते थे। पर जब से बहू १९१० में पं० कृष्णकान्त मानवीयजी के सम्पादनत्व में आया वह भी दर्जा यत्न हो गया क्योंकि मानवीयजी ने देखा एवं समाज के उठने काम एक साथ साथ लिये थे कि अम्युदय की किसी प्रकार की सहायता नहीं कर पाने थे। परिणाम यह हुआ कि कृष्णकान्तजी ही को सब कुछ भुगतना पड़ता था। जब प्रेस का स्थायी व्यय ही बढ़ी कठिनाई से धन जुटा पाता था तो सम्पादन के पारिधमिक का प्रदान कर उठ सता था? यद्यपि मानवीयजी ने कृष्णकान्त जी से यह कह दिया था कि तुम पत्तान राया मासिक आना पारिधमिक से दिया करो मरिन इतना कम पारिधमिक मने ही भी नीबन कमी न आयी। कृष्णकान्त जी के पीछे गृहवी का पुष्टता रखा था।

कृष्ण तो अपना उदाय करना ही था। अतः मनु १० क अन्त में उन्होंने मर्यादा नाम की एक मासिक पत्रिका निकाली जो मास कीपत्री व चंद्रमा से पूरा स्वतंत्र थी। कृष्णकान्तजी का दृष्टी का सब बसाने व अतिरिक्त धरने दिव्य का सुधार निहासने का एक माध्यम हो गया। पहिले ही कानकृष्ण मंडल ने इस पत्रिका पर नामकरण किया और उसका मुखपृष्ठ के लिए निम्नलिखित श्लोक भी चुन दिया जो सदा उसपर छपा रहा —

वीरवीरचिबेके हंमालम्बं स्वमेव तनुं वेत् ।

विश्वविभक्तपुत्राण्यः कतयनं वाचसिध्दि व

परिहठरात्र जगन्नाथ

(हे हंस ! यदि जल और दुग्ध का अन्तर समझने में तुम्हीं प्रमाद करोगे तो फिर और कौन तुम्हारे इस वंश परम्परागत अधिपार का पालन करेगा ।)

यद्यपि 'मर्यादा' की क्रापिक व्यसम्या बनने ही परों पर गही थी तपानि मानकीपत्री की अनुमति से बहु अम्युय प्रेम में ही दपती थी। कम सो जानत है कि गम्भीर होने का भी मासकीपत्री बड़े विकीनप्रिय थे। जग ही पत्रिका का प्रथम अंक निरन्तर उगहोंने ईन्तु ज्ञान से बड़ा कृष्ण अम्युय प्रेम से मर्यादा निरन्तर गयी। कृष्णकान्तजी ने तुम्हल उतर दिया ही पर बहु स्वामी होगी और बहु देश और समाज के त्रि में होगी। १० वय तक कृष्णकान्त जी ने उदरा भी बड़े टाट-बाट से मग्गादन किया। एक पात्र दो बच्चों को दूध विषाये और ददेष्ट दूध विषाये की कटिन्ता से हो पाता है परन्तु मासकीपत्री मगरात्र वर भी तो संपादण काम करने के लिए जा कपदुनाता रहा था। उगहने १६१७ में विगतों की दगा मुगलान व विर एक देवना बनारी और उसके लिए एक कना व। रपाता की। रकुके विवे ● तो

एक मुखपत्र की नितान्त आवश्यकता थी। अतः सन् १९२१ में उन्होंने अमृत्युय प्रेस स ही साप्ताहिक क्रिमान निशासा और कृष्ण कास्तजी को उनका सम्पादन बनाया। इसीसे प्रायः समस्त चर्चते हैं कि मासवीयजी को उनकी कर्मछटा एवं योग्यता पर कितना मरोशा था। उस्ताद का एक शेर याद आता है :—

मुझने कहता है ये एतनाक बना कर कासिम  
हम सिबा तेरे बिनी व भी सितम करते हैं ?

अब प्रायः पर तान यथार्थ क दूध पियाने का भार पड़ गया जिसमें एक अमृत्युय रोज तड़के उठकर दूध के लिए चिलनाटा था। पर प्रायः की शक्ति भी तो सीमित थी। वह सुरतम तो थी नहीं। अतः बारी के बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने दस वर्ष तक बड़े छाड़ स पार्सी-शोमी मर्यादा का गाव से लिया। मर्यादा के प्रकारान के आरम्भ में मासवीयजी की हंसी में कही हुई बात (मर्यादा अमृत्युय प्रेस स निकल गयी) एक दूसरे अर्थ में अरिचार्म हो गयी।

लौकिकानां हि तापुनात्मनं बान्धुवतते ।  
अधीनां पुनरात्मानां बाधमर्षोऽनुयाचति ॥

भवभूति

( सांसारिक गाणु लोग अथ वा अनुसन्धान कर बाद में कुछ करते हैं। परन्तु अवि लोग आग होने वाली बात को पहल ही स कह देते हैं। )

शिवप्रसाद गुप्तजी के पास जाने पर बाबू सम्पूर्णानन्दजी एवं प्रेमचन्दजी ने उनका सम्पादन दो त न रूप या उनसे कुछ अधिक किया। फिर बह-बन्द हो गयी।

मीटर

सन् १९०५ की बात है। उग गाणु साईं कदम ने बंगाल के दो टुकड़े कर दिये थे। इसका राजनीतिक विवेचन इस समय का ध्य

मही है। इतना बढ़ना पर्याप्त होगा कि 'लार्ड कठन' के इस कुटुम्ब में सोने हुए, भूने 'राजस बंगाल टाटगर' बने जगा दिया

लोने हुए उनकी जपाना, एक बीरता थी  
जागे हुए उनकी मुलाना एक काम था।

सम्पूर्ण भारत में, एक बीने न हमारे कान तर हम अपमान का बदला सने की प्रतिश्रिया मनक उमी।

पाराएनं पुरावाय मूर्धनिमपिरोहनि ।  
स्वपारेवापनानेर्नि हेरिनात्तरं एव ॥

माप रिशुनायवम

जब पूरा ऐसी मानाउ पर पढ़ने न उड़ कर सिंग पर पढ़ जाती है तब यदि अरमान होने पर मनुष्य पूरा बग रह जाय ता वह पूरा में भी अपिक गया गुजरा है। तब स्वामिमात्री भारतीय अपा कउ इस लड़क को पी मान ये। इसका परिणाम जो कुछ हुआ सब जानल है।

देश की ऐसी परिस्थिति में एक दैनिक पत्रिका पत्र निरामा जाना अनिवाय हो गया। प्रयाग के दैनिक साहर के प्रकाशन के पीछे एक छोटा-सा इतिहास है बिनसा टपनस मापर्वय जी की पत्रकारिता के मर्म को समझने के लिए, धारणा है।

सन् १८८२ के पहिले की बात है। पहिले काँग्रेस में मृत्यु कार्याली 'इतिहास अतिविदन काम का अदेसी में एक सामाजिक पत्र निरामने थे। प्रायः काँग्रेस अन्त तक वही इसका सम्पादन करते थे। उस पत्र का नाम प्रबन्ध ही उहीं का करता पड़ता था। कुछ ही कुछ थे। उनका लिए यह बर्तन लगता थी।

इस मन्त्र का स्वीकार था हुआ कि व सम्बन्ध हो गए और वह का सम्पूर्ण भारत अन्तर्नि मान सिन्धु के ऊपर छोड़ दिया। इस प्रयाग सन् १८८२ में मापर्वय जी न इसका सम्पादन करने हुए

में से लिया और सन् १० तक बढ़ी लगन से करते रहे। तदनन्तर १८१० में उन्होंने उक्त पत्र को परिष्कृत अयोध्यानाम जी की सीप दिया। सन् १८१२ में उक्त परिष्कृतजी व देहावसान के पश्चात् ससनक के बाबू गंगाप्रसाद वर्मा उस ससनक से गये। वह उनके पत्र एडबोकेट में मिला दिया गया।

इसके थोड़े ही समय बाद श्री सी० वार्ड० चिन्तामणि मद्रास से प्रयाग आये और सीधे मामवीयजी के पास गये। थोड़ी ही देर बातचीत करने बाद मालवीयजी समझ गये कि यह तो अन्तःप्रसू स्रवहून ज्वरप्रिव बनस्पति उम धर्मी कृष्ण के समान है जिसके भीतर अग्नि दहकती रहती है, यद्यपि ऊपर से नहीं पता चलता। मामवीयजी बड़े गुणगारी थे। उनमें यह बहुत बढ़ी निरोपता थी कि गुणाजनों को चुम्बक पत्थर की तरह आकृष्ट कर अपनी ओर खींच लेते थे। भवभूति के शब्दों में आयोधातु यदत् परिलपुण्य-स्वान्तराक्षस (जैसे छोटा सा चुम्बक-पत्थर का टुकड़ा सोहे को अपनी ओर खींच लेता है) चिन्तामणि मालवीयजी के अतिथि हो गये। वे दिन मुझे अच्छी तरह से याद हैं।

जब चिन्तामणि मामवीयजी के अतिथि थे तो उनका पुराना मौकर 'बैनिया' चिन्तामणि के भोजन इत्यादि का प्रबन्ध करता था। दिखता यह था कि चिन्तामणि हिन्दी बिलकुल नहीं बोल पाते थे और बैनिया उनसे भाषा नहीं समझता था। परन्तु दरारों से और टूटी-फूटी हों 'मही' 'अच्छा' से मन बुरे काम चल जाता था। आगे चल कर जब कभी चिन्तामणि मामवीयजी से मिलते जाते और बैनिया गामने पढ़ जाता तो दोनों से दरारों से अवश्य पूछते 'बड़ी अच्छा हो ? फिर बैनिया दरारों से पूछता 'अब हमारे देश का भोजन करना गीण मपेउ की नहीं ? का खरी गये मिमाय जुपाय क गाउ हो ? यह दोनों तरह से दरारोंवाली देवने सावक होती थी। चिन्तामणिजी हाथ और गिर टिमाएर बड़ा दने कि हूँ

सीधे गये। फिर बेमिया कहता "पान तो अब बहुत म्याप लगेत।" इस पर चिन्तामणिजी विनम्रतापूर्वक हँस दते थे।

चिन्तामणिजी बड़े विनोद-प्रिय थे। थोड़ा विपयान्तर होता है परन्तु चिन्ता इस कहे जी नहीं मानता। उस समय चिन्तामणिजी कौंसिल के मेम्बर थे। कौंसिल के सामने जर्ज मंत्री मिस्टर ब्लंट बबलट पेश कर रहे थे। इनकी जिम्मेदारी के पद पर भी वे भाराम सु जिम्मेदारी चिन्तामा जानते थे। उनका मन्ट्रेंटेगियट उनके सामने पढ़ी-पढ़ाई रसोई रंग देना था और वे उस कौंसिल के सामने परग्य दत थे और चिन्तामणिजी से मेम्बरों का मन बहनाये रहते थे। इसी की राई ग्याने थे। परन्तु चिन्तामणिजी उन क्षणिया म नहीं थे जो सुपभास, परगी हूई पाप्मी को सीधे स ना में। बज्र पग होते ही चिन्तामणि ने बहुत स झारड़ा पर ठर्क झारम्भ कर दिया। मिस्टर ब्लंट को जब कोई जवाब न आया तो हँस कर बोले Mr Chintamani, I can supply facts to you but not brains चिन्तामणिजी से आपकी तो पाँके ट गनठा है मस्तिष्क नहीं। चिन्तामणिजी ने उभा प्रकार तुरन्त मंह-तोड़ जवाब दिया Mr Blunt, I don't expect any thing from you which you don't possess" (मिस्टर ब्लंट से आस उस चीज की आशा नहीं करता जो आपके पास है ही नहीं।) मम्बर माग हम पदे और ब्लंट साहब र्भेन गये। बात गम्भ हो गयी।

चिन्तामणिजी स्वयं एक मिडलम्ल पत्रकार थे प्रथम आने पर इंग्लिश पीपुल नाम का एक मातामि पत्र निकालन सग। मानवीपत्री ने इगमें उनरी बड़ी म्गालना का। ब उगमें बराबर मग विगत ग्। बम में दय सीहर निरता तो इंग्लिश पीपुल' उगमें मम्मिनिग ले ग्ग। आर की सीहर' क प्रबब लूट पर दि सीहर क सीधे रिता र्ग्या है "Incorporating the



Indian people ( जिनमें इण्डियन पीपुल सम्मिलित है )

मालबीयजी की प्रेरणा एवं उद्योग से प्रयाग में २४ अक्टूबर सन् १९०६ को विजयादशमी के पुनीत दिन सीडर बड़ी सज-पज से निकला। उसका ध्येय था —

विषकोर्षेण विगाह्यते नयः कृतशोकः पपत्तामिवाद्यथा ।

त तु तत्र विप्रेबहुतमः तनुपम्यस्यति इत्यथारमः ॥

मार्चि किरातानु नीय । २ ३

( राजनीति एवं मोक्षयात्रा कठिन होने पर भी उस असाराय के आसगाहम के समान सुखम है जिसमें घाट बना दिया गया है। दुर्लभ तो यह है जो उसमें घाट बना देता है और मनुष्य को उसका कर्तव्य-पथ बताता है ) मालबीयजी ने इसी हेतु से 'सीडर' की व्यवस्था की। उसकी नीति अर्थात् तब में समझ है यदि माई अरविन के शब्दों में बर्नी जाय तो यह भी

Patience in politics as in hoot laces will untie many knots which haste will only tend to confound and confuse "

( राजनीति में धैर्य — जैसे खूने के फीते में — बहुत सी मुश्किलों को सुलभ देता है जो उतावली करने से और उलझ जाती है )

सीडर के निकलने पर कुछ लोगों ने हम पर बड़े-बड़े फिकरे किये। कोई The Leader का दफिहर कहता था। कोई कुछ कहता था, और कोई कुछ ।

परन्तु सीडर अभी पैदा हुआ था पर कमजोर थे

“जोड़ में ताजके घण्टपार का तिरया क्या है ।

कान कुछ तर तो नहीं है कि उम्र भी न लड़” ॥

साहित्य

उम पर कनेन कर्णिकार्या आदी और गण गयीं ।

उमरा इतिहास जो मानवापजी न सीहर में नयी मर्गोन मगने  
 क समय बचन किया था उस हम म्यां का त्या उद्वृत्त करन  
 है —

सीहर क स्थापित हान क पत्र एक शक्ति ममाचार पत्र की  
 इमाहाराद में बड़ी भावस्थरता थी। मन् १८० ई० म स्वर्गीय  
 पण्डित अयोप्यानाय जी ने शिष्यन हृन्स्ट निवाला था और उस  
 पर बड़ा धन व्यय किया। वह पत्र तीन वर्ष तक बना और अमा-  
 व्ययन उसक बाब बन् हो गया। सीहर क स्थापित हान का एक  
 यह बाण्ड भी था। मैने अमानत छोड़न का निश्चय कर लिया  
 था और उस समय मेरा यह बिचार था कि मात्रजनिक बापों म  
 मा अलग हा बाऊं किसम हिन्दू विज्ञविद्यालय का काय गीक लख  
 स कर सऊ। उस समय मैने म आया कि यदि मै मात्रजनिक  
 जीवन स बिना एक प स्थापित किय अलग हाना है तब म अने  
 प्रान्त के प्रति करने धम की नहीं निवाहता है। मैकी बाद  
 त्यक्ता हयनी अघिठ और अनिचार्ये आम पदी नि मैने विचार  
 किया कि मात्रजनिक जीवन म अलग हान क परिप्त एक पत्र अलग  
 मही स्थापित हा जाना चाहिये। मैने इसका छ मित्रों म त्रिक  
 किया और उहाने प्रमप्रता म उमर विव घन द किया। आगम्य  
 मै इसक विग शीर्षम ह्वाग मरदा जग। मरदा मरदा एक शक्ति  
 पत्र बनाने के निरु बहूत्र कम था। मरिन मुन्दे अतन मित्रा पर  
 विचारु था जितने सहायता करन को कर किया था और बहु  
 आशा मरन भ हई। साहर म निरव्यय नाब ग वग की और  
 प्रान्त की बड़ा मगन म मरा की है। मैकी अर विचारों म मग  
 मरमेद मग है और मरदा मरिन उमर बाण्ड क उमरी मरा में  
 मलेह नहीं था मरता। साहर ही बोरे मग पत्र हो जो घाने  
 मित्रों क विचारों को मारे प्रान्तों पर प्रकट कर मर। की शक्ति  
 पण्डि और पण्डित हृन्स्टम मैने सीहर की अर अ

दोनों में बाँटकर उसे अपना का सौभाग्य प्राप्त किया है। लीडर के बढ़ते हुए प्रभाव का और उसकी सेवाओं को सारे प्रान्त में स्वीकार किया है। आपकी याद होना जब अमहयोग आन्दोलन का आरम्भ हुआ तब मेरे मित्र पण्डित मोतीलाल नेहरू ने इण्डियन पेंडेंट पत्र अपनाया जिसमें वे अपने विचारों को घोर 'लीडर समतमे' रखने का विचारों को फँसा सकें। उन पर दो लाख पचास हजार रुपया खर्च किया गया जिसमें एक लाख स्वयं पण्डित मोतीलाल ने दिया और पचास हजार श्री जयकर ने दिया था। सरकारी अधिकारियों ने भी यह बात स्वीकार की कि लीडर सार्वजनिक प्रदर्शनों का 'यापोषित दृष्टि' से विचार करता है।

लीडर' निवृत्त होने का तो निवृत्त गया, श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त और श्री चिन्तामणि उसके सम्पादक-मण्डल में नियुक्त हुए, पर 'लूट' का बल बढ़ता गया। उसकी आर्थिक व्यवस्था का टूटा अभी दृष्टा से जम न पाया था। बिपत्ती आसत थे कि

अधिराजिच्छिराम्य तत्र  
 प्रवृत्तिप्यद्वन्द्वमूलकात् ।  
 नवनरीहृत्पतिचिन्त  
 रतरतिर मुक्ता- ननुदुग्म ॥

शान्तिदाग-भासबिबान्निमिष

( जो लघु अभी राजमिहासम पर बैठा हो और जो प्रजा के हृदय में आनी जड़ न जमा मका हो बड़ मय सदाय हुए पीरों के गमान गरमना न उगाटा जा गकटा है । )

जन्म मने के पय ही दो बय क सीडर म्रुपयन समाप्त होने पर आ गया। जब बर में कयय पीय हजार रुपया खर्च रू। (प्रीतिम न्नाय राये ग ही ता यह आरम्भ हुआ था) तो दान्दरेक्यों ने उसकी अल्पता किया कयन का न्नाय कय किया। पर मात्र

बीजनी के मुख से इन शब्दों का निरन्तर सचि 'the Leader will no die' (साहब नहीं मरगा) शान्तरुकरा में मयी प्रेरणा और गूर्पन आ गयी और बना टल गयी। इसका श्रेय पत्र के जामदाता मामबायजी का है। जइसे मजबूत हान भी नही सीहर का नब प्ररोह उग्रहन उग्रहन बन गया है। छन्दन-उग्र सीहर दिन हुआ गन चौपुना ठप्रति करता गया गया।

पण्डित मोतामान मेहूर मुख-गाम विमिष्ट के अन्त्येष्ट भीहर के मजबूत शेरमन हुए। उनका बाण पण्डित महनमाहन मामबायजी दन दरे तक शेरमन रहे। नदन्तर मर मजबूतहापुर गय थी मजबूतमन् विनहा इत्यादि मनक मज्जान्त व्यक्ति इसका शेरमन हुए। इस सब के हास हुए सीहर के प्राण प थी भा० बाई० बिन्तामणि और पति इत कुच्छगम मरुता। ये श्री दोना व्यक्ति उमक पुष्पगण कर्तापति थे। मिनरर काम करने जान थे।

कभी-कभी बिन्तामणि जी पंग काम करत र जात थे। पतिमी कुषार् उन् १९५१ को बिन्तामणिजी का देशगान हुआ। ३० जून को ३ बजे रात्रि को अगल तिन के सीहर के लिए अग्र मग मिया कर सोच। बही उनरी महानिशा थी। उनरी मुसु का समाचार और मृत्यु के बाण दा पते पूर मिया हुआ मजबूत माम गाय निवास।

बिन्तामणिजी के मरत में पण्डित कुच्छगम मरुता का दाहिना हाथ टूट गया। मामबायजी का एक मात्ररसिग बना गया। ये तो उमम यरी कर्तुणा रि

बाबे बाबा मर गया कर बनगा—

बाबे मर मुन-मुन का तापो बन हुआ।

कुच्छगम मानारी का भा देशन्त मर १९६६ में हा मदा। बिन्तामणिजी के मरत के बाण के उग्र उग्र रहुन मने थे।

जैस—

धर्म तमन्ना बेंतरा है धर्म निगाहें वैपयाम ।  
त्रिभन्नी एक श्रम है बीता जना जाता हूँ मैं ।

मई सन् १९४६ के प्रातःकाल उम दिन का सीडर पड़ रहे थे ।  
चोड़ी दर में उनके सड़के कमरे में भाय लो देखने क्या हैं कि उनके  
पिता सीडर के मुद्रपूठ पर अपना सर टेके हैं । तुरन्त पता चल  
गया कि सीडर को यह उनकी अन्तिम धर्यावक्ति है ।  
और, सीडर

Men may come and men may go  
But I go on for ever

—Tennyson & Brook

( लोग आवें आवें या जाय में हमेशा चलता रहता हूँ )

धर्मन्मा मासवीयजी

जब मनुष्य में बहुत से उत्कृष्ट गुणों का समूह होता है तब  
यह कह सकता कि उनमें कौन सबसे धेठ है बड़ा कठिन होता  
है । गमी अपनी-अपनी प्रपातता के लिए जोर लगाते हैं और  
उनमें इसनी लीचा-लानी होती है कि निर्णायक बड़े असमंजस में  
पड़ जाता है और किसी निर्णय पर नहीं पहुँच पाता । परन्तु यदि  
मुझे निजय करना ही पड़े तो मैं यही कहूँगा कि उनमें धर्म ही  
प्रबलता थी । उनका अन्य गुणों का इस धर्म के मूँडे के नीचे रहना  
पड़ता था । मासवीयजी मुझे धर्म में धर्मन्मा थे । 'जापस्तम्भ'  
के अनुसार उनका धर्म ही व्याख्या थी

'बन्धु धार्या- द्विव्यालं प्रसक्ति न धर्म'

( जिस धार्य लाग बड़े कि अमुक धार्य का करना प्रसंगीय  
है धर्म धर्म है । )

जब महाभारत में धर्म ने मुनिविर से पूछा कि मनुष्य को

विश्व भाग का अनुसरण करना चाहिए तो उमर नुरान्त उत्तर दिया —

वेदा विविक्ताः स्फुणयो विविक्ता  
 मातो मुनिर्वस्य मतस्य विम्वम् ।  
 धर्मस्य तद्विनिर्दिष्टं गुणार्थं  
 महाजनो धने गणं न पश्या ॥

( धर्म क्या है इस पर सब वेदा का मत एक दूसरे से भिन्न है । स्फुणिया में इस सम्बन्ध में मतभेद नहीं है । जिजने भी ऋषि और मुनि हैं वे धर्म की व्याख्या करने-करने बंग से करते हैं । इन विभिन्न मतों के संघर्ष के कारण धर्म का तत्त्व अन्धकार में विभिन हो जाता है । ऐसी परिस्थिति में उसी माय पर ध्यान बाहिये जिनका महाजन ( भग्न सोम ) अनुसरण करते हैं । वही धर्म है ।

यही आरम्भ के उपर्युक्त कथन की व्याख्या है । इसी धर्म का पालन महापना करने से । वे कहा करने से कि

धनुगन्धु ततां वाप्य हृत्स्यं यरि न धारयते ।  
 स्वर्गमप्यनुपपन्नं माणोसो मावनीवनि ॥

( भग्न आरम्भों के मार्ग का अनुसरण यदि मनुष्य किसी कारणवश पूरा रीति से नहीं कर सकता तो वह उस भाग पर ध्यान ही-योदा करे । यदि वह उस धर्म पर है तो उसको धर्म मानना नहीं होगा । )

महाभाग की व्याख्या मामकीदजी के अनुसार इस प्रकार थी :—

दानेकाराणम् । धर्मोयेन कोपम् । पश्याशा-अज्ञानम् ।  
 लोकोत्तमम् । एतन्नि विनि लोकोत्तमम् । स्वर्गम् ।  
 इतीतिर्वचम् ।

( दाम द्वारा रूपणता पर विजय प्राप्त करो । शान्ति द्वारा क्रोध पर विजय प्राप्त करो । धृष्टा से अधृष्टा पर विजय प्राप्त करो । मरुत से असमरुत पर विजय प्राप्त करो । यही समाग है । यही अमृत है । स्वर्ग की ओर जाओ । प्रवररा की ओर जाओ । )

इस अक्रोधेन क्रोध पर एक बात याद आ गयी । सभी जानते हैं कि गुलाब के भगवत होते हुए भी मोतीखाल नेहरू में क्रोध की भावा अन्वयित थी । वे विरोध सह नहीं सकते थे । बानपुर कांग्रेस में जब मासवीयजी उनके प्रस्ताव पर विरोध करने के लिए बढ़े हुए तो मोतीखालजी बोल निश्चिन्त होकर बैठे । परिष्कृतजी ने महाभारत और भागवत क्या सुने । मासवीयजी ने हंसकर सुन्न उभर विषा भाई मासवीयजी ने यदि इन दोनों को ध्यान और श्रद्धा में पढ़ा होता तो ऐसा न करने ।" मासवीयजी चुप हो गए । मासवीयजी के अक्रोध ने मोतीखालजी के क्रोध की जीत लिया ।

मोतीखालजी मासवीयजी के अमित्र मित्र थे फिर भी यह प्रकृति है कि गण तजन्वी दूसरे तजन्वी के तज को गहन नहीं कर सकते ।

कमलेषु पद्मस्योपरान्तु  
 उन्नत प्राथम्यं नृणां पितुः ।  
 प्रकृतिं तमु सा मतीयन्  
 तजन्वाप्यन्तु नृणां यथा ॥

भारति

( बापों के गहन का गुनकर जो सिंह महादत्ता है तो वह किसी पक्ष की प्राथम्य करना है ? नहीं । बड़ भागों की यह प्रकृति है कि वे दूसरे का तज गहन नहीं कर सकते । )

भारति-विद्व विद्विगारय के एक स्माराह में भी धा० बाई०

निम्नामनि ने अपने वक्ष्य में गड़िया बाबू यह कहा था —

If Mr Mohan Das Karam Chand Gandhi can be called Mahatma Mohan Das Karam Chand Gandhi, Pandit Madan Mohan Malaviya can be aptly called Dharmatma Pandit Madan Mohan Malaviya.

( यदि श्री माहनदास करमचन्द गांधी को महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधी कहा जा सकता है तो पण्डित मदनमोहन मालवीय को उपयुक्ता के साथ परमात्मा पण्डित मदनमोहन मालवीय कहा जा सकता है । )

मार्गि बर्माकि बहुत है —

सुनं का बरि का वाप घोडि पाउगुडीरित्तम् ।

मयेन प्रणिपूज्यति न बीर पुण्योत्तम ॥

( अर्थात् अथवा सुरा जो कुछ कह कह दता है और मन्त्रा म पालन करता है वह बीर पुण्य पुण्योत्तम है । )

मानवीयरी एव बीर पुण्योत्तम का गीयरी देवपुन्य आनर कने हमम बीन मा आनर ?

गीयरी निगन है —

म ता मानवीयरी मयात्र का पुजारी है पुजारी कसे म्नुता क बहन विग नर ? जा कुछ निगेल उम म्नुता का प्रतीत हागा मायात्री क म्नुता देने म्नु १८६० की मान में बित्र हागा किया जा बू बित्र बिनापन म म्नुता पत्र जा मी० दिगरी निगमन के उममे या माना जाय कि बरी एडि मी छाद भी म्नुता है उम म्नुता निगम म म्नुता उनर बिना मी देहा कता म्नुता है और एग म्नुता मी देने मापुन छोड म्नुता पाव है मात्र मायवीयरी क क्नुता देहा म्नुता म बीन मुखाता क म्नुता है । मीनता म है



( दान द्वारा कृपणता पर विजय प्राप्त करो । शान्ति द्वारा क्रोध पर विजय प्राप्त करो । धृष्टा से अधृष्टा पर विजय प्राप्त करो । मत्स्य से अमत्स्य पर विजय प्राप्त करो । यही समाग है । यही अमृत है । स्वर्ग का घोर जाओ । प्रकारा श्री घोर जाओ । )

इस अक्रोधेन काष्ठी पर एक बात याद आ गयी । समी जानते हैं कि गुर्गा के भगद्वार हात हुए भी मोतीमाल नेहरू में क्रोध की मात्रा अत्यधिक थी । वे विरोध सह नहीं सकते थे । कानपुर कायम में जब मालवामजी उनके प्रस्ताव का विरोध करने के लिए गए हुए तो मोतीमालजी बोल निश्चित होकर बने । परिदृष्टिजी ने मद्रासमारस और भागवत कथा सुनी । मालवीयजी ने हंसकर तुरन्त उत्तर दिया भाई मालवीयजी ने यदि इन प्रश्नों को ध्यान घोर घड़ों में पड़ा होता तो ऐसा न कहते । मोतीमालजी चुप हो गए । मालवीयजी के अक्रोध ने मोतीमालजी के क्रोध को जीत लिया ।

मोतीमालजी मालवीयजी के अभिन्न मित्र थे फिर भी यह प्रवृत्ति है कि एक तजस्वी दूसरे तजस्वी के तज को सहन नहीं कर पाता ।

कर्मदेव्य कल्पयोधरात्  
 इवतः प्राथम्यं नृपाधिपः ।  
 प्रवृत्तिः शत्रुता महोत्थन-  
 मत्तं साम्यममुर्धनि यथा ॥

भारतीय

( बापों के गहन का मुदर जो सिद्ध महत्ता है तो वह किसी पक्ष की प्राथम्य करता है ? नहीं । बड़े मार्ग की यह प्रवृत्ति है कि वे दूसरे का तज सहन नहीं कर सकते । )

बापों की विरक्ति का एक उदाहरण में श्री श्री श्री

विश्रामणि ने अपने वक्ष्य में पहिला वाक्य यह कहा था —

If Mr Mohan Das Karam Chand Gandhi can be called Mahatma Mohan Das Karam Chand Gandhi, Pandit Madan Mohan Malaviya can be aptly called Dharmatma Pandit Madan Mohan Malaviya.

( यदि श्री महात्माज कर्मचन्द गांधी को महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गांधी कहा जा सकता है, तो पण्डित मदनमोहन माधवदास को उपयुक्तता के साथ धर्मात्मा पण्डित मदनमोहन माधवदास कहा जा सकता है। )

महर्षि वास्तीवि बहुत है —

शुभं वा यदि वा पापं धीरि पातञ्जलीरितम् ।

एतेन इतिगुणानि स बीरः पूर्यतेनक ॥

( भण्डा अथवा बुध जो कृप बह बह दंडा है और सत्यता में पानन करता है वह बीर पूर्य पूर्योत्तम है । )

माधवीयत्री तम वीर पुण्यात्मक वा गांधीयत्री शत्रुच्य आदर करे तम वीर मा आश्चर्य ।

गांधीयत्री विगत है —

मे ता माधवीयत्री मगगात्र वा पुत्रायि है पुत्रायि बने म्पुत्री क बचन विगत मर ? जो कृप विगोता उम कपूत मा प्रतीत होना माधवीयत्री क दगल मैने म्पु ?-६० की साथ में बित्र द्वारा किया था बू बित्र बिवादन म म्पुत्रिया पत्र जा मी० टिावी निवावने क उमम या माना जाय कि बनी एरि मै घाट मी म्पु एर है उंन उनके विवाय म त्प ही उनक विचार में देव्य बना कला है और हम त्पत्र म मैने माधुय धीर म्पुत्रि पाय है कात्र माधवीयत्री के कृप दगान्ति म वीर मुरारतन क मरणा है । नौकामन ३ कर्म

करके आज तक उनकी देशभक्ति का प्रवाह अविच्छिन्न चलता आया है। काशी-विश्वविद्यालय के मासवीयजी प्राण है। का० वि० विद्यालय मासद्वयजी का प्राण है। यह नरधीर हमारे लिये दीर्घायु हाँ विनायक होते हुए

माहन दाम गोधा

७-६-३१

मोतीमालजी ने ता थीमद्भागवत और महाभारत में मासवीयजी की निष्ठा को हसी मजाक में उड़ा दिया परन्तु मासवीयजी का यह उत्तर कि यदि भाई मोतीमाल इन प्रार्थना को पढ़े होते तो पंजाब न कहत बड़ा सारगमिण है। इतना ही नहीं कि य अमूल्य प्रथ भारतीय संस्कृति के समुच्चय प्रतीक है बल्कि प्राणीमाप के लिए कल्याणकारी है। मनुष्य के जीवन में कोई भी बिपय ऐसा नहीं है चाहे बह गजनीति हो अथवा सामाजिक भीतिक हो अथवा आप्यात्मिक जिस पर इन दोनों ग्रन्थों में मानवता को पय प्रदर्शन न किया हो। मासवीयजी थीमद्भागवतगीता के इनने मन्त्र ध कि काशी टिन्डू-विश्वविद्यालय में वे नियमित रूप से गीता प्रवचन करते थे। और प्रत्येक एकादशी का आठ स कासज अथवा गंगुत मन्त्रविद्यालय के विश्वीण हाम में वे स्वयं थीमद्भागवत कथा कहने थे। विश्वविद्यालय के बहुत से प्राध्यापक एवं छात्र बड़ी रति के साथ उनकी कथा सुनते थे।

मासवीयजी ने अनेक एक पत्र में जिनके संश्ल में इस संस्मरण माता में उद्धृत कर चुका है। निम्न था कि "बी० ए० पाम हान के बाद मरी बड़ी "बडा ह" कि बाबा और रिता के ममान में भी कथा कहें और धम का प्रचार कर। सुवायस्था में उनका हृदय में पडा हमा पर बीज काशी टिन्डू विश्वविद्यालय में संस्कृति और पत्रकित हया। स्याउ-मरी पर घटकर कथाबापक की बेरा-भूपा में मासवीयजी अमृत की प्याँ बनने लगे। उन प्रकार उम्होंने शौरा

में घपने हृदय में मजोई हुई साय का पूरी किया ।

गीता-श्रवण ही अब नष्ट विन्वविनात्म म जारी है । कोई म कोई विद्वान निर्पामन रूप म बड़ी गीता-श्रवण करना रहता है । श्रीमद्भगवद्गीता का इतना बड़ा मन्त्र यह कम भूय सफ़टा है कि बहु ब्राह्मण है । मानवीयता गीता म प्रतिगान्ठि मदापारी ब्राह्मण क संगु को कम भूय सफ़न से ?

तथा समस्तप शीर्षं तास्मि राजबभेव च ।

ज्ञानं विज्ञानदानिषयं ब्रह्मस्य स्वभावस्य ॥

श्रीमद्भगवद्गीता १०७

( भक्त करण का निष्ठा दन्वियों का दमन बाह्य नीतर की शुद्धि घम व मित्र बरु मजन करना समाभाव मन इन्द्रिय और शरीर की मरमता गान्त-विषयक ज्ञान परमात्ममन्त्र का अनुभव भार भास्त्रिक बुद्धि म ब्राह्मण व ग्यामाविक कर्म है । )

मानवीयता में गीता व उपयुक्त इत्यार म कथित तत्र शान्त की ध्याना कावन बनार हुए एक मजन म उ-व्यक्त करनी है । व मजन म प्रकार है -

घट घट । बाराह राग कर है ।

मन कर बंद

नृत मन बाण ।

रुम बावन हन,

मन कर धन ।

ओर मन बाण

बुद्ध मन मेन ।

मन बरान्त मन्

बरी तपो तत्र र ।

मानवीयता इन सब कर्मों का करने जीवन में सम्मान वाली

दूते थे। आस्तिक्य उमका इतना प्रबल था कि उसमें वे कभी नहीं  
 गत थे। प्रयाग तो उनका जन्मस्थान था ही। पहिले वे मारती  
 वनवास मकान में रहते थे। बाद में वे जाके गउन बास अपने  
 गम में रहने लगे। जब कभी उन्हें परदेश जाना होता था  
 -और वे आये दिन परदेश जाते थे-तो स्थैर्य जाते रक्त अपने  
 गहर वाम मकान में आत थे जहाँ उनके बुद्धदेवता राघावृष्ण  
 की जोड़ी प्रतिष्ठा थी। बड़ी अपने सम्पूर्ण वन उतार, एक  
 शीला गुरुणा पहल बड़ी मक्ति व देवता व सामने मह मन्थन  
 ने थे। मन्थने वे तनिर भी उनाबली मरी करत थे, बाहे बितने  
 ही आबध्यक बाय व निर व परेशा जा रहे हां धीर पाठ इन सब  
 कामों का विधिपूर्वक करने में गाड़ी पूजने की शीघ्रत क्या न जा  
 प्राय। मन्थी निष्ठा उन्हें राघावृष्ण में थी। यह निष्ठा उनसे  
 निर थी।

मानवीयत्री के अनन्य भक्त बागी हिन्दू-विरवविधायक में मदा  
 उनका साथ रखने वान थी वी० ए० मुन्धरम् मानवीय पत्रिका में  
 विगत है

१९१५। बताने का दृश्य है जहाँ कि ६२ वर्ष पूर्व महासना  
 न घाटा गर्भवस मापण दिया था। एक नौवसान पक्षवारी  
 बागी मन्थिर व ममण पणुवमि गोने व म्भग्ध में अगने प्राणों  
 की घात्री मगाना है। आज उगक वमणन वा ७५ वीं निबम है।  
 पक्षवारी राममद्र आनी प्रतिम पदिया गिन र्हा है। उग पर  
 मृगु का आदरण वमण गद रण है। मानवीयत्री कसरत  
 पपाग्न है। आज पक्षवारी की मृगु-शय्या के निरव वरकर अम्यन  
 मिशान व माप दुर्गा म्भगत्री का पार करते है। पाठ ममाम  
 करन पर आज उग पर नंदावन लिदहन है। निष्ठाप्रम्व ब्रह्मवारी  
 आनी प्राणे गोने म्ना है-उमर्वा प्राण र्हा हानी है। कसरता  
 म्भ मानवीयत्री की आदर्यवना मक्ति पर दीनों-गत भ्रगुमी

का सत्ता है। गुप्तत्व उम करानी को सुनकर परिष्कृत सामर्थ्य की  
 एतदा म अत्यधिक प्रभावित होने है। भगवान् अपने भक्तों का  
 उाब नहीं छोड़ते - सामर्थ्यही का कथन था।

धामदुमगवर्गीना के भक्त, मानवायजा प्रायः कहा करते थे  
 कि -

सिद्ध भवति धर्मादा शब्दद्वानि विमलानि ।  
 बीनेव प्रतिबानीहि न मे भक्त प्रणयनि ॥

गाना-६२१

( वह मीमा ही धाममा हा जाता है। यह मन्त्र छाने काफी  
 शक्ति का प्राप्त होता है। हे भक्तु म ! तुम निश्चयपूर्वक सुख जानो  
 कि मेरे भक्त का कभी नाश नहीं होता। )

तय मना श्रद्धावागी गमनत्र की मृत्यु कम हा मवर्ती थी ?  
 और यदि वह मर भी जाता था उमता मरा नहीं हा मन्त्रा था।  
 मर के पुत्र है वही निरन्तर-बैदे-ह्वाय।  
 ही उक्त इनका है बहीर कल्प जाती है ॥

धामदुमगवर्गीना पर मावर्गीयकी की धर्मीय भावना थी।  
 मन् १६३६ म परिष्कृत धार्मीयत्र इतनाम 'नज्ज' योगरथा न  
 भगवद्गाथा का उद्घरण म कथामे मवर्ती क नाम म निर्दि-  
 त्ति में अत्रुवाव किया था। उम उमने सामर्थ्यही की मन्त्र  
 म समरण किया था -

० कवाराव के कवाराव कावरी  
 ० कवारावोव मवराव कवरी !  
 हे निदाने कावरी की कवरी म कवरी  
 कावरी के कवाराव वरे में वरे कवरी !  
 हे कवाराव कवरी कवरी है कवरी  
 कावरी कवरी का कवरी कावरी है कवरी ।

माँसिसे रोये जलन का मैं मवाज  
 तेरी जन्मे दिल में है जस्वा तराज ।  
 दिवुषों का रब तेरे दिल में है  
 तेरा सामी कौन इत मरुफिल में है ?  
 तरा झंझा तेरा मनवाला 'मजर'  
 तिल से तुम्हको चाहने कामा मजर'  
 जानता है राखदले-रुच तुम्हे  
 जानता है त्रात गाने-रुक तुम्हे ।  
 इतलिये कामर छदक तब हैनबितार  
 तेरो खिरमत में तेरा मरहत गुजार  
 मर करता है ये रखाणी बखाम  
 खिरये जालेव साकाली बखाम

मालवायजी न दन शरों में उम अनुवा" का आदर किया :—

मेरा विश्वास है कि संसार में भगवद्गीता के समान मक्ति  
 और साम्बिक बर्ष की शिखा ने वाली कोई दूसरी पुस्तक नहीं है ।  
 नमोना जितना ही इसका प्रकार हा उतना ही मनुष्यजाति का  
 उन्नत होगा । गीता का अनुवा" संसार की अनेक मापाओं में छप  
 चुका है । उर्नू माया में भी इसके कई प्रशंसनीय अनुवाद छप चुके  
 हैं । मेरी राय में पठित योगीराज ( उपनाम मजर मोहानपी ) का  
 किया अनुवा" जिनको उर्नूने बखामे रखाणी व नाम से प्रकाशित  
 किया है बहुत ऊचा स्थान पाने व योग्य है । मेरे बिचार में जब  
 तक उर्नू माया रर्गी तब तक यह अनुवाद आदर क साम पड़ा  
 जायगा । और ऊर्गी हिन्दुस्थान में और विशेषकर पश्चिम के  
 प्राणों में ज्ञान दिवुषों और सोड़े समय के बाद हुआ मुमम  
 माना में भी आप्वागिक ज्ञान और साम्बिक जीवन पंथाने का  
 बहुत गुम्बर मायन हागा । "म अनुवा" को प्रकाशित कर पन्डित  
 माँसाराज ने मनुष्य जाति की जो सेवा की है उगरे लिए वे सम्यबाद

और सम्मान का पात्र हैं। मैं आशा करता हूँ कि उद्ग्र-साहित्य का जपयु-पंक्ति योगीश्वर की इस नूतन कृति का उचित आदर करेगा।

कयरी

१२ जनवरी सन् १९३४

मदनमोहन मालवीय

पंडित यासीराज के उद्ग्र-ग्रन्थ एक मामवीयजी की उस पर टिप्पणी का बिस्तार से उत्पन्न इस उद्ग्र-ग्रन्थ में बिना कि हिन्दी के हिमायती और प्राण होन हुए मामवीयजी उद्ग्र-के प्रति अग्रहिष्णु नहीं थे बल्कि उनका उचित आदर करते थे। इसी प्रकार मुसलमानों में भी बिना उदारचेता व्यक्ति हो गये हैं और सब तक हैं जो हिन्दी का आदर करते हैं। प्रत्येक इमादावाती मुसलमानों से कहते हैं —

रोस्तो मुन कभी जिमी के मुजानिक न बनो।

बात मरने के ललेया कि ये भी काम की बात ॥

ब्राह्मण्य, मासवीयजी की बारीकी थी। इनके पिता प्रजाप श्री एन परम भागवत बंधु थे। इनके पितामह पण्डित प्रमथरी मन्ना बाबा बमरा एक ब्रह्मचर्यम मदापारी ब्राह्मण थे। वे लोग संयम धन महातुमाव भारती सम्पूर्ण धर्म-सम्पत्ति मासवीयजी का दे मय थे। संस्कृत और पाश्चात्य साहित्य एक दर्शन के प्रमाण बिना अज्ञेय के वाचन बाप के बहूत बमपारी थी थी० एन० मेहता निगत हैं —

" .. he stands as a block of granite in the midst of a mass of shale and conglomerate. His beautifully modelled body every limb tingling with pulsating harmony within which has known the impulse without the prolonged asperse



साहित्ये रोरे जगन् का नै नवाज  
 तेरी धरने दिल में है जम्हा तराज ।  
 हिन्दुओं का बर्ष तेरे दिल में है  
 तेरा सानी कौन इत महच्छिल में है ?  
 तरा घडा तेरा मतवाला 'नजर'  
 दिल मे तुम्हरो चाहने वाला बजर ,  
 जानता है राखराने-हुक तुम्हे  
 मानना है खाल जाने-हुक तुम्हे ।  
 इतसिये बासुर धरक सर ईनखिसार  
 तेरो खिदमत में तेरा महहत गुजार  
 जय करता है ये रजबानी इनाम  
 जिरये जावेर साधानी बतान

मासवायजी ने दन शब्दों में उस अनुवाद का आन्द किया —

मेरा विद्वान है कि संसार में मगबदगीता के समान मक्ति और साहित्य बर्ष की गिना देने वाली कोई दूसरी पुस्तक नहीं है । समया जिनना ही इसका प्रसार हो उतना ही मनुष्यजाति का उत्थार हागा । गीता का अनुवाद संसार की अनेक भाषाओं में छप चुका है । उर्दू भाषा में भी एक बर्ष प्रशंसनीय अनुवाद छप चुके हैं । मेरी राय में पंडित योगीराज ( उनाम बजर मोहानवी ) का शिवा अनुवाद जिसको उन्होंने बसामे रजबानी क नाम से प्रकाशित किया है बहुत ऊचा स्थान पाने व योग्य है । मेरे विचार में जब तक उर्दू भाषा जर्गी सब तक यह अनुवाद आन्द व साम पडा जायगा । और ऊचरी हिन्दुमान में और यिरोपकर पश्चिम के प्राणा में जरागं हिन्दुमा और घोड़े समय व बाद जकारों मुसल माला में भी साध्यागिक ज्ञान और साहित्य जीवन र्पाने का बन्ध मुन्दर पावन हागा । सम अनुवाद का प्रकाशित कर पंडित योगीराज ने मनुष्य जाति की जो मवा की है उगर विण व धन्यबा

अथम सममत्त ये । अत्र प्रयाग मे उहने मनातन धर्म-ममा वा एव  
 वृहत् अधिवशन किया । दूर-दूर मे बडे बडे दिग्गज पण्डित बुभाम  
 गये । उसमे मानवीयजी ने अष्टुगोदार एक हरिजनों को 'मंत्रदीक्षा  
 देने का प्रस्ताव रक्खा । मानवीयजी ने पहिल ही स मनु तथा  
 अन्य ऋषिया व ऋषियों स प्रमारित एक छाना-मा प्रस्ताव तया  
 कर रक्खा था । प्रस्ताव क रखने हा पण्डितों मे एक कहनका स।  
 मय गया । एक पहिल मे त्रिभवी ज्ञान मे लगाम नहीं थी उठ  
 कर संसृत मे इतना मत कठ शमा हि मानवादीजी करने का  
 मनु स भी अधिव सममत्त है । उनक कहने स हरिजना को 'मंत्र  
 दीक्षा नहीं दी जा सकती । 'तने मे मानवीय जी ने एक धरं एक  
 संसृत मे मयत वाला मे मन्त्रतापुत्रक भागए विधा कि मेने भा  
 एम विनाता के चरणों मे मनु एक अन्य ऋषिया व सिद्धान्ता की  
 समाणा जडा मेरी तुषुड बुद्धि मे आई प्रसुत की है । निरुप ता  
 आव मागों क हाय मे है । जमा भाव निर्णय करेगे 'मना मे पाउन  
 करेगा, पण्डित लोग मे उनरी मधुर एवं विनम्र वाला तथा  
 उनरी समी ता स प्रमारित होकर 'नरे प्रस्ताव का एक स्वर मे  
 अनुमोदन किया और एह प्रस्ताव पास हा गया ।

द्विरेकश पा मानवादीजी दागा दन क रूप मे उर ग्य ।  
 मनु १६ ७ ६० मे महागिबरावि क दिन बागा व दगा-मय धार  
 पर उहने शालार धारिव काय दू मरी को दती एक हि  
 घालेना का । ७ मम गिबाय ७ नमा नारायण ७ नमा भा  
 दन बामुवाय भा-मनों की दीगा दी । मनु १६, १६ ६० मे  
 मानवीयजी नामिन मय । कर्ण पागर्गी क तट पर उहने बरु  
 स हरिजनों को दागा दी । प्रदाण बनरना तथा अन्य मगुं मे  
 मी कई बार उहने दीगा दी । कर्ण-कहा ह्मण्ड भी पाता था  
 परदर मे बरुद जाने थे पर मानवाय जी की बागा स मय  
 शाल ७ जाता था ।

ties of stern austerities his loftiness of purpose that in the words of Goethe speaking of Schiller words disdain to think any thing that was mean

who that has known this Shanker of the 18th century, the त्यागभूति at its highest words fail to detect the Super Brahmin in him Like the peak of Kailas he stands a towering spectacle clothed in the effulgence of white like the primaeval lotus, which nothing can sully a beacon of hope often a portent never

( वह घोंघों और कण्डों के समूह के बीच हृदय चट्टान की भाँति खड़े हैं। उनका सुन्दर सौन्दर्य में वसा मा शरीर त्रिसुखा प्रसन्न अक्षय्य याज्ञ-आत्मिक सामंजस्य से सम्बन्धित है। उनकी निम्नतर रूप की मायना उनसे उद्दय का महान्तर जो पीछे के शब्दों में जिन्हें हम 'दोसरे' के सम्बन्ध में कहा जा कि वह विभा भी मौख विचार का तिरस्कार करता हीन पगा है जिसने इस बीमवीं दशाब्दी के शंकर एवं पराकाष्ठा की त्यागभूति को जाना है वह उसमें 'अति प्राज्ञान' को प्रतिष्ठानत में भूक करेगा। क्यास में शूद्र की भाँति उग्रवय वरों की आत्मा में आकाशदिन वह एक उषी भूति के समान खड़ा है सृष्टि के आरम्भ-काल के समय की भाँति जिन बोद्ध पीछे दूजित नही कर सकती जा अपिस्तर आगा का ज्योतिषुज है हिन्दु निगरा एक अशान्त का कभी नहीं। )

मेवता महोदय का उद्युक्त मन मातृकीयत्री को मूर्त कर देता है। कत उता शब्दों का मने उता का शब्द उद्भूत किया है।

मातृकीयत्री की मम की दशाब्दी की परिधि बढ़ी विस्तृत था। उग्रम गतिर भी संश्लेषता म थी। उद्भू परिश्रमों के प्रति कटकर गलापन धर्मपरिधिर्षा का दशाब्दीर बन्ध गलापना था। म उस

अपम समझत थे। अतः प्रयाग में उन्होंने मनातन-धर्म-ममा का एक बृहत् अधिवेशन किया। दूर-दूर से बड़े बड़े शिष्यज पण्डित बुलाए गये। उसमें मालवीयजी ने अछूतोद्धार एवं हरिजनों को 'मंत्रदीक्षा' देने का प्रस्ताव रखा। मालवीयजी ने पहिल ही से मनु तथा अन्य ऋषियों के बचनों से प्रमाणित एक छान्दा-या प्रस्ताव तय कर रखा था। प्रस्ताव के रखने का पण्डितों में एक तहकूना मालूम मया। एक पंडित ने त्रिमयी ज्ञान में समाप्त नहीं था उस पर संमूठ में इतना नफ बहू डाया कि मानवायजी अपने को मनु से भी अधिक समझत है। उनक कहने से हरिजना का 'मंत्र दीक्षा' नहीं दी जा सकती। तबने से मानवीय जी ने एक संत तप संमूठ में मयत छान्दां में मस्रतापूर्वक मायण किया कि 'मने काय एम विद्वाना के बरगों में मनु एक अन्य ऋषिया के सिद्धान्तों की समीक्षा जैसी मरी तुच्छ बुद्धि में आई प्रमूण की है। निगुय ता मार लागों के हाथ में है। जमा आप निपस करेंगे उसरा में पानन करूंगा पण्डित लोगों में उनकी मधुर एवं विनम्र बानी तथा उनकी समीक्षा से प्रभावित होकर इनके प्रस्ताव का एक स्वर में अनुमान किया घोर बहू प्रस्ताव पास हो गया।

फिर कहा था मानवीयजी दीक्षा देने के बाद में उट गये। मन् १९१७ ई० में महाशिवरात्रि के दिन बार्गी के दरगाहमें पान पर उन्होंने शालग्राम धारिय बन्ध मूँ मरी को मर्दा तक दि पालहनां का २ नमः शिवाय २ नमः नारायण २ नमः मग का बामुदवाय भाति यथा की दीक्षा दी। मन् १९३६ ई० में मानवीयजी काविक गये। यहाँ मोनबरी के गट पर उठाने बहूत से हरिजना को दीक्षा दी। प्रयाग कमरना तथा अन्य जगों में भी कई बार उन्होंने दीक्षा दी। कभी-कहा हुआ है कि यहाँ या परपर भी बन्धाय जाने से पर मानवाय जी की बाग्या गन्ध शान्त हो जाता था।

## मालवीयजी एक सदगृहस्थ

म पिता पितरस्तासु केवमं जन्महेतवः (कामिदास)

डेनिमन के शब्दा में Just as nature packs its blossom in its seedling जिस प्रकार प्रकृति एक छोटे से बीज में पुष्प का समावेश कर देती है उसी प्रकार कामिदास ने उपयुक्त छोटे से वाक्य में मानो मालवीयजी के सम्पूर्ण गार्हस्थ्य जीवन को निहित कर लिया हो। सचमुच मामवीयजी अपने पूरे परिवार के पिता थे। अमर्षी पिताओं ने तो अपनी अपनी सन्तानों को केवल जन्म दिया था। मामवीयजी मनीष भाबुक होना हुए भी एक विचारशील एवं विवर-सम्पन्न सदगृहस्थ थे। भाबुकता प्रायः विवरता को दबा लेती है परन्तु मामवीयजी जानते थे कि

“विवेकप्रधाना भवति विनिपाता घटपुत्रः”

( विवेक-तूट्य व्यक्ति का पतन सब ओर से होता है। )

उनके जीवन का यह मूल मंत्र था। वे बहुत सोच समझ कर काम करते थे। वे बहुधा कटा करते थे—

सहसा विचचीन न द्वियामविवेकः परमापाहापरम् ।

दृश्यते हि विमृशकारिते तुल्युत्पद्यते स्वयमेव साधकः ॥

भारवि — विगताबु नीय

संभूत माण्डिय म बहुत म दनाक एम है जिन्हें विद्वान् मीग मगटरिया बहुत है अर्थात् दिनका मूस्य एक लाग एगया भावा जाय। एसा ही भारवि का उपयुक्त दोहर है। इस सम्बन्ध में एक विद्वान्नी है। भारवि ने ए साध माध का मुसाया। बहुत जाता है। ए माध एक धनार्य बलिब था। बहुत पन्डिता को सगावर शिशुताम-वध मगवाप्य की रचना करा टा था। यह एक प्रकार का पन्डित ( मगवाप्य ) था। शिशुताम-वध की रचना हा जाने

पर उमने उन महाराज्य को अपने नाम से छपवाया। ऐसा सगठा है कि यह नाम केवल आपुनिक युग में ही नहीं गयी जाती है, पहिल भी ऐसा होता था। जब शिशुपाल-वध की रचना हो रही थी तो माप ने ने चाहा कि मारुति का उपयुक्त श्लोक शिशुपाल वध में धा जाय और दगक लिए उसने मारुति को एक साल रुपये देने का प्रलोमन भी लिया परन्तु मारुति ने उस स्थाव को ठुकरा दिया। इस श्रियदन्ती म कोई एतिहासिक तथ्य है अथवा नहीं इस तो संसृष्ट माहिस्यवता ही जाने परन्तु श्लोक सत्य किया है इसमें सन्देह नहीं।

माप तो उस श्लोक को एक साल रुपये म न स छत्रा पर मानवीयजी ने बिना पसा-पीड़ी लखे उन सत्र करने काव्यमय हृदय में संकोकर बजल राग ही नहीं लिया वरन् उग अरन जीवन का एक धंग बना लिया। मानवीयजी के परिवार की परिभाषा बड़ी बिरहू थी। बहू थी बभुपव बृदुम्बरम्। उने ही से यह बलना की जा गकठी है कि उनक छिर पर कितना भारी बोझ था। परन्तु दग गमय तो मैं उनक उम परिवार के सम्बन्ध में कहूंगा जो उनके पर के सोगों एवं कार्मीयों तक सीमित है। औरों का उल्लेख यथास्थान होता ही रहेगा।

बाणी-शिशु बिरहविगमय क धारम्य होन ही—जिसका उल्लेख आगे चलकर करेगा—मानवीयजी का प्रयाग म छत्रा बहन कम हा गया। व कानी पुन में शिशु भारत में मारे मार किरने थे। फिर भी बाधा पोड़े गमय क विद उनका प्रयाग में आना-जाना सगा ही गया था। जर भी व आने थे तो काने धारमीयों के दर्ज गण्य जान थे। परिगार में दर्ज शिगी मदके का त्रिवाट हमा और दर्ज उन शिनों मानवीयजी प्रयाग में गए तो बरातियों क गाप उलोहार म अण्य जन थे। य में एक गपन पर कहा चुका है कि ध्याम परिवार की नामा एक दर्जन मद

किया मासवीयजी के परिवार में ब्याही हैं। उनके परिवार के जितने सड़के ब्यास परिवार में ब्याहे गये हैं उतने विरादरी के किसी एक परिवार में नहीं ब्याहे गये। एक तो स्वभावतः उस परिवार के नवयुवकों में एंठ की मात्रा कुछ अधिक है फिर यदि किसी दूसरे घराने में उनके यहाँ का कोई सड़का ब्याह गया तो फिर क्या कहना है। ब्यास परिवार के नवयुवकों में एंठ तो नहीं थी पर आत्माभिमान उसी मात्रा से भरभरा था। दोनों ही परिवार के नवयुवक सुपटित थे। इतनी बार मासवीयजी के परिवार की बराह हमारे दर्वाजे पर लगी कि बाजे वाम यह समझने लगे थे कि मासवीयजी के यहाँ की बराह हमारी ही गली में जायगी। और यदि किसी बार ऐसा न हुआ और बाजैवाम हमारी गली में घुसने लगे तो उसने बिल्गावर कहा जाता था कि जब की बार ब्यासजी के यहाँ ब्याह नहीं है।

यहूत दिन की बात है। उस बार मासवीयजी के परिवार की किसी सड़क का विवाह हमारे यहाँ था। उन दिनों मासवीयजी प्रवाग ही में थे। हम लोपा का मामूम था कि बराह के साथ मासवीयजी ग्यानार में अबन्ध आरेंगे। हमारी गदरूपीसी की उम्र थी। उस परिवार के नवयुवका की एंठ से थोटा लामे हुए, हम चारों मास्यों के आत्माभिमान से करबट सी। हम चारों मास्यों के दो-बार दिन पहिल भाग्य में शुभ मलाह की अब की बार खरीफ (मासवीयजी) के नामने उस मागा को पराग्य करना चाहिए। पर यद्दिया किस जाय ? यह एक सुभम्या था। हमारी विरादरी में ग्योमार का यह बम है कि जब गय बराती भोजन के लिए पकिस में बैठ जाते हैं तो रती के एक घण्टाय का पाठ आरम्भ हो जाता है और सावन्गाय भोजन परमा जान लगता है। एक मंत्र एक गण नाम पढ़ने है ता आगे बापा मंत्र दुगार परा नाम पढ़ने है। पहिल ता उधी में गुजारकारण भोजन मनबारी की परीसा होती

है। उसी समय किसी बोटे में या झट्टारे पर गिर्या गाना गाती रहती है। गामी गाने की प्रथा तो अब बहुत कम हो गयी है। उसके स्थान पर अब विवाह सम्बन्धी गीत गाये जाते हैं। बहन से नगर तो घर भी खरीर व फरीर घने हैं। उनमें अब तक गामी गायी जाती है। अभी थोड़े ही वर्ष हुए मैं गाजीपुर एक सम्बन्धी की बरात में गया था। उसका वणत मैंने घालहा छंद में किया था। उसका एक पद्य इस प्रकार था —

करी बड़ाई मैं तमपो की हरबन सेवा ना लपार ।

५२ मेहरबान कम परिणाम तोका बोल देय होसिएर ॥

पर बे तिन धीरे-धीरे मदत जा रहे हैं। अन्तु।

जब बराती लोग भोजन कर चुकते हैं सब दानों पत्र एक दूसरे की बिनती करते हैं। पहिल एक पद का कोई व्यक्ति संगठन का प्रशासकत्व स्वीकृत पड़ता है और उसकी हिन्दी में व्याख्या करता है। तदनन्तर दूसरे पद का भा कोई व्यक्ति जवाब करता है। परन्तु कृति भाग भोजन कर चुके रहते हैं यह दंगल बहुत दर नहीं कम पाता। लोग उत्तर गदे ही जानें हैं। परन्तु मानवीयता ज्योतार में सम्मिलित हेलि, इसलिये हम भोग न्य अरसर को हाव से जान नहीं दिया चाहते थे। पर्यटकों का मैं सरसमा था। मैंने क्या कि बिनती में पराम्भ करना असम्भव है क्योंकि समयानाथ के कारण जोड़ बराबर पर दुःख आयगी। बदराठ में परास्त करना बाकि। मगवान् का मर्जी। एक तरकीब सूझ ही तो पड़ी। ज्योतार में सब जगह रूटी के तृतीय अध्याय का पाठ होता है। बरी गबरा बंगम्भ रहता है। बरी हम लोगों को भी बंगम्भ था। मैंने सुभाय दिया कि तृतीय अध्याय का पार गेज में बंगम्भ कर विना जाय और जग ही तृतीय अध्याय समान हा तृतीय का पाठ मुन्तु आरम्भ कर दिया जाय। बात ठीक हा गई। हम पारों भाइयों ने तीन बार तिन के तिरन्तर अध्याय में तृतीय अध्याय को



आपोपान्त बैठक्य कर डाला । ज्योनार का दिन आया । मासवीय-  
जी मे दस-दस सहित पदार्पण किया पंक्ति पर बैठते ही बेइपाठ  
आरम्भ हो गया । जैसे ही द्वितीय अध्याय का अन्तिम मंत्र 'हृष्य  
त्रिपाण मुम्म इपाण सर्व मोर्क इपाण का पाठ उस पक्ष मे समाप्त  
किया मैं विनयावह तो गया ही था । हम धारा भाई 'आणु  
शिगानो वृषमो न भीमो धनापन टोमणइपपणी नाम ( तृतीय  
अध्याय का प्रथम मंत्र ) बड़े ठाट बाट स पढ़ कर चुप हो गय ।  
जी तो धनधन करता ही था कि कहीं ऐसा न हो कि उन लोगों  
को भी तृतीय अध्याय कराइस्य हा पर मगवन् बुया उस पक्ष में  
समाप्त रहा । तब मैंने प्रपन भायों स कडा— जिस सब लोगों ने  
सुना— ऐसा मगता है कि उस पक्ष को यह अध्याय याद नहीं  
है । आपो हमी लोग पाठ कर डालें इतना कह कर यडे बिजयो-  
रहास स पूरे अध्याय का पाठ कर डाला । उस पक्ष के नवयुवक  
भेंगते नजर आये । मासवीयजी बराबर मुमकिया रहे ये । मौजन  
के बाद बिनती ( कविता पाठ ) की गयी आई । तर्कियत ता बड़ी  
हुई थी ही । इसमें मी कुछ अपने उम्कन का प्रदर्शन करना चाहता  
था । क्याकि

ये वेतों को है कुछ रीती हुई क्यों मे बर ।

जिन तरह कोई नहीं जाना उपर जाना है मे ॥

मुन्ना

मैने येन अयनरों पर गफड़ों बार पड़े हुए बाव इजोरों को न  
पड़ संसृत के एक प्रविद्ध इनोर को छोड़-बरोड़ ममयानुक्रम बना  
कर पड़ा । अमयी इपाठ दस प्रकार था :—

म्यवहारो इपमैव मे चरमयनउत्पयो तागमः

मोम्बर्ब निर्गत रातानुम ओषायतो राबला ।

विच विच घडजिन प्रबोदिनवना दि बुडवतों का

रबंर बंरिवादिनुम्नबुलोवृत्तिमेविभु बं ॥

( राबण जब राम को युद्ध में किसी तरह न परास्त कर सका तो इस प्रकार बिनार करता है पहिन तो यही हमारे लिए सज्जा की बात है कि किसी को दुःखना माहूस हो कि वह हमसे शत्रुता करे और फिर ये मपस्वी ( राम-भक्त ) और वे लोग संका में पुनः राधासहस्र का मारा करें और फिर भी राबण जीता रहे (सज्जा से आत्मपात्र न कर न) । धिक्कार है इन्द्रजित मेघ नाग को । धर कृष्णका को जमाने स क्या नाम ? और फिर हमारी व मुझसे विगुने स्वर्ग को जो एक छोटे स गाँव व समान उमाद बापा इनकी बोन गितनी है । )

मानवीयता माहौर बापेस के समारति हा बुक प । उस अब सर को लक्ष्य कर उरगुक्त दमोद को मैने परिवर्तित कर लिया और उसकी अन्तिम पंक्ति के स्थान पर अर्थात्परिभाषा अन्वय का एक पद बनाकर उस जाड़ दिया । वह परिवर्तित दयाक जिस मैने बिनारी के रूप में कल्पित पडा था, इस प्रकार था —

मपरातो बरि को नि कृष्णभरत लक्ष्यको बाह्यर  
 लोपरब्रंज दपो लभारतिपर मुष्णित लगेडकता ।  
 दिक् निक् एण्डमं, प्रबोधितकता वि बालगतनेन वा  
 अतिप्रविशानिपमानुष द्विबर्ष रोडं दिक् एण्डने ?

( पहिन तो यही सज्जा की बात है कि कोई मरम इन का मैत्रा बापेस का समारति हो और फिर वह बाह्यर हो । राग यह भी सही । पान्नु दह हमारे प्रग में काकर समारतिस्थ कर और लोभ मारे मुर्गी के लभने मगे (दह अगहनी है) मरम इन को धिक्कार है काम मगापर तिमर और विनमद नाम को उमायना निरपक है । जा पुगों में मग मगत है एम बाह्य-श्रेष्ठ के अम्पुद को बोन रोग मता है ? )

मै उरुक्त मोर की अन्वय बरतिपों व मफने करने जा ही एग था कि मानवीयता बोन बडे "र राम ! मगायरी इन्की

ब्याम्पा न कीजिये' । मैं तुरन्त समझ गया और चुप रह गया ।  
 किसी संस्था अथवा व्यक्ति की निन्दा करना तो दूर रहा उस मुन्ना  
 भी मानवीयजी पाप समझते थे । विनती का ठोठा समाप्त होने पर  
 मानवीयजी ने मुझे एकान्त में बुलाया और कहा ब्यासजी ! जब  
 आपका मानस था कि इस पक्ष के लोगों को स्त्री का तृतीय अघ्याय  
 ब्रह्मस्य नहीं है तो आपने पाठ नहीं करना था । आप अभी बालक  
 हैं । आपको एक शिक्षा देता हूँ । किसी को भीषा दिलाकर अपने  
 अम्युन्य की कमी बट्ठा न कीजियेगा । इससे आपका स्तर ऊँचा  
 होगा । आपका उमर दोर को भी न पढ़ना चाहिए था किसी की  
 निन्दा करना प्रथम उनका उन्हाव करना बहुत धुरी बात है ।  
 शिक्षा ऊँचे दर्जे की थी । शुद्ध हृदय से दी गई थी । पर कर गई ।  
 उमर तिम क बाद से मेने किसी को भीषा लगाने की चेष्टा नहीं  
 की । मानवीयजी के इस अनुन सम्पत्ति के दान से मैं उनसे कभी  
 उच्छ्रय नहीं हो सकता ।

मानवायजी के प्रायः प्रवास में रहने के कारण उनका अनुपदग  
 उनसे प्रेरणा ग्रहण करने में बन्धित रहता था परन्तु मानवीयजी  
 समय-समय पर पत्र-व्यवहार के द्वारा उन्हें अपने अनुपदेन से  
 सम्पर्क की ओर प्रवृत्त करते थे । गुरुम्बी में आये तिम छोटी  
 मोटी और कभी-कभी जन्म गमस्याएँ गड़ी रहती हैं । यदि छोटी-  
 मोटी गमस्याएँ सुचारु रूप से सुलभनी रहें और जन्म समस्याएँ  
 के सुलभाने के लिए धार्मिक तप-श्रद्धा रहें तो गुरुम्बी की गड़ी  
 निर्बाध गति में चल सकती है । इस सम्बन्ध में मानवीयजी के पत्र  
 बड़े महत्त्वपूर्ण हैं । उनसे उनके हृदय एवं धर्मनिष्ठा की भाँती  
 सिखाई है । उनसे हम तप को उद्भूत करता है । ये पत्र अपने  
 परिशरगतता का निरूपण करते हैं । काम देना अनाश्रयक है । ये पत्र  
 मेरे नाम गुरुनिष्ठ हैं ।

वि०—का आगीस

तुम्हाण पत्र पठुंवा । तुम मयबान स प्रार्थना करत आओ और बुद्धि के अनुसार यत्न और प्रबन्ध करत आओ । ईश्वर दया करेंगे ।

तुमने स रचया मगाया यह भूल किया । हम चाहते हैं कि जितना कर्मागत ऐसी स मिस उर्धामे कामगुर की दूखान स गर्भ बन । यदि तुम बही स रचया कर्मी मंगाबोग तो के बर्जगर हो जावोग और यह काम भी हाथ स जायगा और प्रतिष्ठा जायगी । यदि कर्मी बुद्ध आमदनी नहीं हो सकती तो हमारी राय है कि तुम यह को यही पठुंवा आओ जब बुद्ध मुनासिब आमदनी होने लगगी तो फिर सिबा जात । बिरमा जी तथा और बड़े-बड़े व्यापार बहत दिनों तक बनती गृह्यी को परदेस नहीं सिबा गये यहा ठीक व्यापार का माग है । तुमको तो तपस्या के समान व्यापार करना है इनलिए हम आशा करते हैं कि हमारा कहना तुमरा भ्रमण न हागा । समय क अनुसार काम को संमानना धर्म है ।

और सब यही बुरान है कर्मी सोया भी प्रसुप्रता का समाचार लिखना । एक-दो सना माद रचना

गुणधाररंविमुत्तरं विमुत्तम्य धर्मेन वा ।

बन्धनं व्यननं ह्यस्य चरिष्यपरमो नृप ॥

बिनी दरा स भी छोड़ना न हिम्मत बिसारना न राम ।

प्रकाश तुम्हाण  
४-१-२२ बाबू जी

मायरीदर्री उर्ध शरणाविया एवं यतिव-निदो का प्रादिक सहायता करत थ यही बननी परिवार क सोनी तथा मोनरा को भी जिन्हे काविर सहायता की आवश्यकता हाई थी सिद्धिपत्र रूप से मपाररंछि म- पठुंवात थ । यह निम्नलिखित पत्र स जो

उन्होंने अपने छोटे भाई वं० श्यामसुन्दर मालवीय को सिखा था स्पष्ट है—

धी

वि० सुन्दर मालवीय

तुम्हारा पत्र पहुँचा वि० शशीरान्त का विवाह कुरामपूर्वक हो गया ईश्वर का अनुग्रह हुआ सब कामों में सबसे अधिक परिश्रम, तुम ही को पढ़ा ईश्वर की दया हुई इससे तुमने सब निवाह किया जो सहायता प्रजमोहनजी ने इन कार्यों में दी उसके लिए उनका बहुत-बहुत धन्यवाद करना।

जो २००) दो सौ भेजा है Insured Letter उसमें से मीचे अनुसार देना।

(एक बहू) को दो महीने का	५०	१०	= १००)
(एक विवाहिता पुत्री)	२	२०	= ४०)
(एक विधवा मौजार्द)	१५	१५	= ३०)
येनी को (एक पुराना मृत्य)	१० + १०		= २०)
पंडित जी को (जो राधागृष्ण की पूजा करते थे।			
		<u>५ + ५)</u>	= १०)
			१००)

हम बीम को वारी पहुँचना चाहत हैं हो सकता तो १ दिन के लिए प्रयाग आयेंगे। तबीयत अच्छी है।

ममूरी १०-७-०८

म० मो०

वि० शशीरान्त का विवाह में सहायता करने के लिए मालवीय जी एम महान् व्यक्ति ने मुझ पर मायारण व्यक्ति को बहुत-बहुत धन्यवाद हम के लिए एक निजी पत्र में अपने छोटे भाई को लिखा। अपने भाग्यवर्ष की कामना करेगा जब मैं आगे बढ़ाऊँगा कि वि० शशीरान्त को मेरे छोटे भाई की पुत्री ब्याही गयी थी।

जात ही बतावें कि मैंने सहायता की या मालवीयजी ने मुझे उबारा। बात यह है कि

मन्त्रि बधति कामे बुध्यन्तीपुत्रपूर्णा  
 त्रिभुवनमुनमारभेतित्रि प्रीतापन्धः ।  
 परमुलपरमारुन् बर्षतीहाय त्रिन्ध  
 त्रिभूदि विभक्तता तस्मि तस्त द्विपन्धः ॥

(मन्त्र बधन और शरीर में पुण्यरूपी अमृत स भरे हुए त्रिभुवन को अपने उपवासों से प्रमत्त करत हुए और दूसरे व अणु के समान छोटे स मुणु को पकताकार बना कर जो अपने हृदय में उल्लास का अनुभव करत हैं उस सन्त इने-गिने होते हैं।) मालवीयजी उन सन्तों में थे।

मायवीर्य का मुझ धन्यवाद देने का रहस्य उपयुक्त स्तोत्रों में निहित है।

सन् १९४० की बात है। उनर एक पुत्र वि० सुहृन्द मायवीय को गाँव ने काय। वि० सुहृन्द को मेरी सर्गी छोटी बहिन ब्याही है। भगवन्कृपा से वे बच गये। भारतम में जब मालवीयजी ने यह सुना तो उन्होंने वि० सुहृन्द को यह पत्र लिखा :

श्रीः

बनारस

११-१-४०

वि० सुहृन्द भारीय

ईश्वर की दया हुई जो सन का फिर तुम्हारे शरीर में बड़ी पना। मापुम होता है कोई भारी अरिष्ठा या त्रिभु ईश्वर की दया से बट सोझा ही स्वग देवर निरान गया। इससे प्राविचल स्वग्य विरगुष्ण नाम ४ ११ पाठ कर गो यह संबन्ध बनने कि जो लोग हुआ हो उनको भगवन् रामा बने और महा करने पन्ध म रचित रक्यों। अपनी माता म यह दना कि उन्होंने जो विद्वैत बालकी

( उमरी एक पुत्री जो बनारस में ब्याही है ) के पास मेरी थी उसे हमने सब पढ़ लिया अब डा हुआ उन्होंने विस्तार से सब हान शिख बिया था नहीं तो चिन्ता अधिक होती हम समावस के लग गग आने का विचार करते हैं ।

सब को भारीप

बाहू जी

मेरी यह दृढ़ धारणा है कि मनुष्य का ब्यक्तित्व जितना उसके जिले हुए परेलु पत्रों से निकलता है उतना और किसी चीज से नहीं । ब हृदय से निकलते हैं और अकृत्रिम होते हैं । यही पत्रों का महत्व है । अब मे आपके सामने मातृवीयजी का एक सारगमित पत्र जो उन्होंने अपने एक पुत्र को लिखा था प्रस्तुत करता हूँ ।

श्रीः

बि०—भारीस

तुम्हारा संवा पत्र आया तब से हम तुम को पत्र लिखने की दृष्टि रखते हुये भी अब तक नहीं लिख सके । इसका कारण काम की भी ब और स्वास्थ्य की दुर्बलता है ।

तुम्हारी यह भूल है जो तुम समझत हो कि हम तुम से नाराज हैं तुमारी भूनों से हम दुखित अरुदय है पर अब जो हो गया वह सौट ठो नहीं आसच्छा हम चाहत हैं कि तुम नाराजगी की चरण में सुख्ये भाव से रहो नित्य नम्रतापूर्वक प्रार्थना करो कि जो अप उप हो गया है उमरी भगवान छोडा करें हमारे क पन अपना पन नहीं होता उम्र धन को रचना अधिक ब्यय क्य देना जितना तुमने क्य दिया न कबम भूत हूँ किन्तु पाप भी हुना भीर बड़ा पाप हुवा अब उमके विषय में किनाप लिखने से कोई नाम नहीं हमरए एगो

इदमेव हि पाठित्य मियमेव बिदग्धता ।

अयमेव परो पर्मा यथायाप्रापिरो ब्यय ॥

यही वाङ्मय है यही अनुवाद है यही परम धर्म है कि जितना जाय हो उसमें अधिक व्यय न हो परन्तु भूमि बहुतों से हुई है और होती है।

हम तुम्हारे हृदय की गुदना का जानत हैं यदि तुम अथ स प्रसन्न न होते तो हम तुम को अपने पाम रखत उन में हम को सुख होता है किन्तु अब तुम्हारा यही धर्म है कि भगवान की प्रार्थना करते हुये और यह विश्वास रखने हम कि उम्होंने करोड़ों पठितों भातों बुतियों को उबार्य है। तुम को श्री उबारेंगे ऐसा मन लगा कर व्यापार करो कि जिसमें कम पड़े सब भोग इस बात की प्रतीति करें कि तुम व्यापार पर पूरा ध्यान देने हो और धर्म भाष स व्यापार स तद्वत् हो यदि धृढ भाव न आत हो कर प्रार्थना करते जाबाय और उत्साह और विश्वास ब साथ परिश्रम और उद्योग करते जाबोगे तो परमात्मा प्रसन्न होगे अपने प्रसन्न होने पर तुम्हारी माना तुम्हारे बिना सुमन्त्र आई बंधु और मित्र सब प्रसन्न होगे कम इस समय दतना ही सिगने है फिर और सिगने किन्तु इतने में सब तथ्य आ गया है तुम्हारा बाव

इस पत्र का प्रत्येक गण अमृत वर के समान है। इस पर टिप्पणी निर्णय है। वर बनत करने की बन्तु है।

मन् १६२२ की बात है। इस कृष्ण समय स मानवीयकी विनियत रान पे कि वर मानवीय समस्त जिसमें आर्य में गान पात एवं विशाह सम्बन्ध प्रकृति है वरुण लोग है। अरुण परिधि बड़ाई बानी वाहिण। मरुत बडिन समस्या तो मद्रुवियों और सद्रुवों व विशाह की थी। वरुण जगन्नाथ नहीं बनता वरुण मद्रुवा अरुणा सिध गया तो मद्रुवी संगवी निरत रयी। और यदि वरुण एनीसों तुम बन गय तो मद्रुवी व भारी दानु के गूट में भारत का गिजाना नगी। सुमन तेरी न बनत रहा पा। लोग सुधिन्द्र की मूर की परिमारा को मानने के लिए तैयार न पे।



निवसत्याप्यते मायै धामं पचति यी नरः ।

अच्छरी चाप्रधानो च स पुषिभ्यां सुखो नरः ॥

( दिन के घाठवें पहर भी यदि रूमा-सूसा भोजन मिला जाय, श्चय न हो और परदेन मारे मारे न फिरमा पड़े तो वह मनुष्य सुखी है । ) सुधिष्ठिर श्री यह सीमा गसे तसे नहीं उतरती थी । इसका उत्तर व यह देते थे —

जो अस्तो-नक्त से बाण्ड है उतने दिन की है रोका ।

सुबारह हो सुन्ही जो बाटना मटहू के पीछे का ॥

अकबर

परन्तु साधारी थी । समाज की परिधि ही सीमित थी । छोटी सी गडैया में बहुत देर तक छप-छप करने पर भगवत्कृपा से किसी यमुन को यदि एक दाना मिला भी गया तो उससे अन्य सबकों बुमुदित बगुनों का तो पैर नहीं भर सकता था । और फिर बहु माग्यवान् पुरप यह भी तो नहीं बहु सकता था कि 'मोरी धानी निरुम आई केमी का बरपा उपकर पड़े क्योंकि उसके और भी तो सदकियाँ थीं । बिरादरी में वेग थोड़े स माग्यवान् हैं जो हम बहा-बत की जबान पर ला गके । साधारण मनुष्य प्रवृत्ति स आसमी होता है । वह झंझट से भागता है । उदर-पोषण के लिए नौकरी ठकान करना एक झभटी काम है । परन्तु उससे भी अधिक झंझट क्य्या के लिए सुयोग्य वर का दू बना है । मुझे अच्छी तरह स याद है कि एक बार माणबीमर्जी ने मुझे बुमाया और कहा ब्याग जी । सुदुग् ( उनर पुत्र ) की दानों सदकियाँ बड़ी हार्ती जा रही हैं । धानी बहिन ( उारी बट ) स बहूने महां कि उनर तबवाह में डिमाई न करें । आरहो म्वर नगरी बिन्ता होनी चाहिए । मैं दत्रियानुमी रमयापान का धानमी मेरे मूं ग निरुम पदा महापज आर ही सोगों में दतनी शक्ति है कि आर दतने समय तक सदकी

रोक सकते हैं। मेरी मदद की होती तो इससे बहुत पहिले यदि कर म मिमता तो पीरम से ब्याह दसा। मानवीयजी तुरन्त योन उठे 'धीरम ! धीरम ! ऐसी बात मुह स म निकालिये। लदकी के लिए सुयोग्य कर तो मिमता ही चाहिये। आजकल को देगते हुए मदकियां बृद्ध पंसी बड़ी महीं हो गयी थी। यही बोई बीथ इकरिस वर्ष को रही होंगी। आज दिन जब मैं स्वयं उस मसमे को नहीं सुनस्य पा रहा हूँ तो मुझे अपनी गर्वोक्ति पर कबीर का कथन याद आता है

कबिरा मर्ष न कीजिये कबहुँ न हूँिये कोय ।

कबहुँ नाच समूह में को कर्षं का होय ॥

भगवत्पुत्रा और मानवीयजी की पुष्पाई म उन दोनों मदकियों का बिबाह हो गया और वे सुगी हैं।

मानवीयजी दूरदर्शी थे। उन्होंने इस समस्या के सुझाने का एक ही उपाय समझा। जाति की शक्ति को बढ़ाना। इतने छोटे समाज में, जिनकी कुल जनसंख्या दस हजार से अधिक न हो ऐसी समस्याओं का प्राण दिन रात रहना और समय को तीव्र गति न कारण मई मई समस्याओं का उत्तर होना स्वाभाविक ही है। एक उन्होंने सोचा कि हम लोग मामला म २०० का हुए किसी कारण का जानना दस छोड़कर पच आये दे। पर वही ता हमारे जाति का अवन होगा। इसका अन्वयण कर उन्हें मिमाना चाहिए। प्रथम उनकी प्रेरणा से और बिराजी की अनुमति म दिसम्बर १९२९ में मातृ धर्मियों का एक डेप्युटेशन अन्वयण माधवा भेजा गया। इस डेप्युटेशन म कान गांधी-गमक कर सम्म्य रण मय दे। उगमें बड़े लोटे लोग थे। कान तो बिगान् दे और बुर बसु। मैं भी उग डेप्युटेशन का एक मन्व्य था। मैं बिगान् तो मर्ष का बसु मय ही बट में। मानवीयजी न उठेष्ट पुन पठित रमा कान्त मानवीय डेप्युटेशन के नेता थे। बसु मर्ष और मेरा-भूरा

उत्तरी पक्ष सम्पत्ति थी। दूर से देखने से स्वयं मालवीयजी का घम होता था। दूसरे विशिष्ट सदस्य थे पण्डित पुरुषोत्तम दुबे संसूत के प्रवाहक विद्वान् एक मालवीयजी के स्नेहपात्र। यह सोचा गया कि सम्भव है वहाँ कोई उस धोर का व्यक्ति सभा में संसूत में व्याख्यान देने लग जाय तो उसका उत्तर संसूत ही में देने बाज़ा होना चाहिए। दुबेजी इसने लिए पर्याप्त थे। उस डेप्यु-  
 टेसन का विस्तार से बणन इस धोर की परिधि के बाहर है। अतः योड़े ही में बढ़ेगा। डेप्युटेसन साइदा होता हुआ २४ दिसम्बर को इन्डोर पहुँचा। यहाँ दो-तीन दिन अन्वेषण का कार्य कर घाँटा बिस्मौद एवं धार होता हुआ उज्जैन गया। सभी जगह सूब समाए हुईं। उज्जैन सभा में एक बड़ी मनोरंजक बात हुई। उसके कहने का सोम में गंवरण नहीं कर सक्ता। सभा में लगभग दस हजार घोटा उपस्थित थे। रमाकान्त मालवीय बड़े ठाठ-घाट से अपना व्याख्यान दे ही रहे थे कि एक उज्जड़ सा घादमी = ठ मढ़ा हुआ धोर रमाकान्त जी से कहने लगा प्राय मिमने-मिलाने का बहुत व्याख्यान दे रहे ? कहत है कि हम धोर आग एक ही पर यह तो बताइये कि आपका उपकंठ क्या है।" रमाकान्तजी जब इसका उत्तर न द गये तो वह व्यक्ति फिर उठ खड़ा हुआ और बासा जब घातकी अपना उपकंठ ही नहीं मालूम तो फिर मिमने-मिलाने की गब बात पत्रूम है। मैं मुरस्त उठ खड़ा हुआ। मैंने कहा कि आप मुझमें पूछें। बच्चा महीन्य दूगरे शागर क पण्डित हैं। हमारा उप-  
 कंठ है 'बृदहण'। मैंने यह कहता था कि वह व्यक्ति भीड़ को नीरता हुआ आकर मुझमें सग्न गया और धोर से चिल्लाकर कहा 'हम और आप लोग सब एक हैं। उज्जत याल-बाय बप गयी। 'डेप्युटेसन क गन्ध्या की बा' गिन गयीं। एा व्यक्ति न उठकर संसूत में व्याख्यान दिया। सभा मरमत्तापूबक गमान हो गयी।

बाहर आन ही रमाकान्त जी न पूना 'ब्रजमोहन' यह उपकंठ

क्या है और तुम्हें किस मामू में हुआ कि तुम्हारा 'बोड़हरा' उपरंत है ? हमने कहा—रमा ! जहाँ बिना मूक हो जाते हैं वहाँ चतुर आदमी काम करते हैं। मायबीयजी ने मुझे निरर्थक छोड़े ही चुना था। जब १३॥ गोत्र के प्राण्य मायवा से भागे तो निश्चित स्थान पर निश्चित पहुँच जान के लिए उन्होंने रास्त में 'पाड़े बाबा' की पूजा की। चूँकि पूज के महीने में भागे थे अतः पूज के महीने प्रति वर्ष हर घर में पाड़े बाबा की पूजा होती है और उस पाड़े पूजा कहते हैं। जब हमारे यहाँ पूजा होती थी तो हमारा हमारे पितामह पाद बाबा की बेनी के सामने यह मंत्र पढ़ा करते थे—आशा पूरा रेगुला बरे, गोरे, बोड़हरे के धरतपूजनमहं करिये। उपरंत उस स्थान को कहते हैं जहाँ के वे मूल निवासी हैं। हमारी देवी आशा पूरा रेगुला है और हमारा उपरंत 'बोड़हरा' है जो उपजन से पाँच मीन पर एक गाँव है। यह मुत्तर रमाशान्ठीजी फड़क उठे और बोल 'यार तुम बड़े चाँई हो।

जब टेम्पुनेगल प्रयाग सोर कर मायबीयजी में मिला और उन्होंने इस घटना का मुता तो बड़े प्रसन्न हुए। मुझमें अपनी मन मोहिनी हूँमी में बोल शाबारा। छोड़े तिन बाद मायवा के बूठ से लोगों को धार्मिक कर मायबीयजी के समारंभ में एक महीने गमा में गरसम्माल से निम्न प्रस्ताव स्वीकृत हुआ—

धरो पबतपो बय ।

जानि और धम की रसा और उन्नति के लिए यह बात पाण घम्पत और न्यायपुत्र है कि आ मायबीय लौद या धीगौद काष्ठय मित्र विप्र प्रांत में दग है और जिनका धमम्बर्था अकार और अकार समान है उनमें परम्परा गजनीय गुम्पना अर्थात् भोजन और विद्या का गुम्पय विना शय। पर प्रस्ताव अर्थात् भारत कीय धीगौद मायबाद-गम्पेनन प्रयाग में मेरे उमातिप्र में

सर्वसम्मति से मि० बदायत शुभन १० सं० १९६० को स्वीकृत हुआ ।

१ मई सन् १९३३  
प्रयाग

मदनमोहन मालवीय  
सम्मेलन समापति

सम्मेलन के समाप्त होने पर मालवीयजी ने सब उपस्थित सज्जनों को जिनमें मामबा से आये हुए बन्धुजन भी थे अपने निवासस्थान पर सहभोज के लिए निमंत्रित किया ।

दूसरे दिन सायंकाय मालवीयजी के साथ सम्मेलन में उपस्थित सज्जनों की एक फोटो ली गयी और रात्रि में उनके निवासस्थान पर मित्र-मित्र प्रास्तों से आये हुए मालवीय सज्जनों ने और प्रयागस्थ मालवीय भाइयों ने जिनमें मालवीयजी भी सम्मिलित हुए, एक सायं भोजन किया । मुझे ठीक स याद नहीं कि यह ज्योनार 'बन्धी ( रोटी-आवाज ) की या पकरी ( पूतपकव पूड़ी ) । यह ज्योनार ही पायी और बिना साम गढ़े हुए निम्नित समाप्त हो गयी । इसके समझ सना चाहिए कि यह प्रबन्ध ही 'पकरी रखी होगी । क्योंकि जब हर लाग 'द्विपुत्रान' में इन्धोर गए थे तो वहाँ पर उन लोगों से सहभोज के लिए निमंत्रित होने पर हम लोगों ने चुन हुए पीताम्बर पहिन कर सानी' गायी थी । सानी में हमारे भ्रम को दूर करने के लिए यह बतना देना आवश्यक है कि दूध स सने हुए आटे की पूत-पकव पूड़ी को सानी कहते हैं । गान पान की बात-कियों के सम्मने में निष्ठात पहिदत समाकाल मालवीय के भेदे के बीच हमस कम स समझौता नहीं हो सक्ता था । परन्तु समय एक करोति बलाजसम् । इस सम्मेलन में उनी लोगों ने उनी लोगों के साथ बबल चुपी हुई धोनी पहिन कर मालवीय जी के नेहुर में सहभोजन किया । यह बोर्ड गाधारण मरहना नहीं था । जिन केनेही संघ और स्रुदपन संघ का विमा कर शान्ति स्थापना

में मेहुइजी अब तक अमरुत रहे उस अतिव ममम को या छी  
 आत्र स २५०० का पूर्व घोषणिका पाखिनि ने एक मूत्र क द्वारा  
 दानं युवानं मघवानम् म देव्य स्थापित कर दिया था या मनु  
 १६३३ में मापवीयजी ने मित्र-मित्र हमा क विभिन्न मानमि  
 स्तरों के मनुष्या स मयुक्त सदान हसों को मिसा दिया ।

प्रस्ताव का पाणिन हा गया परन्तु उसको पुत्र करने क मित  
 मापवीयजी ने बोड़े ही निन बाद प्रयागम्प मालवीयो की एक  
 सुमा बुनाई और एक्य एवं साय म मिमकर काम करने पर इन्होंने  
 एक माग-भमित व्याख्यान दिया । अन्त में मुझे धयबाइ देने क मित  
 कहा गया । मैने उन्हें स-माय दिसमाने के लिए धय्यदा-मेत हा  
 कहा कि मालवीयजी ने जो कृप कहा है उगवा यह निबोड़  
 है कि :

साहित में पोर में लरिर में न राय मेर  
 रिम्पत लों कपाओ उगारं लो उपरि बाय ॥  
 ऐसो दास ठाने लो बिनाटु कच-संत्र विचे  
 लीर के उरु क उगारं लो उपरि बाय ॥  
 'कापुर' कहत कपु कलि न जानों पात्र  
 द्विभक्त विचे लो कही कहु ना मुपरि बाय ?  
 कारि जने कारु विभा लो कारों कोन गहि  
 मेक को जनाइ के उगारं लो उपरि बाय ॥

मापवीयजी इस मुन कर पदक उठे और सोन शाबाग ! म  
 फिर बढ़िये । मैने फिर पढ़ा और सुमा ममास हा गयी ।

हम गम्भयन म जो प्रद्वार पान हुआ था कठ एा प्रकाश  
 से thin end of wedge था ( कठ ममावीयार पदकद विम  
 ओरकर दार का पनाम है ) क्योंकि उमम अमरुतीय विगाह  
 का कोई विशेष न था । केरम बाइएत होना और कबा

प्राधार व्यवहार होना पर्याप्त था। अतः सर्वप्रथम मासवीयजी से उस प्रस्ताव का मान रखते हुए अपनी एक पौत्री का विवाह अर्न्त जाति के एक सम्भ्रान्त कुस में एक सुयोग्य वर से निश्चित किया। हुरबिरादरी में प्रायः दो दस होते हैं। एक दल ने इस सम्बन्ध का घोर विरोध किया। हमारे परिवार के न सम्मिलित होने की मासवीयजी को आशंका थी कारण एक छिट्छान्त की बात पर। बहुत दिनों से मासवीयजी के रहते हुए दोनों परिवारों का सम्बन्ध विच्छेद हो गया था और दोनों परिवारों के हिमायती दिग्गज सम्बन्धी दो दलों में विभक्त हो गये थे। थोड़े दिन यह चलता रहा। जब इस अन्तर्जातीय विवाह का प्रश्न उठा मासवीयजी गंगा विहारे रथा शीव तिवट्टी महाशय के निश्चय गयबहादुर भालचरणदास के बाग में बायापस्य कर रहे थे। मासवीयजी ने वहाँ मुझे बुलवाया। व एक बगनिया में रहत थे। बगनिया के चारों ओर के बरामदे ईंट से पुन दिये गये थे। केवल भीतर जाने के लिए एक छोटा-सा हिस्सा खुला था। थोड़ा सा मीना प्रकाश ऊपर के रोदानदान से आ रहा था। मैं बरामदे में घुमा। आगे चलकर पूरा अंधकार था। थोड़ा सड़े रहने से मार्ग दिखाई देने लगा। एक कमरे में जिसके प्रायः सभी दरवाजे बन्द थे मासवीयजी एक चारपाई पर बैठे थे। सामने थोड़ी दूर पर एक चौकी पर एक लम्बा रथा था जिसकी चिमनी साफ थी जम पोटो गोंगनेवालों के डार्क रूम में होती है। मासवीयजी ने मुझपर कर मुझसे एक सामने रथी हुई कुर्ची पर बैठने के लिए इंगित किया। मेरा बट जाने पर वे गम्भीर हो गये और बोले "ध्यायजी! आश्रय में थोड़ा चिन्तित हूँ। मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह अन्तर्जातीय विवाह जो मैं कर रहा हूँ उसमें आगरा परिवार मेरा साथ देगा या नहीं।" "म प्रश्न पूरने का कारण स्पष्ट था। मेरे उनसे परिवार का सम्बन्ध विच्छेद बहुत दिनों से बना आ रहा था और

त्रिसय शरम्म उठीं क परिवार मे किया था । मैने छोड़ा मुगकि राकर तुरन्त उत्तर लिया महाराज । जब तक मेरा परिवार मेरे नेतृत्व म है मैं अपने सम्बन्धी को किसी भी परिस्थिति म नहीं छोड़ सकता यह पाठे मुझे छोड़ दे । इन उगार मे जान्तर तो था ही पादा गा उतामम्भ भी था क्योंकि उन्ही के परिवार ने मेरे ऐस पनिज सम्बन्धी को ताक मे आकर एव लोटी भी बात पर लोड़ लिया था और यह तो बड़ी भी बात थी । मानवीयजी ने अदस्य ही उस व्यंग को गुमना किया होगा । वे बहुत प्रसन्न हुए और अपनी मूलम सम्मान म शेष 'ब्यामजी' मरा पिन्ना दुर हो गयी । आरतो और आरत परिवार को ईश्वर नदा धम म हउ रन । फिर उनक स्वास्थ्य के सम्बन्ध म जब मैने पूछा ता उन्होंने कहा कि मे बायायन्त दो बारण्य स पर रखा है । एक तो यह जानने क लिए कि उस आयुर्वेदिक प्रयोग मे कद तथ्य है या नहीं । और यदि है तो अस्य माग इसम प्ररगा प्ररग करें और मुझे अधिक ग्यास्थ्य और गमय श्रेणया के लिए मिस । और दूसरे यह कि यदि का जानि हो तो वह मुन्ही तक सीमित रहे । फिर मैं पना आया ।

निर्गोतिन गमय पर मानवीयजी क यहाँ गप्रथम यह अर्न्त जानिय किया हुआ । जगा मैने उन्हे कथन किया था मेरा उम सम्पूर्ण परिवार उममे सम्मिलित हुआ । वैबान्ति उमय गुमात होने पर मानवीयजी ने मुझे एक अयन्त मिनण पर मिया जियमे उन्हीने दू भी किया कि इन विगत म आरके नेतृत्व मे जो आरक परिवार मे हम भागों का माप किया है उमर लिए मैं आरका आभासी है । अपनी माताआ म अय प्रणाम कर्दिया ।”

इस क ता फिर दरनाका गुन गया । उनक परिवार म मेरे परिवार म नदा विरान्ति क अस्य परिवारों म कई अन्तजानीय विवाह हुए ।



## कुमारी मासती का विवाह

इसे सिलते लिपते एक बड़ी मुदुर घटना सहसा याद आ गयी जो इससे बहुत पुरानी है। परन्तु क्या किया जाय सम्भरणों की यह प्रवृत्ति ही है। ये पूर्वापर की अकहेमना करते हुए अनाहृत बात हैं। उनके इस अल्हड़पन ही में उनका सीन्दर्य है। यह बात मासती यानी की एक पुत्री के विवाह की है। यह विवाहोत्सव मासती यानी की के शहर वाले नये मकान में सम्पन्न हुआ था।

विवाह के दिन प्रातःकाल ही स घर में बड़ी बहम-बहम है। मासती यानी सभी कार्य विशेष कर मंगल कार्य बिधिबन्ध करते थे। 'सर्वान् अश्रुता' समर्पयामि व कर्मी नहीं होने देते थे। जैसे-जैसे विवाह का मूर्त निकट आता जाता था कर्मचारी लोग ममस्त वैवाहिक वस्तुओं के सम्पादन करने में व्यस्त दिसाई बैठे थे।

वेचिहपायु बिबिमुपतेभ्यः

द्विपानु वसा तुशानेनरेभ्यः ।

पान्दिस वैवाहिकवचोव्य

वस्तुनि वृत्त्या बिहर्षिषयानम् ॥

कुमारदास ज्ञानकीहरण ७-४७

(भावार्थ - काम करने में दृढ और अनुर कर्मचारी वैवाहिक मामलों को जुगने से बड़े उत्पन्न थे।)

घर वैवाहिक वृत्त्य आरम्भ ही गये। यन्तुवर्गों एवं मित्रमण्डल से घर ठसा-ठस भरा हुआ है। मासती यानी स्वयं अपनी कन्या का दान करेंगे इस पावन दृश्य को देखने के लिए सभी उत्सुक हैं। प्रांगण के बीच में विवाह मंडप के नीचे 'विपरी' पहिने मासती यानी की बैठे हैं।

उम समय उनकी पत्नी शोभा हुई जम—

न तत्परकार्तुं चरमास्वराभ्यः

कटोरतारापिपताम्पुनक्यदिः ।

विहिद्यते वादकप्रानवेदमं

गिताभिराग्निष्ट इवाप्नवती तिष्ठिः ॥

माप-गिगुगानवप १-२०

(बि ठने हुए सुवर्ग के समान लमकत हुए बरत पहिने वे) उनकी छवि पूर्णपन्द्र के सादरन व समान थी। इस प्रकार वे उम उम समुद्र के समान मुरोमिन हुए जिमरो बड़वाभि की उत्रापा मरेटे हो।) उनके वग की उपमा जिम पर श्वेत पुष्पों की मापा सटक रही थी तमा ही जा सकती है जय—

उमौ परि ब्योमि वृषक प्रचारा

बावाप्रगंतापन पनेनाम् ।

तेजोपमीयेन तमापनीन-

मानुत्तनुनापनावाय बतः ॥

माप गिगुगानवप ३-८

(यदि ब्योम में आरारागगा दो धाराओं में बहे तभी उनके समान नीलवर्ण की जिम पर सुध्र मोनियों का हार सटक रहा है उमा ही जा सकती है।)

मण्डल व नील वानस्पु लान म पुन पीरों पर येन व निरक यडे है। मामन एन-वेदी म निरकृता हुआ प्रम बनावरण लई उरगिपु उन-समूह व धन-करकों को पबिन कर रहा है। बेनी व पारा मोर बुगादास विगरी हुई है। मरमा गाकुन्ठन का हरय मीगा व मामने माप ल्या—

दधी केरितिक वमलपिल्लय

समिदुन इगपमंशोतरवती ।

प्रबन्धनी बुद्धिं हृद्यन्वी  
 वीतन्तस्त्रयी बह्व्यं पादयन्तु ।

कानिनाम-शाकुन्तल ४१०

(बेदी के आम-नाम चारों ओर का म्यान विभिन्न कार्यों के लिए निर्धारित है। एक ओर समिधा रखी है। बेदी के चारों ओर कृशा विग्रही है और यज्ञीय हवन बेदी पर जमती हुई हवि की गंध दिसाओं को पवित्र कर रही है। इस प्रकार वे यज्ञ की अग्नि तुम्हें पवित्र करे।)

मैं माण्डव के एक कोने पर खोया-खोया सा मानवीयजी के सामने खड़ा हूँ। इस मुष्ण-मधुर हृदय को निमित्तम घाँघों में पी रहा था। मानवीयजी देख रहे थे कि इस समय मैं हूँ हृदय में बड़ा प्रभावित हो रहा हूँ। परन्तु जब पुरोहित ने माँगलिक आशुपणों में मुक्त बन्या का हाथ बर ब हाथ पर रखा तो मेरे मँह में महमा निकल पड़ा -

तमयं वा बर्षेण इवैव मत्र मां

ममकण्डयन् मुमुग्नि गौमगानिः ।

अपत्र हृद्योत्तम मनोयत्र वाम

एतत्र बुद्धिपानिब म्प्रेस्तव वर ॥

ममभुक्ति उत्तरगामनरिक्तं

(सामयान् मीता को उन चित्रों को दिगता रहे हैं जिसमें उनकी जीवन सम्बन्धी घटनाएँ चित्रित थीं। एक चित्र निम्नोक्त रसम बन है - हे मुग्ने ! यह बड़ी गमय है जब गौतम शलानन्द ने तुम्हारे बर्षनीय बँहणों में घाँघण हाथ का मेरे हाथ में दिया था। उस समय तुम्हारा हाथ मुनिमान् मनेग्यर गगता था।)

मापरीगर्भी बाधत ता र्ई हे मी ओर गिन्य दृष्टि में दगरद बोने बाध। इस एक छोटे म साध में उन्होंने धारने हृदय में मेरे

हुए बामन्य का उद्देश लिया और फिर मेरा दसौक मौ तो या सग टकिया ।

एक बहुत पुरानी बात याद आ गयी । लगभग साठ वर्ष पुराना । अपनी सदकियों के लिए योग्य बर बनेक ठोहरों को बर्नाठ करन हू सुमी हड़ने रहन हू पान्नु भरने पुत्र के लिए योग्य सदकी साने क लिए बिरम ही फरफटान हू । यह जानन हूए कि पर बिजना गृहिणी मे बनना बिगदठा है उतना सदकों म नगी फिर भी अकड़ी सदकी ठ ट किरावने में इतनी उगमीनता ! शान समझ में नहीं आती । मानवीपजी जानन दे कि सदकियां रम्य हानी हू और अ यह भी जानन दे कि 'न रहन मन्विन्वति मृगयत इ मन्' रम्य स्वयं हड़ने नहीं निरमठा वह ह दा जाता है । बे अदर्शेण क इस बातन क कि 'पुयन्पियां' मित्रिया ही पर को सग्नवने वामी होनी हू मूज जानन दे ।

तर निन की बात है । मानवीपजी मेरे पूज्य तातगा स्वामीर हा० जदृप्य ब्यास क पाग गम भोग बजा "ब्यासजी ! मैं आपकी पुत्री बिदा का कवन पुत्र मुहन्द क लिए चाहता हू ।" हमारे परिवार में और भी सदकियां थीं पान्नु उहोंने बिदा ही को चुना । म्हु भी उनरी सब बातों को समझ डूमकर चुनने की प्रतिमा का परिषादर दा । बट करन्य मनी सदकी को तपाग में नहीं दे के बादन दे कि यह मन पर की भी हो जन की गृहिणी चाहे बुर जाय मगर न न करे । निजारी एम अकभ्रा कृष्टि म प्रमत्र हो गये और उहोंने सुरम्य मानवीपजी के उग प्रत्याय को र्बेवार करन हू अरामी बुनाना प्रकन थी । निजारी परिशुत बावहृप्य म्हु क अनाय मित्रों में ए और संगृह क प्रेमी थे । उहोंने सोचा देगा ना मानवीपजी मे कड़ी उतनी लंग बजा दा —

अपाना रिम पुकगिन रिगो आवापुगणं अरं  
मग्दये दिगोरेमेर तरनरागव्य मे अरि ।

कायेनावरणप्रययात् परिवर्तते यत् स्नेहसारे रिक्तं  
या प्रम मुक्तानुपस्य कचमप्येतेन कत्राप्यते ॥”

—मधुसूनिः

(संभार का यह काम है कि कन्या-परिवार के लोग बर पक्षियों के अनुभव विनय में लगे रहते हैं पर आप तो उल्टे कन्या पक्ष का प्रागपन कात हैं। दून्गी एक विशेषता आप में यह है कि जितना आपका परिवार स सम्बन्ध बढ़ना जाता है उतना ही आपस में स्नेह पनिष्ठ हाथा जाता है।)

बिवाह सम्पन्न हो गया। बिद्या दान सकर बहु को बे हमारे पर स निबा स गय। मासकीपत्री का प्रिय “motto” “बिषयाञ्जु तमन्नुत्” (बिद्या स अमृत की प्राप्ति होती है) साधक हुआ। समय स मासकीपत्री क इस सम्बन्ध स एक पौत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बि० लक्ष्माधर मासवाय है वह जिल्दी में एम० ए० पास करके दयकवि पर परिशोध कार्य कर प्रयाग विश्वविद्यालय में सीनिम लिया है। मगयस्तृता हई तो निरुत् भविष्य में पी-एच० डी० हो जायगा। मासकीपत्री यानि इस समय होत ता अपने पौत्र की प्रतिभा ओर जिल्दी का अनुगाग दयकर पून स समान—पगन्नु यत मोदा मासकीपत्री को बहुत महता पदा। एक बिद्या का दान मेकर उन्हे जीवन भर विद्यादान करना पदा।

इस प्रसंग में एक और घटना याद आ गयी। सन् १९४७ मुझे याद नहीं है ओर न मैं उसके याद करने में भाषासक्ती किया जाता है। No-henl Camp (लगत विगेपी घाम्पोतल) में मासकीपत्री क परिवार में बड़ा जागगा भाग लिया। श्रीमासकीपत्री विद्या लक्ष्मणकी एक सीनिम में समानत्री थी। शासन का दमन बन कर ही टला था। श्रीमासकीपत्री बिद्या अरेस्ट कर ली गयी और उग भी मर्तिन की गुजा हुई। उग समय मासकीपत्री के मुमुत्त १० मौरिग मासकीपत्री स मुझे कागग ग रेमीटोन लिया कि मैं ठगरा

मील कमिन्जर मिस्टर बाम्फ्ट म अनुराध बर कि मोमाग्दती  
 बिदा जेन म ए' ब्याम मे रगी जाय । उन त्रिों मे प्रयाग  
 गुनिसिपिनी वा एनर्जीस्कुन्वि अपराध वा और कमिन्जर बाम्फ्ट  
 पर मेग निबन्ध जमा वा । हम दोना हम प्याम ये । मेर पाम  
 मनों ताबे के मित्र ये घोर उन्ह दिक्के वा रोग वा । व मेरे  
 मनान पर आने ए और धनिया में मित्र मर कर म जात  
 ए और उहे ( decipher ) पदपर मोय जाने ये । व  
 Numismatic Society of India ( माताय मुद्रा-संरथ  
 समिति ) क समाति मी ये बे बजा कयन ये कि I hate to  
 be baffled by coins ( मुझे निबन्ध म पराम्भ होने म पूरा  
 है ) । मै उतर पाम मया और जय ही देने उनम बजा कि मदी  
 यहिन वा लगान-बिरोधी मया क नमून्ध कमे व अपराध में मी  
 मरीने बी मया हो गयी है तो व लोक और आरक्षणीन्विण होकर  
 बान तुम्हरी बनि ! देने बजा कि 'बह महामना मामर्षिनी  
 की पुत्रपू है ता व नुरन्ध बान उहे That explains it'  
 ( तो बान समझ म आनी है ) मेरे अनुपेय करने पर कि मो०  
 रिदा वा ए बराम में रगा जाय व बार कि यर बान कयन्ध  
 के हाय में है तुम उनम बहो । देने बजा कि दानालम्न माहुर  
 ( तन्वार्थिल कयन्ध ) को भाव बन्ध निन हो गय । मै उनम एर  
 बार भी मी मिना । व वा मुने सुभाषणी समझन हान । मना व  
 मेरा एन बह मुने मत ! बाम्फ्ट गाब मुनरथय और बान  
 म्बानीय अक्षर जनता व रिगिट् स्पिचियों की मुक्तीनिब  
 बिचारपारा म पूर मिति म परिबन्ध गहना है ।

दुमरे दिन मे बतकर म मिता । अजब आर्मी वा और अर्ध  
 र्मी उगरी इन्धहार प्रार्थ । जय हा मै गाने कृती पर बग बम  
 ही उन्ने एर माग-म गिन्ध उगल घोर मया मुन्धमन्धन पुटने  
 और मेरा उगर मधेन म निगन । मेरा नाम बान है मै निबन्ध त्रिों

स एकत्रीकृत विधाओं से सम्बन्ध है। मैं किन-किन संस्थाओं से सम्बन्ध है।  
 इत्यादि-इत्यादि। मुझे देना मना था उसे इज्जत पर खुदा को हाथि  
 नाथि जानकर' मेरा मयान कलम-बन्द। क्या जा रहा हो और  
 मैं कोई हिस्ट्री शीटर हूँ। जब यह अग्नि परीक्षा समाप्त हुई तो  
 उन्होंने रजिस्टर को बन्द कर बगल में रख दिया और पहिला मनास  
 जो उन्होंने पूछा वह यह था मिस्टर क्याम ! मैं इतने समय से  
 यहाँ हूँ तुम एक बार भी मुझसे मिलने नहीं आये। इसका क्या  
 कारण है ? मुझे इतना साहस न था कि मैं कहूँ कि मुझे  
 तुम्हारे शासन में बुरा है "मनास नहीं आया। मैंने केवल इतना  
 कहा कि स्पुनिगिपैन्सि की वाम में इतना व्यस्त रहता हूँ कि नहीं  
 आ सका। तब उन्होंने मुझसे जाने का प्रयोजन पूछा। मैंने उनसे  
 कहा कि मेरी बर्तन को मगान विरोध के अपराध में सजा हो  
 गयी है। उम्मे त क्लग के लिए मैं अनुरोध करने आया हूँ। इस  
 पर फिर से उम्मे रजिस्टर को सौमकर फिर मिगने मगे। जिन  
 प्रकार क्लग के मुकदमे में तमाशी में कोई सख्त न मिलने पर  
 यदि घर न पाव मर भाग निरस आये तो पुमिम उरको ही कर्त  
 म कर उनका "गज करती है कुछ उगी प्रकार मेरे विमाफ कुछ  
 न निरपने पर मरी बर्तन को गजा होना और वह भी ऐसे गुनाह  
 पर जिनम वागन का वागन डाँबा होना है मुझे जहन्नुम म  
 मेजने के लिए पर्याप्त था। उम्मे कम्पन्स गाहक मे मेरी हिस्ट्री चीज  
 में "ज कर लिया ताकि वह मन्द रहे और वह जकरत पर काम  
 आये। मुझे कम्पन्स गाहक की कर्तव्यता पर मत ही मत नहीं  
 आयी। रजिस्टर फिर क्लग कम्पन्स गाहक आये "मिस्टर  
 क्याम ! मुझे गे-है कि मैं भारत। को मनासता मनी कर मनास।  
 मैं जानता हूँ कि मालवीयत्री का पूरा परिवार भारी है। मेरी तो  
 पारण है कि कुछ राजनीतिक बँदियों को भी क्लग देना चाहिए  
 विराय देने गिन घाँटी के मंत्राओं के जैम गाँधीजी मानवीयत्री

मौखीयानकी घोर चेष्ट ही दो-एक घीर । बाकी सबको भी क्यास ।  
 जो लोग बाबूज छोड़न हूँ उन्हे नामस का लिया हुआ हंड बिना भी  
 बरह रिय मुगतमा चाहिए । मे जानता हूँ कि घोंपेकी सामस  
 की मीति इतक विरुद्ध है पर अब ता मुझे ऊपर म बोई आदरा  
 न मिल तब तर मे तो अपने ही मत के अनुसार अपना मुग्ध  
 दूंगा । मे तो आपकी बहिन के लिए भी क्यास की निपटारिया  
 कर चुका हूँ । अपना मनतर मे पर बहतर क्या आया कि इतर  
 धागे मुझे पूरा नहीं कहना है । दो शी तीन दिन बाप यह पता  
 पच गया कि सख्तार ने बरकर मादर की निपटारिया नहीं मानी  
 और मेरी बहिन को ए क्यास दिया गया है जमा कि मासवीयकी  
 के परिवार के अन्य लोगों का लिया गया था ।

सौभाग्यवशा विना न जेन में रहकर दिन दिन कटिनायों म  
 मासवीयकी के यही प्रनित्त गान-गान पूजा-पाठ इत्यादि का  
 निशान उभ विपन की पाव-परता मती है । इसना बहुत पर्याप्त  
 होगा कि बली उगत व्यवहार घोर भावस्य म निर्मी भी पिता  
 घोर अमुर को गब होगा ।

मासवीयकी का हृदयस्नेह म हिनमा भोज प्रीत था उसके दो  
 एक उगाहरण देता है । मासवीयकी मध्याह्न म स्यानामि निच  
 कर्म म निरुम हातर भजन शरु यात पर की मगरी पर भोजन  
 करन जात थे । प्राय मग बहिन सौभाग्यकी विना ही म्योई  
 बनाता थी । मासवीयकी नेगी मय्य पतिने मादर पर मनन ह  
 मद्र ए दुनदुनात जात थे -

मह भवन को भूयत माई  
 लोहा को लन बार हजर को  
 शबाभन कता मगवाई ।

असिम मई पर पुंकार ब यह ही लिये रवा म कपले के  
 मप्रसुते । लियुन भा मया । विज्ञा देनी उमरी



कुन्दनदेवी तुरन्त का पात्रों और उनका लिए आसन बिछा देतीं । यद्यपि मेरी बहिन बहुत अच्छी रसोई बनाती हैं परन्तु एक दिन रात में निमक काहा अधिक हो गया । वे कुछ नहीं माले । कुन्दन देवी तो बर्हा बँधी ही थीं । मासवीयजी मौके की साक में थे । जैसे ही कुन्दनदेवी की आँख दूसरी ओर फिरी मासवीयजी ने घोड़ा मा जम बाज्र म मिया दिया । सिर्फ मेरी बहिन ने देख लिया । उसके नेत्रों में अपनी श्रुति और दबसुर के स्नेह पर धाँसू बहने लगे । कुन्दनदेवी का स्वभाव मार्दव और लिम्पसा का बिबिध सम्मिश्रण था । मासवीयजी की सुवा म तनिक भी श्रुति उन्हें लमहा थी । यदि उन्हें पता चल जाता कि रात में निमक अधिक पद जाने का कारण मासवीयजी को रात में जम मिलाया पड़ा तो वे मेरी बहिन का उट्टी का दूध याद करा देतीं ।

एक बार मासवीयजी और उनका पुत्र पं० राधाकान्त मासवीय साथ साथ रवाई में भोजन करने के लिए गये । लकड़ी गराब थी । बून्टा टिक नहीं जल रहा था । बहुत धीकने पर भी लकड़ी का जोयना कम हुआ । अन्त रोटी कम प्युवती थी और उसमें बहुत सी बिर्सी पद जाती थी । राधाकान्त स्वभाव के उप हैं और भोजन में क्या मभी बातों में बहुत गिन-रिक्त करते हैं । मासवीयजी पीबूरा में इमलिए कुछ बोन तो न मने पर लगे रोटी पर स बिसियों का ताढ़ने और इस प्रकार उगूँनि वाली का नीचे रोटी के दुबड़ों का एक डर मगा दिया । मासवीयजी स म रहा गया । बोने राधा ! लकड़ा जोप न करना चाहिए । अन्न का अनादर अनुचित है । जब खाड़ा ही गराब है तो बड़ बेचारी क्या करे । रोज तो एसा मने होता ।

गणपतार मासवीयजी ।

शास्त्र बताया है कि मयन एक रग है और वद है वरन्त रम । अन्य मिाने रग है वे इन रम का गणपतार है ।

एहो एव कदापि एव निमित्तमेवाम्  
 मित्रं वृषकं वृषविद्यामणते विषयान् ।  
 पावनं बुद्धबुद्धतन्मया विचारा-  
 नमो यथा सतिनमेव तु तरनमपम् ।

—भवमिति

( हम केवल एक ही और वह कदापि है । निमित्तमेव व वाक्य  
 उमसे खने श्यान्तर होने हैं । उस धरंर सुदुद तरद्ग ये सब  
 प्रम ही क श्यान्तर हैं । )

मासवीयत्री का वाक्य रम बदा प्रथम था । व दुगियों को  
 देगकर उन्नि हो जात थे । वागो त्ति विविदिगामय की बात है  
 जब वे वही क वाग्म-वांश्वर थे । उभी समय मेरे परम मित्र  
 माई श्रीतृप्यदाय विविदिगामय में छात्र थे । दामजी उप विचारा  
 के एक शान्तिकारी थे । मासवीयत्री उनकी प्रतिभा एवं उम्माह के  
 वायन थे । और मासवीयत्री ने दामजी के हृदय में घर कर लिया  
 क्योंकि दामजी उनके अनिश्चय सम्पर्क में आ चुके थे । एक बार  
 मासवीयत्री ने एक राजनीतिक विद्वान् भंगरज को विविदिगामय  
 में निमंत्रित किया । विद्वान् महोदय ने निमंत्रण स्वीकार कर  
 लिया था । परन्तु दामजी की पार्टी ने मासवीयत्री से स्पष्ट कह  
 दिया कि वह व्यक्ति निमंत्रण के पात्र नहीं है और उनकी पार्टी  
 उन्हें विविदिगामय में पुनर्ने न दगा । मासवीयत्री ने कहा कि  
 मध्या समय विविदिगामय के गव छात्रों की एक वृहत् सभा करो  
 और जगा वह निश्चय करनी उसका वे पानन करेंगे । दामजी ने  
 स्वीकार कर लिया । मध्या समय एक बड़ी भीष्मि हुई । मासवीयत्री  
 ने उमसे जोरदार व्याख्यान दिया । एक बाद श्रीतृप्यदाय बान ।  
 परिचय पर हुआ कि विपणियों की जीत हुई । मासवीयत्री  
 उनिक से सुन नहीं हुए और वने पर बग वि व बहमत्र का  
 भाव करेंगे । तन्न्तर मासवीयत्री ने निमंत्रित मन्त्राय से दाम

माँगी और उन्हें जाने से रोक दिया। दूसरे दिन मामबीयजी से दामजी को बुलवाया और पीठ पर हाथ फेरते हुए आशीर्वाद दिया और कहा तुमन हमसे मोर्चा सकर हमें हराया हम तुमस बहुत प्रसन्न हैं। तुम जीवन में बहुत कुछ काम कर सकोगे। तुम लोग शापद मुझे माइरेन ममझते हो। तुम्हें एन बात बताऊ। १८२२ में अजमेर कागमपिरेसी काग म मेरे उपर बारट निकल चुका है। दासजी का कण्ठ अवच्छ हो गया और घाँसों से अशु बहात हुए वे मामबीयजी के घण्टों में त मस्तक हो गये।

इसके कुछ समय बाद एक विचित्र घटना घटी। दासजी स्वयं शान्तिवादी विचारों के तो थे ही उनके कई मित्र मयंकर शान्तिकारी थे। उनके माम वारंट का और वे प्रकण्ड (Under ground) रहते थे। ऐसा एक मित्र अपनी पत्नी के साथ बनारस का रहा था। पत्नी घामन्नप्रमथा थी। रास्ते में उसका पेट में दर्द हुआ और वह पत्थर चलने में असमथ हो गयी। मित्र महोदय ने अपनी पत्नी को बनारस से ४५ मील दूर पर एक बूझ के सुरसुत में छिपा दिया और दासजी को तब मेजी रि ये मोटर का प्रबन्ध कर उनकी पत्नी को निवा जाय और फिनी औरतों के अस्पृशान में प्रसन्न क हेतु तुन्त्र भरती करा हैं। दासजी ने जब यह सुना तो उनके होरा उड गय। भाग-भागे मामबीयजी के मत्रोटरी पतजी के पास गये और उपकृतपति थी मोटर माँगी। पतजी से देने का दन्तार कर लिया और कहा रि बिना मामबीयजी की आज्ञा क मोटर नहीं मिन सकती। दामजी दोड़े-गोड़े मामबीयजी के निवास स्थान पर गये। उनके पुत्र वर्ग मोरद थ। उन्होंने कहा मामबीयजी विधाय कर रहे है अमी मंत्र नहीं हो सकती। दासजी ने आप देगा न साथ दरवाजा बानकर भीतर पुग गये। मामबीयजी मरे थे। दामजी को देखकर बड़ी श्मिगता बाद 'बहा दासजी! तना घबराये हुए क्यों मामूम होत हो! आमो बटो। दासजी

ने गड़े ही गड़े घोड़े में मग बुलान्त कह टागा। उस मुनके मान  
 भीपत्री उठ बटे और नाप म भाकर बान तुमरो परम नहीं  
 आती। तुम बड़े अन्तिवारी बनन हा। वही पर बहु भावप्रमवा  
 है और पीदा में पेड व सीचे पड़ी है और तुम पंतजा म और हमम  
 मोटर मागत फिर रहे हो। क्या नयी तुमन माटर जवम्पी एल  
 लिया और गुन ड्राइर कर बड़ का कर्ती कर तक अन्तान नहीं  
 म गये। हमारी मात्र जल्दी मकर जाओ और उम अम्पताम  
 म मनी करामो। जब तर दान्ति-पूषक प्रमर न हो जाय  
 तुम अम्पताम ही में रूना। गर्भ व निण पार गो मरया  
 मते जाओ। और जो बुद्ध गव लगया हम नो। और ह्य स्वय  
 उगकी दग रेग व निण आगे। दागत्रा पोगन मात्र मेबर गय  
 और बहु को अम्पताम व प्रापेट पाठ में मरती कर लिया। वही  
 उसका शान्तिपूषक प्रमर हुआ। जब तर बहु अम्पताम म दिन  
 पात्र नहीं हुई प्रतिदिन मानबीपत्रा उसका शान-बान मने जान  
 थे। और तुम गव उन्ने अान पाग म लिया।

हम मानबीपत्री को 'माइटे' कह या महामानव

हम पुन यंत्रि स समन्त के लिए भाव पर बार फिर वाद  
 कर से दि उतरा परिवार एक परम मागवत परिवार या घोर  
 यह मगवान् म निष्ठा उस परिवार की क<sup>०</sup> पीक्षियों की पदक  
 गमनि थी शिमक बन पर वही मुग और शान्ति मग बनी राती  
 थी। संसृत माहिय बत्राठा है कि मारी (मग-उमनि) कहती है

दुष्कण्ड वारावता यत्र दुःखी यत्र भावमना।

अरुणदा कर्तिय च तत्र दुष्ण कथास्य ॥

जि हे दुष्ण! त्रिग परिवार म उपेद बद्धार गव है जहाँ पर  
 की मानरित प्रमप्र-ददना रूनी है और जहाँ रवना दीना-रिडरिड  
 म<sup>०</sup> हाती वहाँ में निराम करवा है।

और माम्भीयजी मी पानी मुमनिपात के धनिय गोप की भाँति बिघ्न-बाधाओं से विषयित न होते हुए मुक्तपूर्वक जीवन-यापन करते थे । धनिय नाम का एक पवित्र परिवारवाला कर्मठ गोप था । धनपोर बुष्टि हो रही है । धनिय नाम का गोप माहस्य्य जीवन के सरल मुग्या की प्राप्ति के वाग्ग्य अयमी बन्नी में निश्चिन्त बैंग हुआ दबराज इन्द्र को चुनीली दे रहा है —

बबोरनो बुडलीरोज्ज्मग्मि  
धनुरीरे मग्गिया लमानवातो ।  
एम्मापुटि धग्गितोविग्गि  
एव वे एवपमी बवस्स देव ॥

मेरा यही दूध पीर और पत्र हुआ मोजन यथेष्ट है । नदी किनारे में आने परिवार के साथ एक मी बना हुई बुष्टियों में रहता है । मेरी कृती गूब छार्द हुई है और उममें अग्नि प्रग्यमित है । हे देव ! तुम जितना चाहो बरसो । मेरा कुछ नहीं बिगाड सकने ।

एवपए बडना न बिग्गिरे  
बवोरे इग्गु दिए बरन्ति वाधो ।  
बुठ्ठिदि सहेसु माग्ग  
एव वे एवपमी एवस्स देव ॥

मेरे यही न मग्गिया है न मग्गुर । मेरे कएर म गावों के लिए हरी-हरी पास मग्गुता रही है । यही बरती हुई मेरी लगकी मायें बर्गों का बम महने म समर्थ हैं । देव ! तुम जितना चाहो बरस सो ।

मोरी मम धानवा धमोला  
धोपरत्त संवन्निपा मन्नाग ।  
एग्गना न मुग्गानि दिग्गि वार्त्त  
एव वे एवपमी एवस्स देव ॥

मेरी यानी सुन्दर है। उमर का मन सुदृढ़ है। यह बहुत दिनों से  
मेरी महर्षिमिणी है और मुझमें अनुरक्त है। उमर विषय में मैंने  
कभी कोई अनुचित बात नहीं मानी। हे देव ! तुम जितना चाहो  
बरसो ।

वैश्वानरोऽहमस्मि  
पुत्रा च मे समाविषा वारोगा ।  
सेसं च कुप्यमि विविच वारं  
एव वे वाचस्पती वरान्न देव ॥

मैं अपनी कमाई में अपना मरुत-बोगरुत करता हूँ, अर्थात्  
हत्याप का साक्षात् हाराम का नहीं। मेरे पुत्र और पुत्रियाँ स्वस्थ  
एवं मीरोग हैं। उनके सम्बन्ध में भी मैंने कभी कोई अनुचित बात  
नहीं मानी। देव ! तुम जितना चाहो बरसो ।

अग्निवचना, अग्नि देवता  
गोपारतिवो वरानिवो च अग्नि ।  
उमरो वि मरुतवो च अग्नि  
एव वे वाचस्पती वरान्न देव ॥

मग गाँउ बगरे-बगियों में भरा है। मायिन पायें भी उखने हैं।  
उममें माँइ भी हैं। देव ! तुम जितना चाहो बरसो ।

गिता विषाया अन्वयेषो  
वामा मरुतवो मवा सुमदाना ।  
वदि विमिष्टमि देवुवनि देव  
एव वे वाचस्पती वरान्न देव

पायों के गूटे हटना में गड़े हुए हैं। मुख की गूठ बड़ी हुई  
रिश्तों में भी और पोड़ी हैं। माँइ का उह नहीं ताँइ मरुत। देव !  
तुम जितना चाहो बरसो ।

अग्नि इम मरुतवो च विना उममुक्त एव ही वा एवाक  
परान्न च पर इह प्रार्थन मारुतवो वरान्न च अन्वयेषो वा । इह

एक मुन्नी एवं मनुष्य प्रामाण्य परिवार की इतनी सुन्दर माँकी है और फिर मानवीयता के मुन्नी परिवार में एक इतना माम्य है कि मैं उनके पूरे का पूरा उद्धार करने का लोभ नहीं मन्गण का सवा। पाठक मुझे क्षमा करेंगे।

मामवीयता की एक मगी बड़ी बहिन थी। उसका नाम मुमद्रा था। मम्मूण परिवार उन्हें आन्तर स विट्टी बुधा कहता था परि वार व बाहर के माग भी उन्हें विट्टी बुधा व नाम म ही पुकारने थे। मैं भी उन्हें विट्टी बुधा ही कहता था और बहुत दिना तक मैंने जानता था कि वे मामवीयता की मगा बहिन हैं। यह तो २ संस्मरण विग्रने बठा तो मैंने अपनी बहिन सोमायबनी विग्न मरियाया। विट्टी बुधा मिर्जापुर में ध्याही था और बाल-विषय थी। विषया होने ही ठकर पिया व० प्रजनायत्री उन्हें अपने पर निवा माये और अपने दुष्कृत्य राधा-दुष्कृत्य की जोड़ी के मामने लड़ी कर रहा कि 'बेटी' अब मुम्हार यही पति है और यही मुम्हार पुत्र है। निर्दोष बच्ची मीबसरी भी मुम्ने नेता लड़ी रही जैसे बह रही हो—

एक म कर मेरी गुन्य धांगों पर।

तू भी धांगु बगाये जाने है ॥

और उसने अपने दबनुन्य पिता के आग को अपने आसन के दोर म बाँधकर जीवन-पर्यन्त निवाया। ८६ दर्य की अवस्था में उनका देगल्य ल गया। बधम्य की दम मर्मी और दुर्मय्य भगधि म विट्टी बुधा में अपने स्पष्टार लबे आनरग्य म कभी काँ पसी बान मगी की त्रिम परिवार का मग्नक मय हो।

उन देगल्य के पोरे ही पत्न्य की दो लल लोड़ी-लोड़ी पन्नायें हैं। उन परिवार के म्निग्य बातावरग्य पर प्रपारा पडता है अन — हे निगता है। मेरी बहिन सोमायता विग्न को य बहुत प्यार करती थी। पिता के बयन से मन्जान की और वे दोर्गो

कम्यारों की। मानवीयजी की बड़ा इच्छा थी कि विद्या के मो लक्ष्य  
 पुत्र हा जाय जस उनका अन्य पुत्रा न थ। सम्भवत उनका यह  
 रथान रखा हा कि पुत्र न होने ग सो० विद्या का जी छोड गृहता  
 हा। परन्तु पौत्र की प्रतीक्षा करते मानवीयजी को काम थप बीत  
 गय। एसीमय थप यह अवसर आ ही सा गया। पर की सर्वा  
 गियां पुत्र-पुत्रा सभी सर्वा करने लगा। बिट्टी यथा न वेत्त म  
 बात महा पक्षी थी। उन्हने मानवीयजी म बना मान्य व सोग  
 पुत्र-पुत्र बात कृता है। कही दुर्दा म मान्य छिपता है। मान्य  
 वीयजी बह प्रगप्र हूण यन्नि भीतर ग जा पुत्र पुत्र करता था।  
 बिट्टी बुधा म इस दुम गमापार को मुनकर धीर ग बात जस  
 माने ही म कहत हा 'पुत्रपूर्वोमगां आयुष्मता न्यायम्' (मनुस्मृति)  
 आयुष्मता ( विद्या ) की गो म पुत्र म भरी दगू गा। 'नर मु  
 ग निरानी बन पूरी उन्ही। समय ग मर्मीय का जन्म हुआ।  
 तय तक बिट्टी हुआ बहूत सग गया थी। दिन गय राधिकाजी क  
 पुत्रने कर्दों की गठरी सर क मीष मोर नर गहन सिगलने रग  
 बेनिग मोर को पुत्रारनी गना थी कि क राधिकाजी क कर्दों  
 को धो द और गहना को समथना द। राधिकाजी को रथ रथ दर  
 मन्त्री मगाना उनर कर्दा को धोना धार गना को मगाना  
 गना उनका अग्या थप म निय का काम था। परन्तु अय क थार  
 पापी म मग गयी थी। उन कामों क निग उन्हे दूगरे का मुँद  
 जाना पदा था। मर्मीय जय बाहु दिम का हूपा गो उन्हने  
 कहा क। अर उन्हा पक्षी कजा दो और न्याय भी दा।  
 पयावी ( सिगाप्र विरगा ) गा हो मजा पर त्रिग त्रि गायन  
 ममारो की निदि निरिपत्र ह की गम त्रि बिट्टी हुआ राधिका  
 का के पर क गहरे उनर गाय म जा बना। बि० मर्मीय का  
 पया हा गना है और उग मर गने मर् की पोत्रा सोममवनी  
 उ गय० ग० मगीन-विशाल-हारी है।



एक छोटी-सी घटना जो मामबीपत्री के पुत्र प० गोविन्द मासवीय के विवाह से सम्बन्धित है याद आ गयी। उस सियता है। पि० गोविन्द का विवाह प० बासकृष्ण मट्ट की पौत्री से मामबीपत्री की पत्नी के मर्जी के विभाव से हुआ था। मामबीपत्री ने उस स्वीकार कर लिया था अतः पतिवर्धमा सो० कुन्दन देवी ने विरोध नहीं किया। जब जबधू सी० उपा घर में आई तो सास को परछल करना चाहिए था पर सो० कुन्दन देवी सर भुञ्जकर घंटी रहीं। परछल के लिए नहीं उठीं। एब मौजाई ने तुरन्त चुन्की ली बासी "मदन! कैंकेयी कोप मवन में बठी हैं। पहिसे उन्हें तो मनाओ कि उठकर परछल करें तब प्रागे टिफुला (बबाहिक रीत रम्म) बली। मामबीपत्री ने ईपत्-हास्य से कहा तो हाँ, हाँ पर अपनी पत्नी से कुछ नहीं कहा और वे 'बिनापितारम्म' घर भुञ्जये बँठी रहीं। मौजाई ने उठकर परछल कर दिया। सो० कुन्दन देवी की बाठ रह गयी। अमरा सी० उपा ने उन्हें अपनी सेवा से इतना मोठु किया कि वे अपनी पत्नीहूँ में सबसे अधिक उस प्यार करने लगीं।

मामबीपत्री जब कभी प्रयाग से बाहर आते थे—और वे प्राये दिन जाते थे—तो वे मवप्रथम वग बन्धुपर परिवार के इष्टतम सापाकृष्ण के मन्दिर में जाकर नतमस्तक होते थे। तदनन्तर वे अपनी बहिन बिट्टी बुमा से थोड़ी देर उन्हें दुखारत थे। इस कार्य-क्रम में कभी पत्र नहीं पदा।

कभी कभी ही की बात है। मैंने अपनी बहिन सी० बिद्या ने कहा कि मैं मामबीपत्री के सम्मरणो में तुम्हारी मास की 'शरीर' शम्भो में गीतगा। बोनी "भया! तुम्हें तो उनसे कभी बात नहीं पदा। तुम उन्हें किस ममक सदन हो? उनका पित्रण करना गदब बात नहीं है। वह तुम्हारे इन का नहीं है।" मैंने कहा तुमम हम सब पूछ लिये। बोनी 'भैया' सिगये पुन दरबार मनी जाते। दुग्गा

हम न करो। हमें तो इसी में मन्देह है कि बाजूजी (मापवीयजी) उनका ठीक-ठीक मूल्यांकन कर सके।" पर जब उसने मुझ बटि बढ़ देता तो मुझमें बहुत देर बातें थीं और मैं सन्तुष्ट होकर पर सोता।

संस्मरण के कुछ पात्र ठेस हीठ होने हैं कि बार-बार आपकी यह में अनाहत आकर राड़े हो जात हैं। यद्यपि आप उनके सम्बन्ध में थोड़ा-बहुत विचार चुने हैं परन्तु इससे उनको सन्तोष नहीं होता। हममें दोष उनका नहीं है। दोष संस्मरण-भगवत् का है। यदि आप किसी अतिथि को पेट भर भोजन देंगे तो चाहे वह थोड़ी देर के लिए खसा जाय पर वह फिर आपका दरवाजा पीटेंगा और आपको उसके लिए दरवाजा खोलना पड़ेगा चाहे उनके कारण अन्य सम्मान्य अतिथियों को थोड़ा खना पड़े।

एसी ही एक पात्र है सोभाम्यवती कुन्दन देवी। उनके सम्बन्ध में पहिले कुछ विचार चुका है पर अब देगता है कि यह पर्याप्त न था। जिस पात्र का संस्मरण भाष्य के शाय जीवन-व्ययत बोधी दामन का मा रहा हो जिनका मोक्ष्य एवं साहस्य स उगे अपनी कमश्रुति में निरंतर प्रेरणा और उत्साह मिलता रहा हो जो उमर गार्हस्थ्य जीवन का सहाय रहा हो उमर लिए आपको दरवाजा खोलना पड़ेगा चाहे जितनी बार और जिन समय बढ़ चाहे।

सोभाम्यवती कुन्दन देवी में गुण्य भी मी शान्त शक्ति थी थी का मा भाव्य का माता का वास्तव्य था। ओदा भूऊ बरे और गौधी गाम तड़े का अभाव था। जिसने ६० वर्ष बिना किसी भागे के गंगास्नान का करने शरीर एवं आत्मा को परिष्कृत किया हो और मर्यादा पति का मुटु आटना जिसका प्रथम काम हो लेवी एवं सुर्याश्रिता पत्नी काकर मापवीयजी उा ह्वागने से तो हममें क्या आश्चर्य था।

कुन्दन देवी अपनी गार्हस्थ्य पर इस प्रकार लगी थी जिनके

ममवृत्तिर्ध्वनि मार्गं च समये यत्न ततोति शिष्यताम् ।  
 प्रविधिच्छति लोभमोज्ज्वला त विवत्त्वानिब मैद्विनीपति ॥  
 मूर्ख जिसकी रमियाँ माधारणतया प्राप्त एवं सार्यकाल में  
 मुगद होती हैं पर मध्याह्न में उन्हें कोई सहन नहीं कर सकता ।  
 मालदीपजी और श्री-शिक्षा

रिया की शिक्षा भी और उनका क्या दृष्टिकोण था इसको  
 विचार करने में यह न भूलना चाहिए कि जो कुछ काम वे करते  
 हैं जो कुछ विचार उनके मन में आते थे चाहे वे शिक्षा-सम्बन्धी  
 हों अथवा सामाजिक या राजनीतिक उन सबको वे समझी बगोटी  
 पर बसाते थे और जब वे उम्र पर उमर उतरते थे तभी उसका अनु-  
 मार व काम करते थे । रियाँ और बालिकाओं की शिक्षा के सम्बन्ध  
 में उनके दृष्टिकोण की परिधि यही विस्तृत थी । बेयन मूल और  
 बालिकाओं के मीमन मीमन नहीं थी । लक्ष्मियों के परिप निर्माण  
 पर वे जोर और ध्यान देते । जब कभी कोई लड़का या लड़की  
 आगेवाप शुरू पर मायरीपजी में हस्ताक्षर करने के लिए बगुटा  
 या तो लड़कों व आगेवाप घर में यह निगरान हस्ताक्षर करते  
 थे

एतेन बहुश्रवण एव ध्यायेताप विद्या ।  
 देवप्रणयप्रवासात्मक सम्प्राप्तात् महा भव ॥

(माला ग प्रहासय ग ध्यायाम ग विद्या ग देवामक्ति मे और  
 आत्मायाग ग सारंदा गम्मान पान व योग्य बनो । ) और बालिका  
 काया व आगेवाप घर पर लिखते थे

मा र्बुधो ह्येन तो क्षीता तपी नमान ।  
 अथवा लक्ष्मियों लक्ष्मि रूप जीत-मुन-नाम ॥

ये दोना पर मायरीपजी ही व बनाये थे । मृगीग गान्त है कि  
 वे बालिकाओं व बालिका निर्माण पर शिक्षा जोर देते थे ।  
 मायरीपजी क मय मय शीव गुन गान पर एक प्रकार

आ गयी । एक घण्टा माघ मय व अवसर पर वे गंगास्नान करने गये थे । माघ में ईश्वरशरणाधीन हो कर मैं था । बाँध व नीचे हम साग पदम बस रहे थे । ईश्वरशरणाधीन भीड़ क बगल बृद्ध पीछे पड़ गये थे । हम दाना म पाहा ही दूर पर एक घंटीके मुन्दरी सम्बन्धी-जन्मगी पंजाबी लहरी लीने नीचे निय हुए विष्णुमह्य नाम का बगल पाठ करते मन्दगति से धर्मा जा रही थी । जैसे ही उस लहरी व पाठ की मधुर ध्वनि सामर्थ्यपत्री व बाना में पड़ी मासर्वापत्री न उमरी आर देगा और तुरन्त मुदकर धोन ईश्वरशरण ! जन्मी धाम्ना । श्यो उम लहरी को । अब हमारी बहुत और बेटीयाँ एसी होंगी । मासर्वापत्री की परिभाषा य उस लहरी का शीर्ष उमरी शान्तिता उमका सम्बा दरहरा बर उमरी शीर्ष निगाहे उमका स्वाभ्य उमकी मधुर बगल-ध्वनि म विष्णु मह्यनाम का पाठ यमी गी-शान्ता क आय-यव मंग थे । य मन्मा बान बटे

यथा ब्रह्मात्मराध्यामान् कष्टे कल्पानि रक्षता ।

तत्र च वाचोदय मन्मथविनिर्दिनम् ॥

—गजोपर

जैम पुत्र जन्म व मन्वाग म शिमो का गला सुगीता होगा है उमी गल पाठ-या" का शीर्ष जनक जन्मों व अध्याय म हाथा है ।

सन् १९१२ की बात है । एक दिन गीता-प्रथम व अवसर पर —ले जाय गयाओं एवं आचार्यों को उदयेग हैन एक बड़ा या ग्य विमानद म बहन विद्या ही पटना नमी है । इसीक माघ माघ पत्तिव बना" है । एक और पत्तिव दानों का मय वर दन म मंगल म मान होगा गला गीत्य पाठ होगा ।" एक दूसरे अवसर पर उमी । प्राण" के निशामी आचार्यों के परिचारा म ग । प्राण" म बन्ना बा- शि-परिपारवसे निशाय बाने का पत्तिव

कठ्य यह है कि व्यायाम करके शरीर बनावे। पहिले स्वास्थ्य सुधारे, फिर बिधा पढ़े। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन करे तो जीवन का साम उठा सकते हैं। नित्य सबेरे-शाम नियम से व्यायाम करे। शाम को खेल। मदान में बिबरे। जल्दी भोजन करे और नियम से नित्य अध्ययन करे। धार्मिक उत्सवों एकादशी-कृपा गीता प्रवचन आदि में उपस्थित रहे और बिद्वानों का उपदेश ल। उनका अनुभव ग्रहण करे और भारीवाण ल। अपनी रक्षा आप करे। हम माता स शिक्षा में और उनके उपदेश सुनें। ऐसे मासूम नहीं बिठने उपदेश उन्होंने छात्रों और छात्रानियों को समय-समय पर दिये हैं जिनसे सी-शिक्षा भी और मालवीयजी की पबित्र भावना का पता चलता है। एक स्थान पर आप लिखते हैं

शास्त्र बतलाता है कि धर्मार्थ काममोक्षाणां आरोग्य मूलका एणम् (धर्म काम और मोक्ष इन चारों पदार्थों के साधन का मूल कारण आरोग्य—नीरोगता तन्दुरस्ती के बिना इनमें से एक का भी साधन नहीं हो सकता। प्रत्येक ही और पुंस्य को उपिठ है कि किसी न किसी प्रकार का व्यायाम नित्य करे जिसमें धर्म के साधन धर्म के बमाने सुख के भोगने और अन्त में परमात्मा को प्राप्त करने के लिए उसकी जाया प्रयत्न और मन निर्मल बना रहे।

रूप निपी, बमरत करो निम्न करो हरि नाम।  
जिम्न से ब्यरत करो बुझे लख काम ॥

ममम्ब हिन्दू मन्त्रान के लिए शास्त्र में अनुसार मैने गंगे में हिन्दू धर्म का बुद्ध उपदेश निग दिया है। जो प्राणी पशु और मच्छिपूर्वक इस उपदेश को बनेगा बुद्ध इस मोक्ष में सुख और मान पावगा और परमोक्ष में परम पद को पहुँचेगा।

मापरोपरी के इस उपदेश को बि 'मातापूज्य है। हम माता के शिक्षा से और उनके उपदेश सुनें' पढ़कर मुझे VICTOR M

( विस्तर हूँगी ) का यह वाक्य सहसा याद आ गया । "To form the mind of a young girl all the nuns in the world are not equal to one mother ( बच्चा के मन को डालने के लिए दुनिया व बानवेट की सब मिश्रुणियाँ मिलकर एक माँ के बराबर नहीं हैं । )

महामनाजी सियों को पुरुषों व गौण स्थान नहीं देते थे जो शिशा के पुरुषों के लिए उपयोगी ममभूते थे उन सबको वे सियों एवं बालिकमार्ग के लिए उचित समझते थे । व चाहते थे कि सद् बियाँ और सियाँ मीठा और अल्पवयी के समान व पवित्र हों । वे चाहते थे कि आज्ञा के लक्षणों पर भी उनका चित्त ठोका ही मर्ब हो जसा महवि जनक को था और जो मीठा की अग्नि-परिष्कृति का हाथ मुनस्य त्रोप से गरज उठे थे— आह ! बोधमार्गिण 'अम्मत्समूतिपरिपोषणे' ( ओह ! अग्नि की क्या मजाल है कि बर हमारी मन्तान की परिष्कृति कर । ) और तब अल्पवयी ने उनका त्रोप यह कहकर शान्त किया था — सय्य मेनन् । यस्मां प्रति अग्निर्दिशि प्रतिनपून्यभाषति । मीतप्यन पर्या सप् । (भवभूति)

( आठ सब बहने हैं । मीठा व सामने पवित्रता में अग्नि बहने वाली है । मीठा कर देना ही पवित्रता कह देना है । )

मायवायवी का कहने से कि उनकी लक्ष्मियाँ गार्गी और धानेदी की तरह विदुषा हों जा बार्मीनि के आश्रम को छोड़कर अगस्त्य व विद्यालय में बह पढ़ने के लिए आ गयीं थी । क्योंकि वार्मीनि के आश्रम में मत्र और कुरा के मानन-मानन में अग्नि के ध्यस्त करने से विद्यालय में आश्चर्य पड़ता है । आश्रम स्वयं बर्ती है—

एतिस्यपाठयन्तुता प्रीति  
 बुद्धिमे उरुवर्धितो कर्त्तव्यः

मवभुति

बापेयी बननेवना मे कहनी है कि इस अगस्त्य के विद्यालय में बहुत से उद्गीष जानने वाले श्रुति गृहते हैं। उनसे वेदान्त विद्या पढ़ने के लिए मैं महर्षि वाल्मीकि के पास से यहाँ आ रही हूँ। (क्योंकि वहाँ अध्ययन में यही अङ्गण पढ़ रही है।)

मातृवीपजा तो इस प्रकार की ऊँची एवं पवित्र स्त्री-शिक्षा की कल्पना कर रहे थे। अतः उम्हाने अपनी हिन्दू विश्वविद्यालय में तिर्यों और महर्षिवा के लिए एक स्वतंत्र सामिज की स्थापना की जाती है। हर विषय में ऊँची से उँची शिक्षा के साथ छात्राओं को धर्म की शिक्षा दी जाती है।

एक समय तिसी अधिवक्त्र में वहाँ की प्रधानाचार्या ने अपने भाग्य में कहा था— मातृवीपजा छात्रों को पुत्रकृ और छात्राओं को अपनी पुत्री के समान मानने से और उनमें शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य तथा चरित्र संमन्थन पर बड़ाई से अधिा जोर देने से। वे कहते थे कि यही तो गीर्वाणा का पावन ग्योन है। कथुचित होने से शिक्षा विरुद्ध होकर शक्ति पहुँचानी है। छात्राओं के शिक्षण और चरित्र संमन्थन का उत्तरदायित्व से अध्यापकों पर रखने से और उन्हें बहुत गौरव प्राप्त करने से। छोटे में यह कहना काफी रोवा कि मातृवीपजा एक धर्मनिष्ठ गण्य जातक शिक्षाशास्त्री के जो गिरी और बापिराभा का सर्वोद्गीण सम्युदय प्राप्त थे और उनका ही चरित्र चरित्रम और प्रयत्न करने थे।

सन् १९०६ में मातृवीपजा ने स्वर्गीय पं० बाबूदत्त मद्र और गजानि पुत्रागमनाय शरण के मद्रयोग में प्रयाग में गीरी पाठशाळा की स्थापना की जो आर्य समाज उच्चतर माध्यमिक पाठशाला है और उसमें समस्त एक हजार गुरुद्वारा पढ़नी है।

## जमशनादा समारोह

३० दिसम्बर मनु १६ ? प्रयाग के त्रिगम में त्रिम्बरुद्वीप  
 रत्ना । आदिम भी वय पुष यवमा १६१० पीप कुपु ० बुधवार  
 वा श्राद्धवान बज्रकर २५  
 मिनर पर मानवीयकी वा जम  
 हुआ था ।

मानवीयकी की बगुनी  
 की विशेषता है गुण-खान्दा योग ।  
 मनसारक पदमा एक जानवा  
 एक एक टाला का योग पराजम  
 म्यात में है । मेरी तुष्ट बुद्धि  
 म जो लें पर में मं गुं और

जिन इस बात के दोहर हैं कि मानवीयकी का बंद गुड हृदय या  
 यस्मिन् में गुं अर्थात् निमय रद्वि और पर में शरीर पर  
 करादि ज्यते कर्म-ज्ञानन क निय ब जीरत भर मार मारे टिग्न  
 ट्टे । उन प्रों क प्रमाय की कयता का मागी एक रिदय को बर्ते  
 का त्रिगम है । त्रिगम गुं वा मनवा मनी है मानी मनी  
 जाती । इस क प्रमाव का बाई माने वा म माने ब गार्द पर  
 मार्मा क द्वारा मनरा एव है । त्रिगम प्र गा बन्व है—

“(3) makes visible to men his will in eve-  
 nt an obscure text written in a mysterious lan-  
 guage Men make their translations of it forth-  
 with hasty translations, incorrect full of faults,  
 omissions and misreadings. Very minds compe-  
 hend the divine tongue The most sagacious  
 the most calm the most profound decipher



slowly and when they arrive with their text, the need has long gone by" there are already twenty translations in the public square

(ईश्वर घटनाओं के द्वारा अपने विधान को व्यक्त करता है। यह विधान एक ऐसा दुर्बोध मूल पाठ है जिसकी अभिव्यक्ति रहस्य मयी भाषा में रहती है। लोग इस घटनाक्षपी मूल पाठ की व्याख्या तुरन्त करने लग जाते हैं। यह व्याख्या हड़बड़ी में की जाती है जो गमन, दोषों से मयी अशुची एवं अशुद्ध पाठ्युक्त होती है। बहुत ही बड़े मस्तिष्क विधि की भाषा को समझ सकते हैं। बड़े-बड़े कुराप्रबुद्धिवांस धान्त भाव से विचारक और प्रगाढ़ मनन करने वाले, बड़े प्रयत्न से ध्यान-धीन कर धीरे धीरे उस मूल-पाठ के रहस्य को खोजते हैं और जब उन घटनाओं से मूल-पाठ का पुनर्निर्माण करते हैं तब तक मदान में उस समय उसके बीसों अनुवाद पहिल से मीबूद रहते हैं, जिसमें इस पुनर्निर्मित मूल-पाठ की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती।)

मासवीपत्री के जन्म के समय विधि में उनके सलाह पर यह भी तिरा दिया था कि इस महापुरुष का देहावसान ब्रह्म २००३ मागशीर्ष कृष्ण तृतीया को होगा। परन्तु मस्तिगिरि विधिना तपापगने उसे पड़ सना उत्पत्ती में नहीं हो सकता। इस प्यर्ष के जीवन में मासवीपत्री के वापने में सवाट-सेग के अनुसार अनेकानेक घणायें हुए। उमरी अनेक व्यापार्यें भी हुईं। तिरनी व्यापार्यें अन्त-वर्ती में किना गमने-रूम गमन-यमन। फिर भी इन मय ममानोचनाओं को धर्म-कर्म में तोषकर यह कर्मठ पुण्य पुग की मांग का आर करले हुए आगे बढ़ता ही गया। परन्तु गभी लो डेम नहीं थे जो उन घटनाओं की म्द-वट अशुची व्याख्या करे। व उन घटनाया की गह्यार्द तक गये और उसे अशुची कय

मथर उद्यम म नवतीत निकाल लिया । इस एक विचारक से परिचित जवाहरमान मेहता ।

मानवीयरी के जन्मगतारनी ममारुह के उत्पादन करने के समय आ २९ दिसम्बर १९११ को एम्बेडके पाक इमाहाबा में स्थित प्रयाग मणीठ समिति के विशाम हाल में हुआ था मेहता जी ने महा-संगा-परीक्षक ( Auditor-General ) की मीति मानवीयरी सम्बन्धी उन घटनाओं की Balance sheet (सामान्य का मगा) और Profit and loss account (साम और हानि का मगा) को जतता के सामने रगा और उसी समय में करा—

भारतीय राजनीति में मानवीयरी एक दम शुरुआत के जितों ने न केवल राष्ट्रीय-आन्दोलन में एक महत्वपूर्ण भूमिका मगा की मरिणु काठिन के उदारमना तथा अपवर्णी बग को मिताने की एक कड़ी के रूप में काठिन की आ भारतीय स्वतंत्रता के प्रतीक के रूप में सबमाम्य रही-मगा की ।

मानवीयरी का स्वभाव मीठ और शुरुत पुर-असर था । निर्माण के लिए के निम्नतर प्रयास करने रहे परन्तु उमके करने का उद्यम धर्ममामन मरों था । परिवर्तन की और उनका मुकाबल था । इस सम्बन्ध में महामना मानवीयरी का शुरु-रिता मीथीरी म विचार-माम्य था ।

महामनारी शिक्षा की मगा के विरधी करने से मरिणु उमोंने हिन्दी तथा संस्कृत मगा की उमरिणु के लिए उम-मामन काम किया । के भारतीय संस्कृति के पौरक तथा सुगम्य था । भारतीय संस्कृति के मारण परिवर्तन मपारण मगने के लिए मगना प्रयत्न रीम रहे । उमोंने उमामिनों में मपमिणु की मरम के मरिणु मगने में मुख्य पौरक मरता संस्कृति और मर-मगा के मरिणु मरिणु मगने का उममर किया । महामना के मरिणु मगा और मरिणु

संस्कृति व भारतीयता की यह शिक्षा तथा प्रेरणा ही कि यदि वे भारतीय संस्कृति का उपजा करगे तो उनकी मौलिकता समाप्त हो जायगा और व विदेशी संस्कृति की कार्बन कापी मात्र रह जायगे ।

माम्नीयजी का मत था कि भारत को मूल जाना अपने को मूल जाना होगा । देश की समृद्धि के लिए आवश्यक है कि विज्ञान व बढ़ते हुए चरण के माय दश की पुरानी संस्कृति को सम्बद्ध किया जाय । महामना व इन विचारों से नमीहृत लनी चाहिए ।

महामना का सत्य था दश के लोगों को स्वराज्य के लिए तयार के ना एस व्यक्तिगत वा निर्माण करना जो अपने पर भरोसा रखे तथा सर ऊचा कर बन सके । शिक्षा का मुख्य उद्देश्य था देश के भावी निर्माताओं का तयार करना जो योग्य और सदास हों ।

महामना नितने महाम् राजनासिज दूरदश तथा देशमत्त थे, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हम इसी से मिल जाता है कि भरोसा तथा विज्ञान को उद्देश्य बनारस हिन्दू-विश्वविद्यालय में राष्ट्र के हित में प्रमुख स्थान प्रदान किया ।

बचान न ही मुझे महामना माम्नीयजी के सम्पर्क का अवसर मिला । मैं माम्नीयजी का अत्यधिक आदर करता था । मुकाबला में मैं जब ब्रिस्लायन ग मोटर आया तो भारतो मयल पर उनसे मिलना था, प्रश्न किया करता था और व मुझे समझाया करते थे । कर्मी-कर्मी मैं महामना से उत्तम जागा था पर व मदद बड़े भीडे, परन्तु पुस्तकालय लगी व मी शराभा का गुमापान कर दिया करते थे ।

जम औरवान महामना व प्रति गिराया बरत थे कि व शीम था । है । अरानी व आम में हम लगा ही गगना था ।

हम मुझा कब मिलो साबोतिदे उरुतत की बार ॥

एक बोई बरता है कुछ उनसे तो बार घाता हूँ मैं ॥

संगत में मैंने उम्र बसेम गीत का रगा बिय मेहखी ने  
 अपने अनुभव से मामबायत्री का अतिमिषट मण्डरु स भेग-मुनवर  
 उम तिन जमना क सामने प्रस्तुत दिया । हम बसलम गीत का  
 देगकर प्राकृत और लाग लगी में प्राकृत-ही-प्राकृत रहा ।  
 साम का कही पता नहा । अज मामबायत्री की मिल से बार  
 तीयां को मरुटा द्विविडड मिला ।

दूगरे तिन अर्थात् ३० दिग्म्वर को मामबायत्री का जम-दियर  
 था । यदपि उनका जम संध्या समय ए पत्रकर घोषण मित्र  
 पर हुआ था पर अरुनी भडासुलि भरगु बरन के लिए गानापित  
 जाता बार ही बने म आन-जान लगी थी । मामबायत्री के परिवार  
 का गिरी घने पहिल म मगवान् राषा-गृष्ण का भू गार कर रही  
 थी । एक ली बड़ी तन्मयना म रन रबर राधिरात्री के घरों म  
 मेरुनी मगा रही था । मैं तो वही आन मिर्गे क माप ममारोउ क  
 प्रबन्ध में हाव बना ही रहा था हम मरुनी क मगाने की प्रतियाका  
 देगार बाही देर क लिए मवार और गोदा-गोदा मा गदा रू  
 गया । मुझे तन्मत बिट्टी बुआ (मामबायत्री की बन्ति) की दा  
 आ गया, जिम्मान घने जीजन भर राधिरात्री क पररा में मरुनी  
 मगाई थी । सादर बिट्टी बुआ क मरन क बाण आज ही उन  
 पररा म हम तन्मयना क माप मरुनी मरुनी हा । एगा मरुता या  
 जम मेरुनी मगवाने क लिए राधिरात्री आन पर बडाने दता हो  
 और बिट्टी बुआ

बुआना मरुतरागारि

जिनेवदु-गारि कउमोव ।

—राधिरात्री

उमर बारुं क बिा क दुग म पुन-पन बादन म कही

रात्रिकात्री के बाह्यिने भंशुताभरणों से अलंकृत भगवान् कृष्ण जैसे गणिक्य के चरणों में मेंहूदी भग जाने की प्रतीक्षा में होठों में मुरझी लगाये रखे हों । उनके मिर पर रत्नों से जगमगाता मुकुट ऐसे वेदीप्यमान हो रहा था उस—

बिजाभिरस्योपरि भीमिनाजा

भानिमलीनामन्त्रोपसीमि ।

धनेकपानुष्पुरितानरासे-

सोवर्षमरयाङ्कति मन्त्रकारि ॥

—माप

(भगवान् भीकृष्ण के मस्तक पर विराजमान मुकुट की मणियों की विरासत एवं रंग-बिरंगी रत्नियों अनेक धातुओं के सम्मिश्रण से रंग-बिरंगी शिपाओं के समूहवास गोवर्धन पर्वत की शोभा का अनुकरण कर रही थीं ।)

मैं उस कदम एवं मापुर्ण-निमित्त कल्पना में बूढ़ उठरा ही रहा था कि एक कमकर्ता मे मुझे पुकारा और मे इस बुनिया में आ गया । जब मासवीयत्री के जन्म का मुहूर्त निकट आ रहा है और पड़ी के हाथ सौ वर्ष पीछे पलटकर ६ बजकर २४ मिनट के मिनट धीरे-धीरे अग्रसर हो रहे हैं । मैं लपककर मूर्तिकानुह के सामने गया । बोडरी के भीतर फूम मामाआ ग मूमजिजठ मामवीयत्री का तिल-चित्र रगा था । सामने बेदी पर एक बड़ी घाम में रगे हुए १०१ दीपक जल रहे हैं । बाहुर ठीक उस बोडरी के सामने हवन कुंड के पारों और मासवीयत्री ही की धर्मज्ञानोपदेश पात्रासा के १२ बेन्वानी धातुएँ मन्त्र बढवाठ कर रहे हैं । मासवीयत्री के पिप की ओर मन मग्न होकर मैंने उनका इस प्रकार अभिनन्दन किया—

हरतपं गम्रनि हेतुरेवम-

गुवाप्य बुर्वाचरिर्न इतं सुधे ।

धरतीरवाजी मधरीपवानं  
 ध्वनति वाजिनवेज्जि घोमताम् ॥

—माप

हे मगवन् । आगरा दरान शरीरधारियों को ठीका कानों (मृग  
 बतमान और मविष्य) में घोमता को देना है । वर्तमान कान में  
 दरान कगते ही पानों का मष्ट करता है । मविष्य क बत्ताज का  
 करण होता है और मृगवान में विषय मय मुराणों का परिणाम  
 गता है ।

जम ही देने अनिबान्न समाम किया तो गगता क्या है कि  
 श्री प्रमुदम ब्रह्मपागी करनी मापु-मगदनी एवं मष्ट क माप धा में  
 प्रवेश कर रहे है । आत ही मरप्रथम क गणाष्ट्य क विष्ट क  
 गामने मममग्न क ग और मूर्तिवा-मृग म रणे गग मापवायत्री क  
 चित्र क सामने विनयाना होकर अक्षय क घामन पर बठ गय ।  
 टवन धारम्भ हो गया और अमिहुण म आभुतिनी परने मर्गा ।  
 धारम्भ क मकर पूजागिनि क ब्रह्मपायीत्री आरति होदन रहे ।  
 ऐसा मगता या जम मगवान् अक्षय क पुमेष्टि धन कर छ हों ।  
 पर पदा की मूर्ति गुन मग्न क पाउ मविष्य परैब मदी । अ  
 जन्तो दुरित त्वय्यः । हवि का धूम बगावरण को परित्र एवं  
 जनता क अरिष्ट को नष्ट कर गय है । क पर एसा मग गग या  
 जमे—

आमोदवापर्जिबीपवाता-  
 द्विबीबीता मधरीप विना ।

—बुनागम

(कू कादि मयों की नगरी है जे मृष्टि क माप म दृष्टी पर  
 र कानी हो ) ।  
 पर के मीर तथा कान प्रान्त एवं मन्त्रों के गगा-कम  
 क है सिर मटमताई को प्रदाष्टि कान करने वि

साम्प्रदायिक जनता का ताबिशर्षा है। तनी मारी भीड़ इस छोटे-से स्थान में समा गयी।

इतने में घड़ी की सुई ६ बजकर ५४ मिनट पर आ गयी। पर न भीतर गलगा जनेन। शीघ्र और धंटे प्रद्विधान ब्रह्म उठे। वेद पाठ शिष्टिष्ठ स्वयं म जाने लगा। गिर्या भगल्लगान गाने मगीं और प्रयाग विश्व वि १ पय न संसृज त्रिभाग क पक्ष पतिष्ठठ गरस्वतीप्रसाध पनुबेदी ने जिन्होंने मासवीपजी के श्री धर्म ज्ञानोपदेश पाठगामा म अक्षारम्भ म सदा संसृज की पचतम शिशा पायी थी मासवीपजी क प्रतीन उनन चित्र की आरती उगाय। यह पं० सरस्वती प्रसादी का मोमाम्य था। सरस्वती न मानवीपजी की आरता उठाग। यह समुचित ही था। उस शंखनाद स बाहर प्रतीता करती हुई भीड़ को पता चल गया कि जम हो गया। बाहर प्रांगण में समानेह ममिति की ओर स रेजदरी मुटायी गयी उसी समय मगरप्रमुख श्री बालकृष्ण राव भीड़ के बीच स, माल धीपजी को अपनी धटाजनि अंगण करन क लिए, उनके घर की ओर जा रहे थे। गहना हाथ उठानर उठाने बहुत-से पैसे मूट लिये। निमट म पड़े हुए एक सम्प्रान्ठ व्यक्ति ने कहा—'राव ! हब भाव बटे सुन्दरे है। राव साहब प्रसूतप्रमति है। सुरन्त बोन उठे—मुगन क सित और यह बहुर और सम्भवतः अपनी ओर न बुद्ध मिसारर बहीं मुट्टा लिया। पता महीं उन सम्प्रान्ठ व्यक्ति न राव साहब क हास्य में कहु गये इस उत्तर की सम्भारता को गमभा था महीं।

उन बीच मासवीपजी के घृष्ट संतान एक विशाल कमरे में मजन-बीर्नेन का व्यागार निरन्तर चलता रहा। यज्ञ गमात करने के बाद प्रसुदन बल्लपारी की मजन मगटना इमम मम्मिसिगु हो गयी और बड़ी भूम म बीर्नेन जान लगा। यह 'गत्रिन्दि' अंगदुताग्र नादः (नि यज्ञ निरन्तर चलन वासा संगल-नामारोह) व्यागार

बसन्त ही रहा कि इतने में समागेह समिति के प्रधान मंत्री,  
परिष्ठ पद्मान्त मालवीय के साथ इन्दिराजी जाती हुई दिव्यनायो  
पढ़ीं ।  
हेतो वह—

वर्षिपाण्डुवृक्षरगोत्सुगर्भं  
इपत्तो विसोलकजरोरभाजसम् ।  
कवराय भूतिरपवा शरीरिलो  
कमनामनेव गृमेति 'इतिहास' ॥

(भावार्थ—पाण्डु एवं कृष्ण गाम्नां स मुद्गर, केण-मम्मर से  
भानुवृत्त मुग पारण करने वाली भूतिमयी करण क समान अपनी  
माया कमला क समान मुगधानी इन्दिराजी मालवीयजी क गृह  
को ओर जा रही हैं ) । पर क भीतर प्रवेश कर उन्होंने प्रथम  
मालवीयजी क कृम-बता का प्रणाम किया और फिर भूतिवाण्डु  
में प्रतिष्ठित मालवीयजी के चित्र पर बड़े आदर स पुष्पोद्धार द्वारा  
अपनी शर्माञ्जलि अर्पण की ।

चोटी देर धजा से बर्ण गयी रहार इन्दिराजी घर के बाहर  
आईं । द्वार ही पर प्रणाम-विचारण हो रहा था । उन्होंने आन्तरिक  
प्रणाम करण किया और चोड़ा या अपने निचे हाथ में सहर शेर  
बर्णों पर बर्णों की बाँट किया ।

भीर धीरे-धीरे लम्बे सर्ग और सोग मुग्धिया से घर क भीतर  
जाकर अपनी शर्माञ्जलि अर्पण करने लगे । यह कम राठ को बटु  
देर तक जारी रहा ।

गन्धग घाण्डु बड़े रानि को धीरे-धीरे अपनी आप । उन्होंने  
मालवीयजी के गमय में बारी-बारी विश्व-विषय में बातचीत का  
लम्० ए० तर गड परीक्षाये पाग की है । उष ज्ञानिवादी प्रवृत्ति  
के लोके हुए और आदेश-ल विद्वानिवाक में राजनीतिक कान्यो



लनों में मुठभेड़ करते हुए भी मानवीयजी उनको बहुत प्यार करते थे और दामजी उनके अनन्य मरुत थे। वे अम्बस्व थे पर यह कैसे हो सकता था कि इस पूण्य अवसर पर वे अपनी यष्टीजति न व्यथ करें। अम्बस्व हान हुए भी जब जी न माना तो बंजा ही गया। तब तक भीड़ छूट गयी थी। वे आकर ठीक मानवीयजी के चित्र के सामने बैठ गये और उनको तनटन निहारने लगे। मुझसे उनका हृदय में क्या टीस उठी कि उनकी आँखों से टन-टप आँसू झरने लगे। मैं तबका यह व्यापार देख रहा था। मैंने मन ही मन उक्त कहा—

मय त बाष्पीपराश्रित इव नुरत-भङ्गितरो  
चिन्तांगपाराभिन्नु टनि परलो ब्रजराजः ।  
निष्करोव्यापेण स्फुरदपरनामानुत्तवा  
श्रीबाभुभेयो मयनि चिरतराप्पामहुरप ॥

— मयभृति

(यह तुम्हारे आँसुका का समूह दूरी हुई मोती की माला की भाँति जर्जरित होकर पृथ्वी पर गिर रहा है और यद्यपि तुमने अपने हृदय के आकाश का बहुत बृहत् रोशने का प्रयत्न किया है परन्तु तुम्हारे नाक और होठों के फटने से वह आकाश स्पष्ट हो जाता है।) मुझे दामजी पर दया आ गयी। मैंने कहा— दामजी! अब रोना बन्द करो। यमो। दामजी कातर नेत्रों में मर्गी और दगने लगे जग बन्द रह हों

बचने-बचने बनेके आँसु ।  
यत्र रोना है जोई इती मती है ॥

मातृम नहीं बोन-बोन भी मानवीयजी में सम्बन्धित, मधु स्मृतिर्या उनसे हृदय की मय गयी थी।

यत्र प्रभार था मानवीयजी का काशी-विश्वविद्यालय के छात्रों

पर साहू के मयोर त्रान्तिवारी हा बपों न हों। मुना है, स्वामी रामतीष के मायमे मिहू भी दुम दबाकर बठ जाता था।

मिने इस समारोह का बहुत बिस्तार से इमतिा किया कि एतना पुनीत एवं हृदयवाही समारोह प्रयाग के इतिहास में पहिन कभी नहीं हुआ था। हमम पता चलता है कि जनता के हृदय में माझबीपजी के प्रति किननी असीम प्रदा विनना का प्र किना प्रेम था।

मीड और मीड के हृदय में प्रायः मन्त्रा होता है। पररमी की एक कथावत है कि 'परवेही चौठे निगर घामाम पीले दीग रण्ड'—गरीब का तपडा होना एक पीडा है। उममें मूजन होना विपत्तन दूसरी पीडा है। हम समारोह की मीड तगदी की इममें मूजन नहीं थी। अतः उमरे विमूत बरुन को जगाकर गगना मेरा ध्येय है। अभी तो हम समारोह का एक एक अयदक भागों के मायमे भाष रहा है। आगे चलकर में ही काम के प्रनाव म म्मर्तण्य होन म जानेगे।

समारोह समाप्त हो गया। मय सोय अदने अदने घर घने गय। घर का हृदय यातायत एकदम शांत हो गया। म्मबात् कृष्णबन्धु मी अरने अरने उमानक पणित बजनाय बजुँदी को महामना म्मा पुनरुत्त दवा विग्राम बग्ने बने म्म। मन्दि का हायदक बग्ने हा गया। भीतर बबल म्मबात् कृष्ण और म्मि/बाजी रण म्मी। उम समय उम प्रगाल्य मन्दि की लगी लोका ह्म उम

रेविय रतिबनेय अगेर

केवताविपदमर्पिताय।

कण्डमात बजरा-वात-विदर

केवने-ह्मनुताण्यदेये।

—मय

(परिहार के योगों म्म ह्मन त्रींदा में विरत रणनी म्म कृष्ण

अबन बबल मयबान् विष्णु और सरुमी स भाषित युगान्तकामिक समुद्र के समान सगने मगा । )

मैं घर लौट आया । देर तक नींद नहीं आई । इस सब व्यापार को देखकर मेरा मन सहसा ५० वष पीछे लौट गया । उस समय ब्रजनाथजी और महामनाजी दोनों ही जीबिठ थे । प्रत्येक वष कृष्णजन्माष्टमी पर इसी घर में धूम-धाम से जन्मोत्सव होता था । पिता और पुत्र दोनों ही बड़े धाय स इन उत्सवों में सम्मिलित होते थे । भजन-वर्तन का अच्छा आयोजन होता था । नगर के नामी गद्दे बुझाये जाते थे । सुतिका-गृह में पिछे डासकर खियों का समूह बठ्ठा था । मामबीयजी की धर्मपत्नी सोमाम्मवती बुन्दन देवी उलका ममाजन करती थीं । प्रांगण में महामनाजी सब शोर्गों को आदर स बिटाते थे । इन अवसरों पर मेरे एक अति निरक्त सम्बन्धी संगीत के मर्मज्ञ एवं नगर क प्रमुख रईस पं० ब्रजमोहन दुबे हारमोनियम बजाते थे । बहुत घण्टा बजाते थे । मगर के दूसरे रईस—नाम भूपता हैं—याद आ गया साक्षा दुर्गाप्रसाद थे—इनका गायन बड़ा मधुर होता था । ये दोनों व्यक्ति प्रतिबर्ष सम्भव में सम्मिलित होते थे । मामबीयजी इन दोनों का बहुत आदर करते थे । टाऊरजी के टीर सामने बालाम में ब्रजनाथजी अपनी बहुत सी बागुरी मेकर उनके छिद्रों को रेत-घात कर और बजा-बजाकर हारमोनियम के स्वर से मिलाते रहते थे । इसमें बड़ी देर लगती थी । तबसे का मित्राणा उसके आगे मग मारे । उन स्थित लोगों का धर्म दृष्टता रहता था परन्तु मासबीयजी का धर्म मधीम था । वे अपनी गृह्य मुम्बान से मृदुस स्वरों में पिता स बोलते जाते थे उस स्थि को थोड़ा घोर रोग सीजिये तो ठीक हो जादगी । राम राम बरके मुग्धी का स्वर मिस गया । ब्रजनाथ जी ने बागुरी के परीणणाम दो एक मिनट उठ बजाया और फिर बागुरी मरे नहीं म करने पुत्र को निहारकर उठेने

सीमुरिया की भोज में रख दिया और एक प्रचुरमित्र हाथ जैसे धनुष  
 उस में उनकी जीन हुई हो। लोगों की जान में जान भावी और  
 गायन आरम्भ हो गया।

प्रथम वय में इन उम्परां के लिए उम्पुन ही नहीं आइल था  
 होता था। गायन के लिए ही म उगरी प्रतीति करना रहता था।  
 मार्ग में पृथि ता होती ही है। यदि किया वय उभी समय बाद  
 उमड़ भाव और मुझे बदर भारी ही था जी पुन-पुन करने लगता  
 था। मरे मकान और मानवीपत्री के इन पद-पद के बीच में कवन  
 एक बाजार है। उस ही उनके घर में तबल पर पाव पड़ी में मपुर  
 की भक्ति गान उगरे मनुन लगता था और यह जानकर कि  
 गायन आरम्भ होने ही जाता है में सभी-गयां उनक घर का भार  
 भाव गढ़ा होता था।

एक वय उस उम्परा में बड़ा मजे गर बात हुई जिसकी म सभी  
 तक नहीं मया। गायन के निचे सभी माऊ रीवार ही पुरु ध  
 उरनु मंगिया मरी आना था। सुनेनी गाम रह थे। लोग उता  
 बन हो रू ध। परतु मापर्व-पत्री भरना मपुर बा-बात में मर  
 का लगाव थे। सुने म एक व्यक्ति ने जिसकी नादी गनदुके धी  
 बर म प्रगत किया। दूर ही म उस दगर म सुनेनी उरव पर—  
 "सभी तक नहीं मर पाए थे। पर भी ना बिना मरीं के। यह  
 व्यक्ति मोपता गा गढ़ा र मया। मैं ला उह द-वत ही  
 निश या बनें के उम मून के धारार ये जिसमें मैं उनक  
 निर्माण म शिवा पानी प। व जाने छात्रों का धरुता निश  
 बना थे जिस में भर सब मया मरी था। नगर के एक केरेर  
 मंगिया म उनका म-गाम्य था म म दुर्जे धारा गा मय।  
 मरीं की मय उनक मनुष्य म गा मया दनु मरीं म उर  
 का बहुरा लग। सुने ता प्रमता हुई कि मर मापरां  
 धरु मरुत दुबे न उरीं का का बामा ये निश पर मरुतुकी

ने हंसकर उनसे क्षमा मागना की और उन्हें बड़े आदर से बैठाया ।  
मुराीजी पानी-पानी हो गये ।

### मासर्थायजी—एक महान् पुण्य

महान् संस्कृत का एक छोटा-सा शब्द है जिसके पर्यायवाची शब्द तो अनेक हैं परन्तु इस शब्द की व्याख्या करना असम्भव है । काण्ड महत् का आरम्भ उस स्थान से होता है जहाँ पर साधारणता समाप्त होती है । इस स्थान से बहू कितने ऊपर तक जायगा यह युक्ति से पर है । किसी महान् पुण्य की तुलना किसी दूसरे महान् पुण्य से नहीं की जा सकती । महानता बंधितक होती है अतएव अनुपमेय है । मागर की उपमा नहीं की जा सकती । मागर मागद्यपम । ईश्वर के पर्यायवाची शब्द अनेक हैं । पर उममे व्याख्या नहीं हो सकती ।

हरिर्वर्षकं पुरपोत्तमं स्मृती

मदे वरस्यम्बक एव मागरः ।

तथा त्रिभुजा मुनयः शतत्रयु

त्रिभोगामी न हि शय्य एव नः ॥

इस कथन है कि जिन प्रकार हरि की पुण्योत्तम बट्टने हैं और मदेवक को व्याख्या उगी प्रकार मुनि लोग मुझे शतत्रयु के नाम से जानते हैं । यह शब्द किसी ब्रह्म के लिए प्रयुक्त नहीं हो सकता । उरू गाण्य भी बताया है—

यः पुण्ये हो लडा क्या है ।

तथा लडा १ और क्या है ॥

उगी प्रकार मगमता वन्दित मानमोहन माजरीय जी की तुलना किसी अन्य महान् पुण्य के साथ नहीं की जा सकती है । हम उनके महान् का घोदा-बाना जान उनके सम्भरणों से बन गया है । बः भी भवती-भवती बद्धि के अनुसार । महामनाजी हैं

बन्धा की मा मरुता की—

सज्जने न शक्तिः प्रि परो  
बन्धुरेव भवति बन्धाविरा ।  
बोधयेति तव प्रियं बरन्  
द्वोमनात्र भवतव भूपने ॥

( मायागण जन का यदि अल्पचित् प्रशंसा की जाय—चाहे वह उमरे योग्य हो अथवा न हो—उसको सज्जा नहीं मान्य होगी। प्रशंसा करने वाला ही सज्जित हो जाता है। परन्तु आरंभ प्रशंसा करने में हमें तनिक भी सज्जा नहीं लगती। कारण भाव देने मतान है कि हम कितनी भी आभरी प्रशंसा करें वह दोषी ही होगी। एक प्रतिकूल घाती मरुता क कारण भाव ही सज्जा का अनुभव करने मतान है।) यही कारण है कि बन्धे उक्त बड़े प्रिय थे। मानवीयरी जब नवीताम जान थे तो पण्डित मुन्दर मायरा के माय छरत थे। मुन्दरनायरी मगर क एक प्रमुख र्दंग और हार्दिकी क बोधि क धरीम थे। कारण शिखू विर उदास्य के संस्थान न के मानवीयरी क दार्शन हाय थे। एक बार जब मानवीयरा मनातान मय उम समय मुन्दरनायरी क माया कृष्ण दरे बन्ध छोड पा। बो, माय भाड बर का गृह होगा। मायवीयरा कृष्ण न जाने पर भी प्रतिनिध नियम म द्या नाम काम थे और यन्त्राणि मय की मायिग कगत थे। एक नि मण्डेय बापक र्गगाम कर ग गे थे कि मेपता गुणा कृष्ण की का र्गता। मानवीयरा माय गहरक धान कृष्ण। अमो मागी मुन्दर की कृष्णी हो। कृष्ण विद्विता तो दा ही नि य। मानवीयरा मरुत-मरुत भाव ही भाव किड हा ल्हे और गहा मारहर बार कृष्ण पण्ड मया कृष्ण पण्ड ल्हे मय तर बन्धा म मियहर के मान मेव किन करत थे।

कमरुत वन निकसी ।

एक दिन की बात है । मेरे मकान से संसप्त नंगुवा लेसी की दूकान थी । प्रातःकाल व्यायाम कर उठा था । मासिरा करने के लिए उस लसी की दूकान से लेम लेने के लिए मैंने अपना गन्म हाथ बढ़ाया । ( 16 inches round the biceps ) १६ इंच इंच की नाप थी । गप्पी से दो प्रयागवाल बसे जा रहे थे । उन्होंने मेरे लगड़े हाथ को देखा । एक ने अपने साथी से कहा — बड़ा लगड़ा है ।" यह वाक्य एक गप्पी के मरद से पुरस्कृत था जिसका उच्चारण प्रयत्न करने में सही सम्यता व कारण में नहीं कर सकता । परन्तु अंगरेजी में उस brother-in law the loser और हिन्दी में पत्नी का भाई कहते हैं । ऐसा विशिष्ट व्यक्ति जिसके सामने मारी गुनाई एक लकड़ रूठी हो उसका इतना अपमान कि उसकी गप्पी में गणना की जाय ! समय एक क्लेति बलाबल समय बनवान् को निदान कर देना है । खैर, गप्पी के मरद प्रयोग करने पर भी मैंने उगम मन में कहा जाय तुम्हें भाफ किया क्योंकि वह प्रयोगकर्ता गप्पी थी । यदि अन्य किसी प्रवृत्त पर उमने एसा कहा जाता तो उगके दाँत जमीन पर दिगमाई पड़ते । अस्तु ।

प्रत्येक व्यसन का चाहे वह अच्छा हो अथवा बुरा एक बाता-बगर और उमरी नज-बज निकली होती है । मैं भी पहलवानों की तरह मरदन में बाबा गंदा और लार्डीज दाहिनी कलाई में बाबा गंदा यों तक टि दाहिने पैर में बाबा गंदा बाँधना था । एक दिन माथरीपत्री की नजर पड़ गयी । उस समय उनके माप बर्फ भाथी भी थे । माथरीपत्री ने अंग्रेजी में मुझ पर Vyasjee take off that black chord round your neck. It used to be the fashion of times gone by । आंगरी मरदन में बाबा गंदा उतार दामिए । वह बल्ल जव

इसका ध्यान था, बीठ गया) मानवार्थी ने अंग्रेजी में इसलिये मुझे डाँटा क्योंकि जो लोग उन समय उनके साथ थे व अंग्रेजी नहीं जानते थे। मानवार्थी मुझे सबों के सामने अपमानित नहीं किया चाहते थे। डाँटने के समय भा उन्होंने इसका ध्यान रखा कि लोग यह न जान पायें कि मुझ पर डाँट पड़ गयी। महानता इसको कहते हैं। मैं बूझ नहीं बोला। उनका उपदेश मेरे गले ब नीचे नहीं उतरा। यद्यपि मानवार्थी का माहबय मुझे नयाब था फिर भी मैंने उनके उपदेश का आदर न किया।

गुन का प्यनु बनोब है लेखन  
इसको सम्मानत गार बना जाने ॥

मैंने मन ही मन कहा

वहो जो बाबा गुन लय मगर महत्त्व न रदधते।  
तब मन तो लडा जाने वहाँ है काम हृदिर है ॥

मनवर इनाताबारी

अब भाव ही इनात करे। एक एक से एक हृजार रद मगा कर गुन पानी लो मैंने किया नितामहू बी पटवार—और बहू भी मानो मान-बिवाहिया पत्नी के सामने मैं मान भी। एक प्रयाग बाल की मारनी मैंने सुनी। और मानवार्थी डाँटते हैं कि "Take off that black chord" मया पर भा कोई बात है। उस बहू मैं सोपने मया

लडान वषों है बाबा बोरो लो लो लो लो है।  
होना लो लो बाबा, बोरो लो लो लो है ॥

गिरुं कामा मारा ही लो बिया है। पानु जहातमानवी क शाना में जयानी के लोम सं लम लोना को लेना ही मलता था कि मानवार्थी कू ब-पू बकर पर गत है। बागनट बन है

बैचपानने व ब्राह्मण लोनामनिकाति

बागुदलनानि बुजि। पुरवचननममनि लनिकविह



नहनुबननवति अकलितवर्त शूलनमव्यस्य ।

कादम्बरी — शुक्नासोपदेश

( यौवन क आरम्भ में शास्त्रों के अध्ययनरूपी जल के प्रसादन से निर्मल बुद्धि भी प्रायः कम्पूषित हो जाती है । अमार्गों की सुगन्धों का आदग चिन्ता भी हितकर और स्वच्छ कर्मों न हो जान में पड़े हुए निर्मल जल क समान कष्टदायक होता है ) जबानी का उफान उतर आने पर मैंने स्वयं ही गंडा को उतार डाला ।

भारतीय संस्कृत साहित्य महान् पुरुष की इस प्रकार परिभाषा करता है—

द्विपरि धैर्यमधाम्बुदये दामा

सवति बाकपयता पुषि विद्वन् ।

यानि आभिविधिर्व्यमनं, सुतो

प्रकृतिमिदं विदं वि प्रशमनात् ॥

( आपत्ति पढ़ने पर धैर्य अम्युदय होने पर दामा सुभा में बाकवानुष सदाई छिड़ जाने पर दूरता यद्य में रधि धर्म एवं धर्मशास्त्र में ध्यमन य महान् पुरुषों क स्वाभाविक लक्षण है ) जब मैं माम्बीयजी को दृष्टी गुणा की कसौटी पर बसूंगा ।

द्विपरि धैर्य — आपत्ति के समय धीरता ।

माम्बीयजी का जीवन राघवमय था । बचपन ही में अर्थात् भाव बढ़े होने पर शूद्रों में जा सकने क कारण पालीस महीने पर अर्ध्यापनी करना दृष्टादि का सामना करना पड़ा पर उनके बहरे पर शिरान नहीं आयी । उनका तो स्वभाव था—

बना जाना है रनता नैकता बहरे-हवारित में ।

धगर धानाविही हैं विद्वयी दुस्वार हो जाये ॥

यम ईगमुग स्वभाव क नामने सभी कठिनाइयों नर-मस्तरु हो जाती है । इस सम्बन्ध में एक मामिा पन्ना अभी-अभी था आयी था पर पत्तर इसन नि में उग निग पाऊ, कट विमाण य

निकल भागी। ये सम्मरण कभी-कभी ऐम गायब हो जाते हैं जब  
महाजन के सामने से बर्बर। परन्तु महाजन के सामने बज्रदार  
की क्या हस्ती। बज्र तर बह मुहृ धियावेगा? 'कालोह्यर्ष निररधि'  
कभी न कभी तो पकड़ जायागा हा।

कनिनाया म शरिण विरमिया का मामाग करना कनि  
तोना है विोरकर दबा बिागिया का। परन्तु मापबायजी मानन  
न वि

देर करे का २४ है सब बाटू को होय।

मानी मुगते जान से मूण्य मुयने रोय ॥

सन् १९२२ की बात है। उन दिना मापरीयजा बागी हिन्दू  
बिबिदालय म एत के परन्तु बीष बीष म प्रयाग जान जान  
एत थे। उनकी धमपत्नी गीमग्यती कृन्न दबी प्रयाग ही में  
एली था। उन दिना म 'बस्य रजा करनी थीं। हमारी छोटी  
बहिन गीमग्यती बिण (मापरीयत्री की पुत्र-वधू) उनकी सेवा  
में सतर रजा करती थी। माप का मरीना था। बिण जद-जद  
गंगा स्नान करने क त्रिण कपी जागा थी पर मान का ग्राम लगा  
रहा था। जल्दी ही सोट आनी थी। एर त्रिण कृन्न दबी में  
उगग पूरा बा। मकृन् (मापरीयजा क पुत्र) कान रहे कि तुम  
रसाबाय तिया पारती हो। गोबा रि तुम्हीं म क्यों न पूर मर्द  
म प्रायरापी हो तो बुद्ध (मापरीयत्री) का अरहित त्रिण है।  
म बनारस कपी जायी।" त्रिण ने कटा बरुमा 'हम म जाब।  
ही हमारा कलाजाग हा। कृन्न दबी को हमग बड़ा म जोर  
न और उनका कानों में बायुष्य न कानू मा न्ये।  
एर त्रिण त्रिण गंगग्नान करने लयी थीं। कृन्न त्रिण भाग  
... रली थी। उरे पना न मयने पाना और उनसे अघरे में भाग  
सग गया। अराक तो थी ही। बुद्ध करन-भारो न बन पदा। कृन्  
बिन्नाना पर वे-उर मगर कोई धार का उन लयी थीं। गजा

बच्चा (मदमीघर—बिद्या का पुत्र) उस समय लगभग सात-आठ वर्ष का था। दोढ़ा-दोढ़ा पुराने मारली मकान के बरतरे पर गया। उसी समय बिद्या यमा-स्नान से सोटकर आ रही थी। देखकर रोस हुए बिहवाकर मदमीघर में कहा बहुत बहुत जल गयी है।" बिद्या मागी भागी घर आयी। देखा बहुधा कोपी जा रही है और बराबर गजारास सीताराम कह रही है। मालवीयजी को तुरन्त तार दिया गया। टेल्नी फोन किया गया। तब राते ही मालवीयजी का पय। यह कहना निर्बक है कि अकष्ट-अकष्टा उपचार होने लगा। परन्तु यहाँ आने पर उनको जीभ में एक भीपण्य कर बकिज (उसका फोड़ा) निकल आया। वे धसने-पिरने से साधार हो गये। कुन्दन देवी ऊपर के कमर में पड़ी थी। मालवीयजी के पुत्र भोग उन्हें बर्षों पर बँटाकर अगरी पर उठा से जल थे। इस प्रकार वे घण्टे देड़ घंटे प्रतिदिन अपनी पत्नी के पास बँठाकर उनका मुख-दुग पूछते थे।

संघ करते समय एक दिन कुन्दन देवी बया ने कहा "बहुना! तुमने तो अपने जीवन में कमी कोई पाप की बात नहीं की। फिर तुम्हें क्या दतता कष्ट मिल रहा है? बहुना ने धीरे धीरे कहा बह! एव ही जगम का पाप नहीं देगा जाता। मानूस नहीं किम जगम में हमम पाप बन पड़ा है, उग्रवा भोगमान भोग रही है। तुम्हें महाभारत की एव कथा सुनायें। जब धृतराष्ट्र के गो पुत्र युद्ध म मारे गये तो उरु ने व्यागेश्वर म पूछा "भगवान्! हमने कौन-सा पाप किया कि हमारे सब ब मारे गये। हम अपने २१ जगम की जाने लो घा" है। उनमें हमने कोई पाप-कर्म नहीं किया। फिर क्या हमें यह श्रावण दुग भोगना पक रहा है। व्याग देव बोले "रात्रन्! यह पाप उग्रम भी पहने का है। एक बार तुम बहुत बीमार पड़े। बर्षों ने कहा कि यदि प्रतिदिन आठ एक हल के बहन का शाखा गिये तो चोड़े दिना में आर अकष्टे हो सकत है।

इस प्रकार हंस के सौ बच्चों का शोका पीकर आप बच्ये हुए हैं।  
उसीका यह पुत्र है। इतना करने के बाद कृष्ण देवी पुन ही  
नयीं और शान्त-रूढ़ दोनों की भाँगीं से भाँसू भर-भर मिग्ने मगे।

कृष्ण देवी त्रिम दिन जनीं उम त्रिन से प्रतिदिन उनके पास  
एक इतिया गुणाब का पून उनकी स्मृशाशाश्वानी बगिया से  
आता था। उमसे मयप्रयम पोड़े-स पून नितापकर गग्वार क  
ग्यदेव रापा-कृष्ण पर चढ़ाने के लिए भेज देनी थी। फिर बचे  
हुए पुनों में से एक-एक दो-दो पून बच्चों और बट्टों का देनी  
थीं। मरने के तीन-चार दिन पहिन जब मानवीयत्री कृष्ण पर  
उनके पास आये तो कृष्ण देवी ने उनसे भयना पर चारपायी पर  
रगने के लिये इरादा किया। यद्यपि पोड़े के बाग्य मानवीयशा  
के परों में दर्द था फिर भी अपनी पत्नी का मन रगने के लिए  
उन्होंने अपने परों को चारपायी पर रग दिया। कृष्ण देवी सेठे  
सेठे कुनों को इतिया में हाथ डालकर मुदिपारने लगीं और उमसे  
स दो दबत गुणाब के पून पुनकर मासवीयत्री के परों पर रग लिये  
और अपने हाथ को अपनी भाँगीं में मगा लिया।

मुबारकेगाबुनिभोगवाले दरघल्लो बवलभवंभीष्ट

वाग्युवावाद्यनि विभोचने ला न लोबने कोतविनु विभेहे ॥

अर्थ—वीथ पाता पदने से व्यपिठ बदन के समान उमके  
नेत्रों में अधु आ गये। यद्यपि उमकीं भाँगीं में उडके हुल्य का मास  
प्रकट हो रहा था पर अर्मगत के मय में उगने भरनी भाँगीं को  
कहीं मीपा। (कि कहीं मीपने से अधु न फिर पडे और अर्मपम हो  
थाय)

कृष्ण देवी की भाँगीं से भाँसू का दये पर उग्लेने भाँगीं को  
कहीं लिया कि कहीं भाँसू दमक न पड़े। फिर बाग्य पीरे-पीरे  
बोली— तुम हमे प्रतिन दुद दये जान के लिये मना कर दिखो  
रहा। हम तुमकी बाग्य मान दन रहे। अब हम आता से केव ली

बनी जायी। मानवीयजी बाड़ी देर चुप रहे। फिर प्रंगौछे से बांग पोछकर बोसे—'अब तुम्हारा समय आ गया है। अब तुम जाव।

पाछों को दो दफ्तर मना करने का रहस्य यथा वू। सन् १९०१ में प्रयाग में प्यग का भयंकर प्रक्षेप हुआ। लगभग तीन चार सौ आदमी मरते थे। गिनटी निकली फिर बचना असंभव हो जाता था। सपन के अपिच्छ मकानों में ताप पड़ गया। जिस जहाँ जगह मिली भाग निकला। मानवीयजी का परिवार सिबिस लाइन के एक यमन में बसा गया। मानवीयजी ने पीड़िता के दवा-दारु और मूर्तों के जलवाने का यथारक्षि प्रबन्ध किया पर इतने भयंकर प्राकृतिक प्रकोप में सब योजनायें भुज हा जाती हैं। ऐसी म भर मर कर लाखों यमुना में फेंक दी जाती थीं। मैंने अपनी भांग्या स बनुभापाट के जिनारे यमुना में दो-तीन सौ सारों उतरत और मस्लाहों को बाँध स ह्याकर स्नान के लिए स जात देगा है। उन्हीं दिनों सिबिस लाइन वाले बंगल में बृम्हन देवी को छीत्र उबर हो आया और दोनों जायां में प्यग की गिनटियाँ निकल आयीं। इस घातित के सहसा आ पड़न पर मानवीयजी उद्विग्न ता हो गये पर उन्होंने अपना धर्म नहीं छोड़ा। बृम्हन देवी की मरपूर चित्तिया होती रहीं। एक दिन जब उनकी हानत बहुत बिमदी हो मानवीयजी ने दर्भाग होकर उनका बहा तुम अपनी जावगी ता गोट-छाटे बच्चों को कौन गुम्हामेगा? हमें अभी बहुत काम करना है। उम हम किसके सतारे करेंगे? तुम न जाव।" बृम्हन देवी बांग बन् धिय कवन इतना धीरे ग बानी तुम पिन्ठा न बगो। हम न आबे। रक्षति पुण्यानि पुण्ड्रतानि। ये धीरे धीरे अछा हो गया।

दुर्गाय पन्ना सन् १९२० की है। बृम्हन देवी इतनी धीमार पड़ीं कि बचने की कोई धारा न थी। लग बार की मानवीयजी ने

उनसे न जाने क लिए कहा और घ घष गयीं । इन दोनों बार मान  
वापत्री जीग कृष्ण दबा क सपोरायन में बना र्बा रहस्य निहित  
वा मद्र तो मगदान् ही जाने ।

अब ही धार मन् १६६२ में सुबमुख बान क अन्म नियम की  
मोटिम कृष्णन दयी पर वामीज हो गयी और क मानवापत्री क  
परला पर इवन पुप रा यदाज्जवि मरए करने क बाउ उनकी  
भाजा सरर पार दिन के भीतर हास्वरगारविशविन्त दुग्गात्रि  
म बनवा में सुवदा क विग बद्ध मोन हो गयी । मानवापत्री  
उन मृग गरीर का गाव-गोव ग द्यन गये र्ग गये उन कह र  
ने ।

धर तमना केमरा है धर निगाहे केपयाम ।

किरबो एक पत्र है बीना बना जाना है मे ॥

मुल्ता

उमका ध्यान ठर दूग अब गुग्गेर बुमा—मोल्न की एक  
प्रोश गी जो मानवीपत्री के परिवार क प्राणी क समान वा  
पामा— इमक मंग म मेंदुर मर क जेम पत्रिन विग कगय क  
माव घ घस ही कात्र मीय म मेंदुर मर क इन्ह विग बरा । हमारी  
बहिन मोमाम्बरती बिदा म कृष्ण दयी क बीमारी क बरीं को  
उठारक उन्हे म्मम घदनी म्मनादी । विदा मुन्म कर्मी मी—  
भदा । ददनि मग्ने क समय गाग की काद ७० वीं की वी परन्तु  
ये मुन्म गोरा-नारी ती वी ही बूनी पन्ना-म म्मद १८०० मग  
की पुत्री मात्रम हाती थी । मानवीपत्री अब मोमाम्बरती कृष्ण  
दयी की मंग में मेंदुर मरन म्मे ता म्मरा कंग म दा क द कावू  
दयी क म्मग ५५२ पर दना पदे । वी माना म्मी की बिगा पर  
उारी जगाज्जि वी । मंग मर जने पर गाव कर्मा पन्ने दूर  
पन्ना कृष्ण दबा पर दगा म्म पन्ना कि बना म्म बनना ।  
मग्नि क विग म्मकृष्ण विनी मीरन मर उत्र म्मम कर्मी

गहरी हैं और टिछी पूजती फिगती हैं।

सहसा यह संस्मरछ जो महाजन के सामने कर्कदाग की तरह माग निम्नया वा स्वयं आकर भुगछान करने के लिए महाजन का दर वाजा छटप्रदाने सगा। यह यह है बहुत दिन की वास है। कृन्दन देवी नियम स प्रतिदिन गंगा स्नान करने जाती थी। उन दिन माता-पिता का मच्छ उनका पुत्र बि० मुकुन्द साथ में था। कृन्दन देवी टीक मंगा-यमुना क संगम पर स्नान कर रही थी। गंगा क प्रवाह स उनका पैर छिसल गया और वे यमुना में गने तब पानी में आ गयीं। निरन्त में एव मछाह में उन्हें डूबने स बचाने के लिए उनका हाथ पकड़कर गंगा की छोर लीपना बाहा पर कृन्दन देवी ने उसका हाथ म्छक लिया और अपने प्रयत्न स छिछले जन में पानी आयीं। आनर मुकुन्द से कहने लगीं— हमें डूबने स बचाने के लिए मछाह में हमारा हाथ पकड़ लिया पर हमने उस म्छक दिया। मिषाय तुम्हारे निष्ठा के छौर तिगी की हमारा शरीर छूने का अधिकार नहीं है। उम्होंने टीक ही बदा

कैरि बच भुवन बलि, बनिष्ठा को पात।

गुर छक भी कपल पन मरे सपन है हाथ त

देगी मोद्दागिम पतिष्ठा ली क मरने पर गती जो उमका दर्शन करने आती हा तो इगमें क्या चादनर्थ है ?

जब कृन्दन देवी की भरपी बाहर निानी तो मानवीयत्री के हृदय की प्यसा ने उनके छोड़े की पीड़ा को लब लिया। उम्होंने भरपी में बंगा लगाया और फिर सगढ़ाने-संगढ़ाने गम्पी की मोड़ तर पट्टेपार मोड़ घाये। कृन्दन देवी की घरपी अब दृष्टि स ओम्न हो गयी तो वे मोड़ आये और बाह्य पद्दार पर बर गये। आने पर जो अरदा म्छा लगत वे बातरा की तरह मोंपार छोड़कर रोने लगे।

पूरोत्तरीके तदापरस्य परीवृत्तं प्रतिष्ठित्या ।  
 लोकातोमे च हृदय प्रसारयेत् ध्यायत ॥

मधुमति

(जब तदाग सवाणस्य मर जाता है ता उसरे बाँप को दूधने म बनाने के लिए दूध म जस का निरस जाता ही एवमात्र उगाय होता है । हृदय जब जोर के उद्वेग म मर जाता है तो रोने ही म पमता है नहीं तो बह पट जाय । )

अर्द्धाङ्गुली कन्धन देवी च दृग्गवमान म मानकीयत्री का आया धंय च्च गया । यमिच्छ सोम भगवती दुर्गा श्री म्मृति बरने हैं —

काली बनोरथा द्विदि बक्रोवृत्ताभुनरिलीव् ।

मारिली र्गर्भनाराणपरस्य कुन्धारवरात् ॥

मार्गण्डेय पुराण—मर्गनाम्तोत्र

( हे श्री ! मुझे ऐसी काली को त्रिगमें मेरा मन रहे जो मेरे मत च धनुषार पम जो ब्रह्मदे बन में उगाय हो और मुझे संसार कपी दुग्म ममू म तार से । )

भगवती मै मासत्रीयत्री को उक्त गुरों मे मग्गत्र पस्वी लो ही पर भगवान् की याया च उर्गे संसार-मग्ग के पार पद्वेपने पद्वेनर अरथा लोट कर बनो गयो । अपने परिवार के मुग्ग-दुग्ग के जानने का अर्द्धाङ्गुली योग मूग गया । अतः उमरा प्रयाग में उरना कम होने मग्ग । रिक ही बजा है —

का शारे ही मग्ग अर धीर म दूरे ही जोय ।

आग रोते बन्द रिम धीर दूरे बनेका होय ॥

मार्ग उमरा प्रयाग का मग्गन बन्द-बदर्या म भग-दुग्ग का परसु

के मग्गन म ली है एव काली च्च होरे के ।

रि मग्ग के लज अरे है का के धीर बनेका लाली है ॥

एव मग्गन मग्ग बन्द-बदर्या मग्गन मग्गन मग्गन है ।



यह बोरी घामरी नहीं है। इसने भीतर एक शाश्वत सत्य निहित है। तभी तो महात्मा अरविंद घोष ने विवाहोपरान्त अपनी पत्नी को एक पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा था कि सात माता की सेवा में जिस प्रकार का जीवन है व्यतीत करना चाहता है उसमें क्या तुम हमारा साथ दे सकोगी। यदि दे सकने तो मुझे बड़ा सहारा मिलना और मैं सब प्रकार का बप्ट सुख से भोगूँगा। पत्र बहुत लम्बा है यह उसका सारांश मात्र है।

बृन्दन देवी के मरने पर मानवीयजी प्रायः काशी ही में रहते थे और अगला वर्षव्य-वापन जैसे-जैसे करत जात थे। हम देवी विपत्ति से ब्यथित होने पर भी उनमें धर्म की मात्रा ठनी अपिब थी कि बाहर से कुछ पता नहीं चलता था।

मानवीयजी की मनोप्यका पुत्र-गात्र क सदरा थी। जिस प्रकार पुत्र क भीतर भरा हुआ जस भाप न निकलने क कारण भीतर-ही भीतर गोलता रहता है और बाहर से नहीं पता चलता ठसी प्रकार उनक हृदय की ब्यथा अविषम गाम्भीर्य क कारण बाहर नहीं प्रकट होती थी।

अम्बुदये तमा—प्रभुता होने पर दामा

पुत्रापाय का कथन है —

इन्द्र एव भोजि । तस्याभायता शोचमात्रा । तत्रात्मोदपात्रार्थं निरनुत्तरात्त स्थात् । न ह्यथ विषं बभोस्तयनप्रति भुजानां यथा इन्द्र ।

दीर्घीय अर्धतारत्र

इन्द्र ही भोजि है। इनी पर ब्यवहार अयनम्यिण है। अत्र ब्यवहार में उन्नत होने की दृष्ट्या अपने धान को मर्वा इन्द्र देने क विना प्रभुत्वं करना पारिण । प्राणियों को घरा में लान क निय और बोई वेगा वापन मरी है जगा कि दत्त ) वागव्य बटा है—

भेनि शोरण्य । तीरलरण्यो ऽ भुजानात्तवतीय । मूर्ध्नि चरि

मुपने । यद्यार्थं च परा बुद्धिमान्नीलो छि रं च प्रजा यत्परिचय  
 बोधयति ।

बौद्धिक यथाशक्त

( बाणध्वज का मूठ मित्र है । यद्यत् तीव्र दण्ड म लोग विफल  
 हो जात हैं । अतः हल्का दण्ड देना निरव्यय हो जाता है । जिनका  
 दण्ड भावयन्त हा बनी पूर्य है । गुरु ममभ कर दण्ड का प्रयोग  
 करने से बड़ आश्रितों को घम अथ और काम में लगाता है । )  
 मामरीमदी की नीति उन दोनों म पृथक् थी । उनकी माम  
 मय की नीति था । व जानत ये छि कि It is good to have  
 a giant's strength but it is bad to use it like a  
 giant

( दान के समान गच्छि होना अच्छा है पर उस दान के  
 समान उपयोग करना बुरा है )

घम में अनुसृत होने से कारण ये समझत दे कि—

गुचि भुक्त्वा भुक्त्वा

प्रमथयन्त्येव च यथाशक्ति ।

प्रजावाचरन्तं पराश्रमं

न कर्त्तव्यमिति बुधवत् ॥

बुधवत्

( ... )

साहसी नहीं बरती। वे छात्रों से पिता के समान व्यवहार करते थे—उस पिता के समान जो अपने वारसत्व से उन्होंने समाज में प्रयुक्त करता है वृद्ध से नहीं। वे अपनी मन मोहिनी मुसकान से सब समस्याओं का समाधान कर देते थे। छात्र रोती मूरत लेकर उनके कमरे में जाता था और हसता हुआ बाहर निकलता था। अम्पापत्रग का वे—आदर करते थे और यही कारण था कि वे लोग बिना कुछ कहे मुझे छात्रों के अम्पापन कार्य में संलग्न रहते थे। इसका विशेष परिचय मुझे तब मिला जब मन् १९२१ में मैं विश्वविद्यालय का एग्जैक्युटिव आफिसर नियुक्त हुआ।

इस नियुक्ति का एक छोटा सा इतिहास है जिसको यत्नपूर्वक में आवश्यक समझना है। अपने जीवन में मालवीयजी ने कई बार मुझ अपनी इच्छा प्रकट की कि मैं विद्यालय के उन विभाग का पुनः मार स मु जिसमें म्युनिसिपैलिटी से सम्बन्धित काम है। उन्होंने मेरे छोटे भाई स्वर्गीय डाक्टर गोबूमनारायण व्याम से भी डाक्टरी विभाग का मार मने के लिय कहा था। परन्तु हम दोनों भाइयों म स भाई भी उनकी इच्छा पूर्ण उस समय न कर सका। मेरा भाई उम समय आगरा मेडिकल कालेज का प्रिन्सिपल था। विभागत का एम० आर सी पी डिप्लुमन्त का एम० सी० और Consulting physician to the Victory था। सर्व, यह कोई बड़ा बात न थी। अनोखा बात उनमें यह थी कि एक बोधि का चिन्तित होत हुए बहु निदान निर्वाम मयबदमक और संत था। ऐसा व्यक्ति मालवीयजी को आकृष्ट करे, यह स्वाभाविक ही था। परन्तु उसी वर्षी गृहस्त्री थी। इच्छा हात हुए भी ऐसा न कर सका। मैं प्रयाग में म्युनिसिपैलिटी का एग्जैक्युटिव आफिसर था। उम छोड़कर विश्वविद्यालय में जाना मेरे कूने की बात न थी। मालवीयजी का प्रस्ताव जहाँ का वहाँ चू गया। मन् १९४६ में जब मालवीयजी का देहावसान हुआ उम समय मैं

प्रयाग के सीडर ट्रेम का जनरल मनेजर था। सन् १९१० के लगभग मैं उससे भी अवकाश ग्रहण कर लिया। उस समय मास बीप जी के पुत्र पण्डित गोविन्द मालवीय वारी हिन्दू बिरर विद्यालय के उप-बुसपति थे। उनके बहुत कहने से सन् १९११ के आरम्भ में मैं विद्यार्थिदामय के एग्जिक्युटिव चाफ्टर के पद पर नियुक्त हो गया। अपने जीवन के ९२वें वर्ष में पहिले-पहल मैंने प्रयाग के बाहर नोकरी की। न्यू उडा में काम-वर्षों से सम्पन्न अपनी गृहस्त्री को छोड़कर आपिक आव-पात्रा न होते हुए परदेस में नोकरी करना एक बन्धु बापय के स्नेह-ताप की माया में पड़े हुए व्यक्ति के लिये अनृत-पल ही था। परन्तु एसा कर गुजरने के बाद पारण्य थे। मैंने देखा कि जब मनुष्य गिरावर होने पर आत्मस्य होकर पर बठ जाता है तो त्रिम प्रकार दन्तर का काम समाप्त होत ही कर्मबाध पर की धोर भागता है। कुछ उमी प्रकार यह आत्मस्य व्यक्ति अपने अन्तिम बिनाय स्यात की ओर घनिष्ठ होत हुए मा जल्दी जल्दी बदलर होने समता है और उसकी परिचारिकाने—शारीरिक एवं मानसिक शक्तियाँ—वार गिया की भांति अपने समुचित स्वामी को जमरा ए'डने स्वर्गी है। माप में पठ मुता था—

अनुशासनमति लोचनयो  
 स्वयं चतुःशुभपातरस्य ।  
 निरवाणगडविमनेनचतु  
 विवदानवास्तविकमिवा ॥

काव-६-१०

सूर्योत्थ का अर्थात् सूर्य के अर्थ है —

(सूर्य निताप है प्रेमी है। परिपम गिरा बन्ना है। जब सूर्य के पाप समू ( १२५—विगत—पत ) के लगे ल्या ता सूर्य के लगे अनुशाग ( १२५—प्राई—पय ) का और उनके

शरीर में कोई लपन नहीं थी और वह नेत्रों को सुन्दर था फिर भी पश्चिम निगाहों की वजह से उसको आभाराम्पी भक्तान से निकाल दिया। अर्थात् सुसम्पन्न हो गया।

इसमें मुझे सावधान रहना था। दूसरा कारण यह था कि मेरे हृदय में एक झूठ है जो मेरा सेषक है। वह मेरा पेश निरन्तर जोतता रहता है। अग्न मरी नोकरी एक घात पर भंजर की है। शक्ति बड़ी विमल है। यदि मैं उसे बराबर काम देता रहूंगा तो वह अत्यन्त रहनेगा और यदि काम न दूंगा तो वह बहुत भोग लेगा और वह वेतन में ही आसु के दाण-बण होंगे। मुझे उस झूठ को बेनार करने का गाहस न था। तीसरा कारण और सब स जबरदस्त वाग्य यह था कि ऐम महान् पुर्य मातृवीयजी के जीवन में उनकी इच्छा पूर्ति न कर सका अग्न प्रायश्चित्त करना था। यह दर्शन मैंने विन्-विद्यालय का मोकरा कर ली और मगन स काम करने लगा।

छात्रों का जय मैं यहाँ लक्ष्मीसुखि आदिगा रहा। इस अवसर में मुझे चार उप-नमस्तियों के साथ काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पण्डित गोविन्द मानवीय आपार्य गेम्बूदेव का भी पी रामस्वामी जयर और धी० बी० एन भा टम मर्कों का योहार्द मुझे प्राप्त था। इन छोटे न समय में यहाँ जो मुझे मातृवीयजी के हृदय की भाँती अग्ने-मुन्न को मिली उस आगे चलकर यथा स्थान बढ़ेगा। अभी तो मुझे उनके अम्मुयवे दासा की परिधि में ही सीमित रहता है।

श्रुति में मत्रा का—विद्ये का छोटे लोगों की गुण दुग की जाने मगनर्ति न मुन्नता था विद्यालय के गर्भी विभागों के लोग मुझसे अपनी गुण-गुण की जाने का ज्ञान थे और मैं मातृवीयजी का ज्ञान में स्थान पर उन लोगों के दुग को दूर करने का यथा शक्ति प्रयत्न भी करता था। एक दिन दाउर में बंटा काम कर



बड़े बाबू की समझ में बात आ गई। बोले—जनाब आप ठीक  
 कहते हैं। अगर नौररी करना है तो पकत करना पड़ेगा। पर  
 मानवीयजी के समय में और आजकल की फिस्ता में फिस्ता फर्क  
 हो गया है सिर्फ मोगर हीरत होती है। उस बख्त का आपको  
 एक बाक्या सुनाता हू। मुनवर घापकी तबियत पड़क आयगी।  
 मेरे ही विभाग का एन बन्मीरी लड़का था। नाम बतमा कर  
 उसका पर्दाफरा करना येना होगा। वह बिदला हॉस्टल में रहता  
 था। वह बिस्वब्रूम धावारा था। रोजमर्रा शाम के बख्त बिदला  
 हॉस्टल में दो तीन गहरेबाज एकटे आठ थे। गुब मांग छामकर  
 अपने गु के मड़कों के माप यह बाजार में बेर्याओं के महीं जाता  
 था। गुब्दा तो था ही एक दिन उमने एक बेर्या को सुनानर  
 बिदला हॉस्टल के कामन रूम में भाव बनाया। विद्वविभागय के  
 पतिहाम में कभी येगा महीं हुआ था। दूप मुंठ स पिया जाता है  
 मार से महीं। कान लड़कों में उमी बख्त जाकर मानवीयजी से  
 शिवायत की। मानवीयजी को महमा विद्वान नहीं हुआ कि बिद्व  
 विभाग का छात्र इतना उगाह और पतित हो सकता है। पर  
 जब लड़कों ने बटा कि दग समय नाप हो रहा है, आप बनकर  
 अपनी आंगों ग दंग बनत है। मानवीयजी तुम्हें उ गढ़े हुए  
 पौर बिदला हॉस्टल पहुँच गये। कामन रूम के दरवाजे बन्द थे  
 पर चिन्तनी नगे लगी थी। दर्यामा गुपन जेने ही भीतर  
 गुम तो लेगा कि कमर में कया भाव रही है। फल लड़कों ने  
 भागना चाहा पर मानवीयजी ने कहा 'भागो मत बने। यया  
 मे भी जो गफ्त हई गनी थी उगोंने कान तुम भी सेर जाओ।  
 उने म बानिपउज बन्मीरी लड़का जो मो में ही पर गिभाग  
 भांग मर मानवीयजी के गामन गया और बासा महाराज।  
 शेरकी का प्रगा मीजिये। मानवीयजी ने गिनाम में अपनी  
 प्रंगुपी दुबो कर मगुव मे मगा जिया। फिर जब मर मोग बैठ

गये तो मानवीयजी बास 'बच्चो ! जिस माग पर तुम लोग चम  
रुह हो हमका परिग्राम बहुत बुरा है। बड़ी कारना करके मुम्हारा  
माता-पिता से तुमको हमारे भरोसे यहाँ अध्ययन के लिये भेजा है।  
युवावस्था में कुसंगत में पढ़कर प्रायः सबके कुसंग में चम जात  
है पाम्नु जब ही उमम दोय शिगनायी पदे उसे छाड देना चाहिये।  
हमी में बल्याण है। मानवीयजी के इस उपदेश को सुनकर यह  
सदका भवार गड़ा रुह गया। इतने में जम

एकज से कुछ के नाम से पुर्जासे से बर दिना—

पुन क्यु पड़ा है ? वह के कि कुकन रणा हुई ॥

उम सड़क न मर नाशा कर बचन पतमा बड़ा महाराज !  
तामा कीजिये । मानवीयजी से बड़ा 'शाबारा' बघटा हम जान  
हैं। और यह वह कर वह उठ पड़े हुए और बमरे से बाहर निकल  
गय।

मानवीयज उप-कुसंगति से। उम छात्र को बिजानय ग  
निकान मकत से दा और बोई दग्द दे सवत से। पाम्नु यह मय  
उहोंने नदी किया। मतीया यह हुमा कि उन गदकों को मानवीयज  
के उपदेश की पतना सोए मगी रि उहोंने उम बुरे चमन को  
बिभकृत छोड़ दिया। मुना है कि वह कामीयी सदरा बरीं टंकी  
नियर हो गया है। बर्द नि तन शिगशिगनय से हम यान की  
बर्षा छी और सोए मानवीयजी के पम दग्द-विधान की मराना  
करत रहे। इतना बकरर कर बरू पुन हो गये और मानवीयजी  
की पा भाने नि म गओकर बन गये। बम्नुये तामा का  
दगम बडकर और बदा उगाहरण हो सकता है।

करति बरपता—गुमा से बाबुपानुर्द।

मानवीयजी का बाबुपानुर्द का मोटा मुर्दा माना है। बर  
मेरे बउमाने की मागात्र गनी है। बगायन है कि बग्दुरिबासो-  
पानेन रिमपना। बग्दुरी में गुण्य होगी है। दगको मरानि



करने के लिये शपथ खाने की आवश्यकता नहीं होती।

जल बला से पान में पान पान में पान।

तग अनुराग की पान में बात बात में बात ॥

मातृवीयत्री की घाली केवम मधुर ही नहीं थी। वे जो कुछ पढ़ते थे वह सारगमिथ होना था। भारवि के शब्दा में

स्फुटा न परंपराहता

न च न स्वीकृतमर्षवीरवम्।

रक्षिता पुष्यपिता गिराम

च सामन्त्रकपोदितं वरक्षिन् ॥

गिराणां नीच । २-२३

(उनके वाक्यों के अर्थ स्पष्ट होने पर अपरिचित वे गोम मीथ बात नहीं करते थे। वे बोद्ध वाक्य ऐसा नहीं कहते थे जिसमें अर्थ-गोप्य न हो। उनका वाक्य य ह्य एत दुष्यं न पृषय-पृषय अप होने से अपरिचित ही बात या निरर्थक मत्रा दोहराते थे और उनका एक भी वाक्य पगा नहीं होता था जो जोरदार न हो।)

अपनी द्विन्दू विद्विषामय न निर्माण में जहाँ मातृवीयत्री का उनके अन्तर् सोद्योमर गुणों का सादृश्य था वहाँ उनके गद्यमि यादृशता का भी बहुत बड़ा हाथ था। इनका सम्मरण आगे चल कर यथा स्थान मिलेगा।

पुष्य विषय—पुष्पभेद होने पर शीघ्र।

यदि किसी विद्वान्त की बात पर विचार छिद्र जाय तो मातृवीयत्री की बात करने का आशय नहीं है। उनका मर्दानगी थी। वाक्यता में नहीं गई थी। वाक्यता का शब्द वाक्य होना ही आवश्यक नहीं। यद्यपि वाक्यता का अर्थ अर्थ है। तभी तो जब वाक्यता का घोड़ा मार गच्छतु की अपरिचितता में गतिर लोभ महत्त वाक्यता न आपस में पढ़ते और तब ने उस पदक गिया तो गतिरों ने बड़े ही म मत्रा वि यद् घोड़ा रामपद का है वि गति

परशुराम को युद्ध में हथिया है। तो सब उन्मत्त बन पाए —

निर्द्वैतं ह्येतद्वाचि बीर्यं द्विजातो  
बाह्यो बोधो यत्तु तन्मन्त्रियाणां च ।  
शास्त्रशाहो ब्राह्मणो कामदम्प्य-  
तस्मिन् कामे वा स्तुतिस्तस्य रात्र ॥

मन्त्रिणि

(यह बात तो मानी हुई है कि ब्राह्मणों में वासी का धन होता है। बाटूबस तो दारिद्र्य ही में होता है। परशुराम ब्राह्मण थे। उन्होंने हाथ में धातुय पकड़ लिया। उनका हगने में राम ने कौन प्रशंसा का काम किया ?)

व्यक्ति चाँदरनि — पक्ष में पक्षि

प्रायः साग हमारी व्याख्या करते हैं—यश-चोत्सुरता। यह उनकी भूल है। यश-चोत्सुर व्यक्ति यश के फेर में पड़ कर रिश्ते में किसी समय धोखा खा जाता है। अंग्रेजी की एक कहावत है—  
You can befool some persons for all times and all persons for sometime but not all persons for all times. (तुम कुछ लोगों को हमेशा क लिये बेवकूफ बना सकते हो और सब लोगों को छोटे समय के लिये परन्तु तुम सब लोगों को हमेशा क लिये बेवकूफ नहीं बना सकते)। यश का घुन रोग है 'reward for public opinion' युग की माँग का आन्तर। हमीमिये आसक्त्य में यश का व्याख्या कुछ प्रकार की है। यश आर्गी शिरमाली प्रशंसनि में यश —द्विज काम को युग के लोग प्रशंसनीय कहें करी यश है। मानवीयता जनमत का बल आन्तर करते थे। यश का अर्थ यश। उनही शस्त्रनिष्ठ में छोड़ यश सामाजिक समस्याओं में रहता था। कृपायाना को दूर करने में ही यश का भाव मकर को घटना करने थे। इसी प्रकार में लोपीयों की शस्त्रद्वारा विरहूक बिष्टरी। वे कृपायाना

सगाबत करने पर उठारू रहते थे ।

येही जिनस समस्या एक समय मामबीयों की बिरादरी में उठ गयी हुई । हमारे एक निवृत्त सम्बन्धी ने अपनी सड़की का अन्तर्जातीय विवाह कर दिया । उन्होंने अपनी सड़की के हित में बहुत उपयुक्त किया । वह धर्म-सम्मत भी था । पर बहु जाति के प्रचलित नियमों के विरुद्ध था । आगे चल कर मामबीयजी ने भी अपनी पत्नी का अन्तर्जातीय विवाह किया । परन्तु जिस समय हमारे उक्त सम्बन्धी ने यह साहस किया था बिरादरी में साम द्विज गया । हमारे उक्त सम्बन्धी ने पूरा विवरण देते हुए गांधीजी को दो पत्र लिखे । गांधीजी के उत्तर में सम्बन्धी के काय का समर्पण और मामबीयजी की कार्यप्रणाली का विवेचन है । पत्र सम्बा है घट उसका घंटा ही उद्भूत करता है । पत्र मेरे पास सुरक्षित है । गांधीजी लिखत हैं—

बंगलोर

प्रिय—

पृ० कृ० ९

आपके दोनों पत्र मिल चुके हैं । पूर्य मामबीयजी से बात करने की इच्छा थी इसलिए आपके पत्र का उत्तर तुरन्त नहीं भेज सका । जाति-मुपारण का कार्य बड़ा गम्भीर है और सुरक्षित है । उसमें धैर्य की बड़ी आवश्यकता है । मामबीयजा का आचर्य प्रति कोई टोप नहीं है । उनके साथ बात करने के बाद मेरा तो निरवयव हो गया है कि आपकी और उनकी कार्यप्रणाली में भेद है । पू० मामबीयजा हिन्दू जाति को मुपारण चाहते हैं । परन्तु एक मनुष्य के कृप्य तथा कार्य करने में मुपारण नहीं बन मर्यादा पना उनका विश्वास है । वे अपनी पदवि के अनुक्रम को कृप्य प्रपन्न हो सकता है कर रहे हैं । मानना कष्ट देने का उनका जिन में बिनाग तक भी नहीं आ सकता है ।

सब मरा अधिनायक पद है—आपको कृप्य किया वह माग्य

पा। हिन्दू जाति में उठते हुए, हिन्दू धर्म पर संपूर्ण प्रेम रखत हुए, सुधारक अपने काम कएत जाय और वह करने हुए जो बृहत् भा दृष्ट पड़े उमरीं बरदास्त करे। समाज व्यवहार के बाहर जाकर जा बाय करता है वह समाज का शासन भी बरदास्त कर और बरदास्त करते हुए समाज के प्रति उदार भाव रखे। उमा का नाम मयाब्रह्म है। समाज के शान्ति के अनाद का नाम और वाटे का अनाद का शासन मोगने से हुए मानना यह सुधारक का वादे नहीं है। प्रत्येक मध्यम अवस्था धर्म का पालन करना है एक किसी के उपाय के बिना नहीं पम्सु बहुपम का अर्थ जीवन समझता है और उनसे बिना उनको अर्जयिन मा प्रतीत गया है।

मानवीयता का जीवन अन्त आष समाज के प्रति प्रेम और और आदर से ओठ प्रोठ पा। सभी का पंजाब-वर्गी काया मात्र पन छप से बटा पा —

"Of all the Indian leader I love Mahatya jayee the most though I respect Gandhija the best. That I think is a fair distribution of honour

(समस्त भारतीय नेताओं में मैं महात्माजी को सबसे अधिक प्यार करता हूँ। मैं सम्मान हूँ कि सम्मान का एक संतुष्टि विभाजन है।)

अन्तर्गत — मुक्ति अर्थात् केवल शासन यहाँ से पाने।  
 उचित बिना करो के अर्थानुस सातो बिना के अनु।  
 तबका के बुद्धिमान निर्वाचितों के अनु दुर्बलताका।

एसे १९९११

अर्थ — इन के समान बिना के अनु के समान यह पाने के एक शासक के समान अनु अनु के समान निर्वाचित अनु, दार्ता को के समान एका विम प्रकाश पर अर्थ है।

प्रकार हम तेजस्विता को प्राप्त करें।

ऐसा सगता है जिस श्वाश्वेय का धमिदेवता से सम्बन्धित यह उपलब्ध मम मामवीयजी का जीवन संकल्प रहा हो। यत्र दिन की बात है। उन दिनों मामवीयजी प्रयाग में रहा करते थे। स्थानीय श्री घम्मज्ञानोपदेश पाठशाला के व समापति के और में मंत्री था। इसी पाठशाला में मामवीयजी का विचारम्भ हुआ था। उन्होंने ही घन्य विद्यार्थी के मास-मास का बटा गुनाया था। उग कर्म म यद का मन्व्य दृढ पाठ करना सिखाया जाता था। यह बटा अब तक जारी है। जब कभी किसी अवसर पर क-शास्त्रियों की आवश्यकता होती है तो प्राय घमज्ञानोपदेश पाठशाला ही के विद्यार्थी उ-पाठ करने के लिए भेजे जाते हैं।

एक दिन मामवीयजी मेरे साथ पाठशाला का निर्गमण करने गये। उन दिनों वे गमारति के और में मंत्री था। जिस समय हम साग पाठशाला के द्वार पर पहुँचे वहाँ ८ टाक, एक स्वर से क-पाठ कर रहे थे। एक ममा-नी बंधा थी। मामवीयजी प्रवेश-द्वार पर ही ठिठक गये और आँसुओं को घ-कर उस स्वर तहरी का रग-गत करने लगे। जिस प्रकार मेघ के गजन को मुसकर उद्दीप्य मग मपूर को अपने ताव-तन का मुप मही रहता अथवा जिस प्रकार बौद्ध मूम अगभा र्थी में घन मग मरा अघाठा बृ-उ तथा प्रकार मामवीयजी बट ध्वनि गुनकर आम-विमार हा रहे थे। वे वे ध्वनि मुन रहे थे और मैं उम्ह देग रहा था। यह-नाठ में जम हा जिसम हुआ मामवीयजी मरा धार-ग-र, मपुर मुसकरन बिगस्त हुए बान 'बाह' और हम साग पाठशाला के भीतर घन गये।

भीतर जाकर पहिल मामवीयजी हरिदेवजी की परछायादुका के सामने न-म-र-र हुए और तत्कालीन प्रधानाध्यापक को प्रणाम दिया। तन्मन्तर प्रत्येक बटा म जाकर छात्रों से पूछ-छाछ



है। तो फिर यह है क्या? पहिल तो उन्होंने यह समझा कि वह बचन एक तेज पुच्छ है। फिर जब वह प्रकृत-पुच्छ और निष्ट माया और उमम कुछ आकृति दिग्दर्शक पढ़ने लगी तो उन्होंने माना कि यह बार्द गरीरधारी है। परन्तु जब उसके अवयव स्पष्ट दिग्दर्शक स्वरूप तो मान्य हुआ कि यह कोई पुण्य है। और जब वह तत्र पृथ्वी पर घा गया तो उन्हें यह पता चम गया कि यह नाग्य है।)

मुन पर उमम तत्र बारी बनि-बस्तना महा है। मैं स्वयं अपनी आंग्या स स्वामी रामतीष ब दमवत हुए चहूर के चारां और एक प्रभामगदस गा प्रवारा दगा है। मानवीयजी इन दातां इमारां का मुनर पदक उठ और बोय गाबाग। मैं डमी तरह बहुरर कि मरी छात्रां ब पहले पर देमना बाह्या है। फिर यह अपनी मोना मुमान बिमरत हुए बन गय।

मानवीयजा बलिग वरगन धुनी की परिभागा बहुत विगद पा। ईश्वर की गात्र को उ वेदों का गात्र मानत थ। स्वर्षित पुम्बिवा जगत् में गयम उत्तम और भवदय जानने योग्य बीन है? ईश्वर उमम उगहन लिगा है— इस संसार म सबसे पुरान दय वद है। भायवन म भगवान् का वचन है —

आवेकमेवाये काय्ये वपुनरन्व वाम्।  
वचनार वोरवच वोरवचोय वोरवच ॥

(मन्त्रि ब आन्त्रि म चार्यं। ग्यन ) और वाग्ग [ गूयम ] मे २१११३३  
अर्थात् एक मात्र मे ही पा। पर गिवा और वृत् भी न पा। मृत्ति  
ब वचना भी मे ही गता है और मर दो जगत्प्राज्ञ दीग पदना  
है व भी मे ही है तथा मृत्ति का गंगर ग जान पर जो वृत्  
वय गता है व भी मे ही है।) आगे पाठ्य गी पुम्बिवा मे

व निगंत है —

एव देवो विद्वान्मर्षा व्यापका  
 मया जनातां हृदये कप्रिविहः ।  
 हृदा हृदिर्बन्धं मन्मथा य एव-  
 यं विदुरमभ्यासी यशसि ॥

दशना० ११७

( यह पदमन्त्र विष्णु का स्मरणयोग मात्र प्राणियों के हृदय में  
 स्थित है । अज्ञान-अज्ञान हृदय में स्थित एव मन्मथा को गुह्य हृदय  
 में विमल मन में भात में विद्यमान मानते हैं व अमर ज्ञान है -

गाम्भार्या मुपसीतागुर्वी कान्त है -  
 साईं कल्पितानुग्रहण एषा ।  
 एव विज्ञानकर्म कथाम्पा ॥  
 एतद्वै व्याप्य एतद्वै एतन्मा  
 धर्मात् एतद्वै एतन्मा ।





७८ वर्ष की थी। ये प्रायः कहा करते थे कि

पुनर्विवाहमनोनालापामागम्य मननारणम्

यमं अथ काम और मोह इन गलों के लिए मीरोगता निना  
 आवश्यक है। अगर तर्क वार्ता में उनसे कसम में बहस की जा हो  
 थी और यह घोड़ी भरा भी गयी थी। जब य मसूरी गये तो यह  
 पंजाब के एक नरपुत्र आनन्दजी उ ने मिर और - । कि एक  
 हामी कर शिक्षा है जिनकी आयु १०० वर्ष में अधिक है। उनके  
 योगदान के द्वारा कुछ पत्नी फिर औपधिसा का मात्र निना  
 है जिनके निवर्तन गयन में मन्द मीरोग हो जाता है और मरी  
 आयु बढ़ जाता है। मान लेंकी गोय काव्य में ये कि मरि  
 मय म्याम्य सुपर जाय तो य धरित जिनो का देग की म्या  
 कर गये। का तामा म्यामीजी का उगने बतारा। तामीजी  
 ने वादा रहा की य विधि बनाना और मर दृग नागम गने  
 तथा आयु य न का गमन किया। मान लेंकी म्या वात  
 प्रभावित हुए और काय-बल करने का निवद कर लिया।  
 तानन्तर य वाली मौर का। पुनर्पत्नी म्यानागम नाम  
 का कारी के मलाप्रतिष्ठा और म्यादनामा है और ओ  
 मापरीयजी का म्या निरिगा करत म न । कल मिने म्या  
 बल का बहा विगोप किया परन्तु मापरीयजी फिर कर ७८  
 वे। ये उगी पर कागम रहे।

य निरिगा म्या कि काय तल की प्रिया प्रदग में  
 होयी। तन्मय निरिगा में मिर म्याम्य पर मदन म्यु म्या  
 शमकराजम ग बम म मर प्रबय का मिया म्या। मरीम -  
 मा-शानुमार पंजाब म म्यु म्या मर का। मी म्या म।  
 म्यु बगमिग म म्यामीयर्त के म्या मी म्यु म्या म्या मी  
 मी बगमिग का म म्यु म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या  
 म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या म्या

दिया गया था जिसमें भीतर छतिल भी प्रकरा न जा सके। इस प्रकार हुआ भी नाममात्र को घूम-घुमाकर जा सके। इसी बगलिया के भीतर के कमरे में मालवीयजी को नियमानुसार ४० दिन रहना था। प्रशास के लिए मालवीयजी के कमरे में सात चिमनी की एक लासटैन जगती थी जसी फोटोग्राफों के 'ड्राक रूम' में होती है।

जब यह सब प्रबन्ध सम्पन्न हो गया तो मालवीयजी अपनी स्वामी तथा अपने पुत्र वि. सुबुन्द के साथ मोटर में कारी से प्रयाग आय। सबसे पहिले उहाँने अपने परिवार के इच्छेव तथा पूष्ण के विग्रह का दशन किया फिर अपनी धर्मस्त्री सोमायवती कुन्दनदबी से मिलकर शिवकुटी चले गये। मातृवीयजी के साथ देहरादून के प्रसिद्ध सांखिक पण्डित हरिदत्त दास्त्री ने भी क्रिया करा करने का निश्चय किया था। वे भी शिवकुटी पहुँच गये। उनके लिए भी उधी बाग में एक बगस की बगलिया में सब प्रबन्ध कर दिया गया।

अब निरिस्था प्रारम्भ हो गयी। पंजाब में बाघी गौए जा गयी थीं। उन गौओं को उनसे निम्न के आहार में साथ में जड़ी बुनिया भी औरथ के रूप में खिलाई जाती थीं। इन्हीं गौओं का दूध मातृवीयजी और शास्त्रीजी पीते थे। और इन्हीं गौओं का दूध जमाकर उसमें से जा मक्खन निकलता था वह औरथि के साथ दिया जाता था।

### बाघा-गन्त पुर्ण में प्रवेश

शिवकुटी में त्रिप गमय मोटर पहुँचा तो वि० सुबुन्द और मातृवीयजी के साथ दाईं बाग में गहारा देकर मातृवीयजी को मान्द में उतारा और फिर यही बरिजा में से बाघा-गन्त के कमरे में पहुँच। गन्त अन्त हो गये थे मातृवीयजी।

बाघा गन्त के लक्ष्यार्थ नियमों के अनुसार विरिगा आरम्भ

होने के पूर्व मानवीयजी का मुँहन रबत यमन हत्यादि कराया गया। तपस्वीजी ने स्वयं अपना मुँहन कराया और आत्मा ही रिओ निरन्तर मानवीयजी की यथा म रूहे उसका भी मुँहन आवयन है। अतः वि० मुन्द से भी मुँहन कराया। मैं तो यह दण्ड दगाकर हिरान था। दृष्टता शमा हो। मर्यापि अनवर का यह गौर पूर्य ठरह से लागू नहीं होगा परन्तु म जाने क्यों उस बछ याद आ ही तो गया—

मन्त्रण छोड़ो विष्णु छोड़ो  
 गुरुर बरभो, उग्र गबायो।  
 निन्द विरलरभी को उम्भोद  
 धोर इनको मुभोवन तोषा तोषा।

म कदर मामान हो नि क विण। पर विरिष्णु आरम्भ हो गयी। मैं तपस्वी ह्यामी को देगा। ऊनी उग्र १०० बय म अधिर बनायी जायी थी पर दग्ने म अधिर म अधिर ६० पर क सगत ५। गुरुर मन्त्रे चौड़े दृष्ट-पुत्र गौरबाउ एव प्रत्रिमा लामा। यदि बोरेय कन्ध पाउरु न किन्द हीन और शाम को बैरु म दिगपायी पदुन हा पही मममत्रा वि वि ि दंगल म अनी आइ विगाने आन है।

### निदिग्ता १। श्यम्या

पालाश नि अन्न रूपवा फल का निष्प दा। नाशयु गव का मानिसा जो मानवर्षदत्रा का निष्प दा ब-कर ही गया था। मन्त्रण क गाप ओरधि ओर वरर दुर ही का अन्त था। औरधि क निष्प दा क न्हे हूत अ-र का प्रजाग लना था। तरगी श्यामा रात्र प्र-वन्त अ-रता का एव प्र-वन्त म श्रीम मैरीग मय दूर म-रन्त म-रने के आन द। पन्तु के बुता को ऊरर म कन्तर उग्र तन क र्क-म अ-रता म-र निष्प दा

था। ऊपर से गजपुत्र ( मुह बंदकर उसके चारों ओर मट्टी लहने-सना कर उसके चारों ओर टपसी की छानग जमा दी जाती थी। इस प्रकार प्रतिदिन यह प्रक्रिया बम्बनी रही। दूसरे दिन तपसीजी पहिले दिन के पसाम के लने में पना हुआ आविषा मेकर और दूसरे पेड़ में नया आविषा भर गत थे। एक हुए आविषा को माकर तपसीजी उस शट्ट म मिगो देत थे। उसम ब कोई और औपधि भी मिनात थे। इस औपधि का नाम उन्होंने किन्धी को महीं बताया। इस प्रकार तैयार किया हुआ आविषा मकयन ब साथ मानवीयजी और शास्त्रीजी को औपधि क रूप में दिया जाता था। आहार के लिए दिन म चार बार दूध दया जाता था प्रारम्भ में आविषा और मकयन एक टाँट दोनों समय में दिया जाता था और वह तमशा भीम सोना सब यडाया गया। दूध एक सर स मकर बाई सर तर ही ब मका। तपसीजी के आंगानु 12 मानवीयजी अधिपतर आगपाई पर ही बिधाम करत गत थे पर शास्त्रीजी उकर पूजा पाठ भी कर सत थ। मासमायका के बमर ब बमर में धीमदुमागवत का नित्य पाठ हाता था जिनम उम्हें बाई शास्त्रि मिलती थी। सागां ब मिलने की प्राय मनाहा थी। दिन में चार बार दूध ब और्वाध देने के लिए उनर पुत्र (प० मुत्तुल) जात थे। प्रातःकाल और गंध्या के समय तपसीजी पाम थे। मासवीयजा की पमगरना बभी-बभी उनर पाम जार्नी थी। और बभी-बभी कर नाम-नाम सागों को तपसीजी अनुमति गत थे।

प्रारम्भ में बीम दिन तन मानवीयजी को गसगोलर माम हाता था। एक दिन दाकर जपनाय मजक मानवीयजी म मिलने प्राय। उस समय मानवीयजी भीषे होकर लोर्न हाय पीर ब नी। रिय हुए टन गे थ। तपसीजी या दगाकर यह प्रमन्न हुए हो गानी पीर कर बमर मग—*Twenty years before I saw you walking with this cast in Delhi* ( बीम



ही था। इतने बड़े महापुरुष ने आयुर्वेद शास्त्र से अनुमोदित इस कायाकल्प को आयुर्वेद के परिष्कृत सत्यनारायण शास्त्री जैसे पुरस्कार विद्वान् के विरोध करने पर भी किया, इसकी अच्छी तरह से जांच होना आवश्यक था। पर यह सब कुछ नहीं हुआ। वह एक आँधी की तरह आयी और निकल गयी। मैं अपना मत इस पर कुछ नहीं प्रकट करता। मैं इनका अधिकारी भी नहीं हूँ। यदि तपस्वी स्वामी अब मुझसे मिलते तो उनसे यह अवश्य कहता कि—

बुर्बा बट बाप पर सब से तुम्हारा कुछ गिला निश्चये।

बगर यह तो कहूँगा तुमको क्या लजका या क्या निश्चये ॥

तन्त्रुस्ती परबीया गी हाती है विवाहिता महयमिणी नहीं।  
अभिज्ञान शान्तिस्तल में बरब शान्तिता को बिना करने के समय उपदेश देते हैं—

परपूर्वप्रवृत्तापि शीघ्रतया मा स्म प्रवीणं गमः ।

(पति तुम्हारी व्यवहाराधीन बनने लगे तो तुम चूट होकर उनके विपर्ययत घावगण न करना।) यह विवाहिता गनी का धर्म है परबीया का नहीं। तन्त्रुस्ती एक हृदय तब अकहेमना रहने लग सकती है। उमर बाद वह छोड़कर गनी जाती है। मानवीयजी ने जीवन भर उमकी अवहेमना की और उम अज्ञान्य मानिण धम न्यायि के समन्वय में रचना और उमकी तनित भी परवाह न करत हुए देरा और गमात्र के अनेक काम साथ रगे थे। आगिर बार हाइ मांग का हा यह गरीब है। उमकी शक्ति बहुत होत हुए भी गीमिन है दरा के बड़े-बड़े नेता देग के हिस में इगता ध्यान रगे। बाया-बन्य के गमात्र में मुझे गतिब न शेर की यात्र घानी है—

इसको मान्य है अमन की हरीरन लेरिन

दिव के बरमाने को तानिर दे स्थान कच्छा है।

बाया-बन्य ने बर्द नर् बा मानवीयजी की धर्म-गनी का

लि हुआ। यह मैं मानता हूँ कि उसमें उन्हें बहुत आशा  
 था। परन्तु उसका बाप उसका छिद्र निकाल कर निकल हो जाने का  
 एक मौमाप्यकता बुझाने की प्रार्थना की। वह तो निमित्त  
 न थी। (दूसरा) वा मासवी-जी का अपने मास्य की निरन्तर  
 प्रार्थना। बुझाने में मास्य के मन करनेवाला का दाव निरान  
 था है। बिस्मिल्ले का मास्य न ही है—

बस बेहक होता है वे जिन्ना जिम्मानो का।  
 खैरी यह रही है मार लोकाका। खैरी का।

पढ़ेवा का एक पत्र है—

Believe in God  
 And in thine own self believe  
 All that thou hast desired  
 Thou shalt achieve

( ईश्वर में विश्वास करो और स्वयं अपने में विश्वास करो।  
 जो कुछ भी तुम्हारी इच्छा होगी वह विश्वास ही तुम्हें प्राप्त  
 होगी। )

ईश्वर में विश्वास और करने का मतलब यह विश्वास करने  
 दोनों पर अनुभव का मतलब है। मंदार का मतलब धर्मियों  
 के सार्वजनिक में इन दोनों शक्तियों का अनुभव किया गया है।  
 मानवीयता एक विश्वविद्यालय में लाना प्रथम कर्म से ही  
 इन दोनों पर बहुत शरत इन से और उबरी बरी विश्वास और  
 मार्मिक ध्यान का मतलब है—

उद्धारात्मकता का मतलब धर्मियों का मतलब है।  
 धर्मियों का मतलब है धर्मियों का मतलब है ॥ दीर्घ धर्म

मनुष्य धर्म का उद्धार और है धर्म। धर्म धर्मियों



गिरने न दे। क्योंकि (प्रत्यक्ष मनुष्य) स्वयं ही अपना बन्धु (प्रयत्न सहायक) या स्वयं अपना धर्म है।) भगवद्गीता-रहस्य - निम्नक।) सोमाग्य से म विद्वविद्यालय से उपस्थित था जब मातृवीयजी इस दशक की व्याख्या कर रहे थे। उन्होंने नारदानमवसानम् की व्याख्या इन प्रकार की - मनुष्य को चाहिए कि वह कर्म भी अपने में हीनता का अनुभव न कर और अपने में सब विद्वान् रहें। छात्रों और अध्यापकों के सम्मान के लिए उन्होंने 'inferiority complex' शब्दों द्वारा निम्नक का प्रयोग किया था और कहा था कि मनुष्य में हीनता नहीं होनी चाहिए। यदि मनुष्य में आत्मविद्वान् है तो वही उनका सबसे बड़ा बन्धु है।

प्रायः सभी भाषाओं में साहित्य में इन दोना शक्तियों की प्रशंसा की गयी है। उन्हें साहित्य कहा है—

गुणी को बर बाल्य कि हर तत्काल के पण्डित ।

गुणा बरने में सब पुटे बना लेगी रक्षा बना है ॥

—श्याम

आत्मविद्या पर यह बयान हमारी धारणा है—

जहाँ मैं हूँ वहाँ किसी भी धर्म का भ्रम नहीं रहेगा ।

ये शब्द हैं धर्म की शक्ति का धर्म इतना बड़ा है कि जहाँ भी ।

इस प्रकार की उक्तिओं से संसार का साहित्य भरा पड़ा है। विस्तार में मैं अधिक नहीं लिखता ।

यह कहना अनापत्त है कि मातृवीयजी में ईश्वर का प्रति और अपने प्रति बहुत विद्या था और यही बाकी हिन्दू विद्या विद्यालय की स्थापना का अमिष्युक्ति का मूल मंत्र था ।

बाकी हिन्दू-विद्यालय मातृवीयजी की एक मात्र प्रति होने हुए थी उनका विद्यालय एक ही मनुष्य का मनुष्य ही है। यह बयान ठीक एक कोने की भाँती माना है। मातृवीयजी की मृत्यु

पर प्रयाग के हाईकोर्ट के बाय एमेगियेशन की शोरसभा में बोले हुए छत्र राजराज्य मंत्र न बना था—

If he had done nothing else but found-  
 ed this University and helped it to reach its  
 present position his name would be immortal  
 in Indian history”

अर्थात् यदि हम विद्वानों को इस का स्थापित करने और उसे  
 उसकी समान स्थिति पर पहुँचाने में मददगार बन कर धार्मिक  
 उद्देश्यों और कीर्ति के नाम से बिना शर्तों की उमदा नाम  
 भारत के इतिहास में कमरे लगा।

उसी समय पर वह गोपीजी ने नन्दोदन में लिखा था—

मानवीयता के काम था है। बहुत बड़े हैं। उनमें सबसे  
 बड़ा है हिन्दू विद्वानों का।

उन्ने पहिले मन् १६३१ में गोपीजी ने लिखा था—

भारतीय विद्वानों के मानवीयता प्राप्त है। कभी विद्वान  
 विद्वान मानवीयता का प्राप्त है। बहुत मन्-वीर हमारे लिए दीर्घायु  
 हो।

गोपीजी ने उनसे अधिक अभिमान में कभी विद्वानों का कहा  
 है। उन्हें हिन्दू राज का प्रयोग नहीं किया है। शक था है कि  
 भारत में मानवीयता ने हमें मन् का नाम कभी विद्वानों  
 लय रखा था। वागों हिन्दू विद्वानों के मन्। गोपीजी  
 लिखते हैं—

‘मन्’ म उन्ने हुए बनारस हिन्दू विद्वानों के नाम से  
 पहिले है। उस नाम के लिए दोर मानवीयता मन् का  
 नाम उन्ने पहिले का रखा है। मानवीयता का मन् दे।

विद्वानों की मन् के सम्बन्ध में मानवीयता की बात

कविता इस प्रकार है—

अथलु विश्वविद्यालय कागो ।

मानु संम पय आहि विद्यालय सुलपम सुखराघी ।

बालत विश्वनाथ विद्यागुरु शकर अत्र अभिनागी ।

ज्ञान-विज्ञान-प्रकाशी ॥

संग-अमर-सयम विषय रंघो मुपत र्छो अयता-सी ।

ईसा-कुराते तोइ सरस्वति बाणलसो प्रकाशी ॥

तिविर-अमर-विनागी ॥

अवि-मुनि संग नृप-अहम तोहुत असब परम हुमाती

देत अमोत अलहु अट अलहु सब विषय भारतवाती

अरु विद्यालय रागी ॥

इसमें भी मासवीयजी ने विश्वविद्यालय कारी कहा है  
'द्विष्ट विद्यालय कारी नहीं ।

एक प्रमाण और भी । विश्वविद्यालय के शिष्याभ्यास क प्रस्तर  
पर ये दसोक लिखित हैं—



कागोविश्वविद्यालय ।

आये सुपमे अनिरदि तिवि सुखारे निनाया

ग्यामं बाणो हुवनअमहोमग्निने विश्वमागे ।

आज पय अविअनपुरं तिविअविद्यालयपया—

काथोइ अमरा अनिनिपरतो तोहं अविअनपुरोनि

एक प्रस्तर के बीच एक योग के भीतर एक ठाँवे का दृष्य  
है । उस दृष्य के भीतर अन्य तात्कालिक भीजों व साथ एक ताग्र  
पत्र रखा है । उस ताग्रपत्र पर जो मन्त्र है उस ग्यां का ह्यो  
उद्धृत करता है—

अथं अनामं बीरय अनामदेगेन बीरिनम् ।

भुगने दुर्म्यंवाथं अ अनामं मानवं सुतम् ॥

कर्त्तुं ब्रह्मसूत्रमाहरे तने भारतमुनिषु ।  
 धारोपयितुमुदारधीशस्य पुननवम् ॥  
 वागीश्वरे बरिभेभ्य संगापीरे बहोरथा ।  
 पुत्रेष्टदा पुष्यगम्यन्मा सज्जाना जगदात्मकः ॥  
 तस्यमयाच दाहवायाः प्राच्याश्चारि प्रजा निजा ।  
 तद्यत्त ज्ञाना विषयैश्चयत्तं मुमक्षितताताम् ॥  
 विद्वन्नायपुरे विद्वज्जनो विद्वन्माह्वनः ।  
 विद्वन्नात्माऽऽचार्यैश्चिद्विषयातीड् व्यहसिचरिषु ॥  
 दत्तितमात्रनञ्जामुत्तमोदाया बरोत्तुम् ।  
 त्मधीयो वैदान्तो विज्ञा मदनमोदन् ॥  
 ताय बाह्वन तेजान्म्विभुर्बोध्य भारतनः ।  
 बरुवानि तद्यत्तानास्मिन्मर्षे व्यपत्तन्तुम् ।  
 धार्ये चानि निमित्तानि प्राक्कल्पन्मरात्मनः ।  
 बोधनेरुतूरी बोरो मयानिहो बह्वन्मा ॥  
 धीरायोदरानिहो बह्वन्मा-बहोपतिः ।  
 प्रचल ज्ञान्य वात्स्या लभाया ज्ञानवर्षनः ॥  
 सुधी- सुधरनामहव मन्त्री बोधाभिरहवः ।  
 सुधनातिपरामी ज्ञानमी चाम्पिनो तथा ॥  
 तथा राजविहारी च सुतः ये देवदत्तनमः ।  
 ज्ञानाज्जान्ये ज्ञान्यो ज्ञानाज्जान्य निचरिरे ॥  
 विज्ञोत्तियोबहोरात्र बोध एहवर्षेष्टे ॥  
 तद्यत्त ब्रह्मये ज्ञान्ये भारतं परिगापति ॥  
 वैश्वानरान्निहामीरजन्तुराज्जान्यर्षिणात् ।  
 बोधान्जान्युरेष्टीरज्जोपपुराविभुम्पितम् ॥  
 तथा बभूवनावाज्जान्योत्तियोदरात् ।  
 ईतिश्चा लह्यार्थं लज्जान्यराज्या ॥

धर्मस्य सवर्षर्माणां रसाय प्रक्षयस्य च ।  
 प्रचाराय स्वकीयानां स पूर्वैः परं प्रभु ॥  
 सार्धहाडिज सुविख्यातं सञ्जातं प्रतिनिधिं वरम् ।  
 धीरं धीरं प्रजाबन्धुं जनानां हृदय ममम् ॥  
 विरचयित्वा मजस्यास्य शिलाभ्यासे न्ययोजयत् ।

सदाशमे नेत्रभूमूर् प्रहृपरदिमिते वैश्रमाप्रदे च मासे ।  
 बापे पत्ने च मन्त्रे प्रतिपदि च तिथी बहिः पुत्रे सत्से चदे ॥  
 धी कदापि नीलनभ्राद् प्रतिनिधिरुत्तो यच्चिदात्मात्त प्राचीद् ।  
 यद्व्यग्राहार्त्तारं वितगन्तु म महाविद्यालयोऽयम् ॥

सरस्वती धुनि मङ्गली म्लीयताम् ।  
 तन च ता ज्ञानगुणा निपीयताम् ॥  
 सदा मनिं सुप्रचरिते विपीयताम् ।  
 रनिं वरा परमगुरी प्रबोयताम् ॥

(सनातन धर्म को क्यान के बेग स पीड़ित तथा गम्भूरे  
 भू मग्न के प्राणियों को दुगी अवस्था में और आबुन दय कर  
 कमियुग क पाँच हजार बय ब्यतीत होने पर, भारत भूमि पर,  
 बारी-भोज में गंगा के पावन तट पर इस सनातनधर्म के बीज का  
 पुन मर्बात रूप स प्रारोण करने के लिए जगदीश्वर की शुभ  
 पुष्य षष्ठा उन्मात्त हुई । आनी प्राच्य और पारवार्य पूजा को एक  
 में मून-बद्ध करके और त्रिशष्ट विद्वानों का एक-मठ कर, बिद्व  
 मावन विद्वन्मन्त्र विवस्रष्टा ने विद्वनाय की मगरी म विश्व  
 विद्यालय के संस्थापन की व्यवस्था की । देशभक्त विप्र मदनमोहन  
 मामर्बाय परमेश्वर का इस दृष्टा के पूण करने के लिए निमित्त  
 मान बने । भारत को जगा कर और उनमें वाद्मय तेज का  
 विषाण कर भारत के राज्यों को धनुरक्त कर इस कार्य को सचन  
 करने में उन्हे प्रवृत्त किया । मगवान् का षष्ठा की पूर्णि में  
 धीर भी बई महानुरा निमित्त बने । मगमना दीरानेर-भरेण

वीर महाराज श्री गंगासिंह महादुर, बायेंधारिणी समा के सम्मान  
 वधक मभापति दरभंगानरेश स्व० श्री रामदेवरासिंह जी मंत्री एवं  
 योग्यता डाक्टर श्री सुन्दरनामजी सर गुणाम बनर्जी श्री  
 आदिभ्याराम मट्टाचार्यजी बिदुपी श्रीमती एनी बेसेंट डाक्टर रास  
 बिहारी घोष तथा अन्य विद्या-बयोवृद्ध देश-प्रेमी मगवत दासों ने  
 यथाशक्ति दसवीं तथा बी। महाराजी बिस्पोनिया के पौत्र महाराज  
 एडवर्ड के पुत्र सम्राट् पंचम जार्ज के शासनकाल में मेवाड़ बारी,  
 काश्मीर, मसूर अजमेर, बीटा जयपुर, लूट जोपपुर क्यूबंसा  
 नाभा ग्वाबियर आदि राज्यों के नृपतियों को तथा अन्य धनी-भानी  
 राज्यों को दमनी महापता के लिए प्रेरणा कर सब धर्मों व  
 जन्म-गता सनातन धर्म को रक्षा एवं उत्पत्ति के लिए तथा अपनी  
 सीमा के बिस्तार के निमित्त वहीं परास्पर प्रभु ने सम्राट् व प्रति  
 निधि ( बायगगाय ) धीर-वीर प्रजावन्धु श्री साह हादिख व द्वारा  
 इस विररविधापन का शिनाय्याम करत्या ।

श्री विजय संवत् १९७३ में माघ शुक्ल प्रतिपदा शुक्रवार के  
 दिन शुभ मूर्त में श्री बानी नगरी में सम्राट् के प्रतिनिधि के द्वारा  
 जिस विररविधापन का शिनाय्याम किया गया वह सूर्य और चन्द्र  
 के रहने तक सुरोभिष्ठ रहे ।

वेर वे मृतो तररणी को धमिबुद्धि हो ।

तब उनमे भरते हुए ज्ञान के कपुन को लोप तिये ।

सुद्ध बरिख वे बुद्धि मरा मयो रहे ।

वररबुद्ध ( जिब रिगु जाह ) वे घण्ट धनुराण को वृद्धि हो ॥

इस सम्ये शासनकाल में श्री हिंदू राज का प्रमाण नहीं किया  
 गया है । परन्तु इन उररुक्त स्थानों पर हिंदू राज व न प्रबुद्ध  
 होने में सुभे दगा लगता है कि मानवीजजी ने इसका नाम पहिने  
 जारी विररविधापन ही रगा था ।

इने इग सम्ये शासन का धम्युर्न उदररु बर्द कररजा है

क्रिया है। यद्यपि मेरे पास इसका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है तथापि मुझे ऐसा लगता है कि यह ताम्रमेख स्वयं मानवीयजी की कृति है। वे संस्कृत क विद्वान थे। संस्कृत में बिना किसी तयारी के वेर एक मापण करते थे और संस्कृत में पर रचना भी करते थे।  
 प० अम्बिकाप्रसाद उपाध्यायजी मिलते हैं—

संस्कृत भाषा के ऊपर भी मानवीयजी का पूर्ण अधिकार था। संस्कृत में व्याख्यान तथा दमोदरबद्ध भेक्त मीने देखे हैं। संस्कृत में व्याख्यान मीने सुना है (एक समय) संस्कृत साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हुआ। संस्कृत साहित्य-सम्मेलन के स्वागत भाष्यका मालवीयजी थे। कार्य अधिक था। मालवीयजी अस्वस्थ भी थे इसलिए अपना मापण तैयार नहीं कर सके। बोने, हम बोलेंगे समय पर बोमने के लिए रखे हो गये। हमसे धीरे से बोम अंगुडियों को गिनकर कहना। अपना मापण पर मिनट तक अपने मन से बोमते गये। मैं ध्यान लगाये था परन्तु कहीं भी कोई अंगुडि न हुई। व्याख्यान समाप्त कर, बैठे तो मुझसे पूछा। मैंने कहा कि हनुमानजी के व्याख्यान के बाद प्रायः वात्मीकि न जो टिप्पणी मिली है बहु व्याहृतानेन न किञ्चिदपरस्मिदतम्' बही मेरे स्मृति-पत्र में आ गयी है। मानवीयजी महाराज हमसे मिले।

अपर्युक्त ताम्र-लेख का सम्पूर्ण उद्धरण इसलिए भी दिया कि यह विश्वविद्यालय के संस्थापक का एक संक्षिप्त इतिहास है और उसमें संस्थापक की ईश्वर भक्ति धर्मनिष्ठा एवं पवित्र-हृदय की एक मुन्तर झलकी है।

परन्तु इनमें भी महत्त्वपूर्ण इनका प्रार्थम्य इतिहास और उसमें सम्बन्धित कुछ संस्मरण हैं। श्रेयोसि बहु विघ्नानि', अथवा नाम करने में बड़े विघ्न हान है। परन्तु धीरे एवं दृढ़प्रतिज्ञा पुरुष उनमें विचलित नहीं होते।

कहा भी है—

प्रारभ्यते न तनु विज्जमयेन भीर्षं  
 प्रारभ्य विज्जविष्णा विरमन्ति मध्याः ।  
 जिष्णं पुन पुनरपि प्रनिहस्यमाना  
 प्रारभ्य बोत्तमहनः न परित्यजन्ति ॥

अर्थात् भीषी थ्रेणी के मनुष्य विज्ज के भय न कोई कार्य  
 प्रारम्भ नहीं करते । मध्यम थ्रेणी के लोग कार्य का प्रारम्भ तो  
 करते हैं परन्तु जहाँ विज्जों का पड़ेगा सगा तो हाथ पर हाथ रग  
 कर बैठ जाते हैं । परन्तु उसम थ्रेणी के लोग जिष्ण नाम की हाथ  
 मत हैं फिर मुट्ट नहीं मोड़ते । मर्यादात्मिकि ने भी कहा है—  
 मर्यादा वा परि वा कार्य यो हि वाच्यमुदीरितम् ।  
 तत्परे वरिष्णुह्यारि न बोत्तः पुरबोत्तय ॥ वाग्भोदि ।

अर्थात् चाहे गरी हो अथवा चाहे लोग उस अनुचित समझे  
 जो बात जबान से निरम गयी उगता जो सत्यता से पानन करता  
 है वही मर्यादात्मिकि पुण्योत्तम है । मत् १६०४ में माणवाप्यत्र ने  
 एक विशाविदास्य के संन्यासन का निश्चय किया । उगमें अनेक  
 विज्ज भाय परन्तु माणवीयत्री का तो उमूय था—

बला बाता है ईश्वरा नेकता करे ग्वादिन के ।  
 अथर वातामिनी ही शिखरी पुण्यर हो चाये ॥

पशुने जब अने स्यागन्त ही परमाणु म करने हुए अपनी  
 जान की बाधा सगा दा तो यह बन कर ला रहा ।

बाद बेनी है दक्षिणे-शीर्ष,  
 शिखरी दक्षिणतः वरुणी है ।  
 इह उरु बोध के न्यस्यता है  
 जैन बुद्ध पर न्यस्यता वरुणी है ॥

उसके जानन से कई मोक्ष प्राप्त करने जब उसके साथ भी  
 नामा पर लड़कर शिखरी-विष्णु अने पर्ये पर



बुका था वह मल मस्तक होकर झोट गयी।  
 सन् १९०४-५ में सर्वप्रथम एक विरबविद्यालय के संस्थापन  
 की चर्चा छिड़ी। जोर जोर से उबास आया परन्तु कई ओर से ठंढा  
 पानी पड़ने से शान्त हो गया। पर नीचे अग्नि रंगी की किसी बख्त  
 उबास आ सकता था। उस समय की रस्ता-करी देखने  
 लायक थी। एक ओर मामवीयजी ने उस्ताह की अग्नि और दूसरी  
 ओर उनके फू-फू-फू कर बसनेवाले मित्रों ने उस्ताह के मंग  
 करनेवाले मुहुस बचन। यह संग्राम कुछ देना था जब कुछ और  
 शिगुगाप के बीच हुआ था।

मधुरैरति भूयता स वैर्ष्य

प्रथमं प्रयुज्य चारिभिर्विबीये।

एकमाननकं तस्य बभूव

प्रलयशोप इवागमन् विबावः ॥ माय ।

(शिगुगाप एक ओर से घाम्नेय घसत छोड़ रहा है। दूसरी  
 ओर से कृष्ण वाहणास्त्र छोड़ रहे हैं। पहिले तो ठंढे पानी के  
 पड़ने से अग्नि मभरी पर निरन्तर पानी पड़ते रहने से प्रणय श्रोष  
 की भाँति शान्त हो गयी। प्रेयसी श्रोष में भरी बहु शम्भ उगल  
 रही है। प्रियतम उस मनाने के लिए मुहु शम्भों का प्रयोग कर  
 रहा है। पहिले तो प्रेयसी की प्रोपाग्नि इन शान्तवमा क शम्भों से  
 मदर्नी। परन्तु जब बहु अनुनय विनय करता ही बना गया तो  
 प्रेयसी का प्राप शान्त हो गया।)

सन् १९०६-७ में विरबविद्यालय की चर्चा एक प्राग से  
 शान्त हो चुकी थी तबानि मानवीयजी की मगत की अग्नि तो  
 'भन्न-प्रमुत्तत दान' के गमान नीच मगी थी। जिगी गमय भद्रक  
 राहती थी। गौभाम्य ग बहु अत्रगर था ही गया।

गुन बसोत्रे इह को बंजन को बणि तो ब रो।

दिर बने बरने न उह बडे लगरा देल कर ॥

१९०१ में अलीगढ़ में मुस्लिम यूनिवर्सिटी की चर्चा हुई और  
 बात भाग बढ़ गयी। मानवीयजी को सहाय मिल गया। उन्होंने  
 विद्वान्निगमय की चर्चा फिर बनायी। उनकी प्रतिनापा थी कि  
 बारी और प्रयाग के बीच गया के तट पर जेमे प्राथम स्थापित  
 किये जाय जहाँ देश के नवयुवा और ताड़कियाँ ज्ञान-यज्ञ के धाय  
 माय परित्र निर्माण की भी गिया पा सके। मन् १९११ में हिन्दू  
 यूनिवर्सिटी सोसायटी की स्थापना हुई और इसी नाम से विद्व  
 निगमय का रजिस्ट्रेशन मा हुआ। १ अक्टूबर १९१३ को 'बनारस  
 हिन्दू युनिवर्सिटी बिल' पारित हुआ। बारी के स्वर्गीय बाबू गिव  
 प्रना गुप्त मानवीयजी के सनन्य मच्छ से और मानवीयजी उन्हें  
 पुत्र की तरह मानत थे। गिवप्रणा मिलने हैं —

'हिन्दू विद्वान्निगमय का आन्वयन प्रत्ययुक्त की बाढ़ के सहाय  
 मु' की 'गेर बेग म' बढ़ रहा था। उनके भागे के पप का  
 समा अगमना हो चुका था। घर जिनना-रिहार म बाहू मानवी  
 यत्रा क मिल हुआपा भाया यत्र क माप से की सिनना पहुँचा।  
 परमोबारी राजा 'रनागति' की कोपी म शुभ माय टरछने  
 गय। बाबू उम समय के गागराय म मिलने गये और वहाँ स बड़े  
 प्रयत्न भाये और मुझे सुरक्षित बना दि बान्गाल में विद्वान्निगमय  
 को बनाने का चयन दे दिया है। मेरे बागे तो बन में बून  
 मर्त। मैं जो मन् रह गया और मेरे मुत्र म मन्त्र निरत पदा —

This is the death-knell of the Hindu University  
 अर्थात् यह तो हिन्दू-विद्वान्निगमय की मृत्यु-घण्टा है। अन्य 'म  
 मोग ऊपर म मर कर फिर गाँव बाहर' अवे। बागीर की  
 दूरा म्मा में मन्त्रमाला परमोबारी मन्त्र माण्ड मर मे  
 का हि — Charter or no Charter Hindu Univer-  
 sity must exist फिर ऊपर में बाबू न बना दि — Char-  
 ter and Charter Hindu University must

इन बाब्यों से दोनों महान् व्यक्तियों की मनोवृत्ति का भसी भाँति पता चल सकता है। अब तो चारों ओर से लोगों की सहानुभूति समझने लगी। लाहौर से डेप्युटेशन आगे बढ़ा। मेरठ में बड़े समारोह से सभा हुई। १२ वीं तक का सम्बा प्रसूस निष्पत्ता। परमोक्तवासी महाराजा दरभंगा ने आकर शिरकश की ओर सभा पति बनना स्वीकार किया और २ लाख का दान भी दिया। इसी के पहिले पूरब पंडित सुन्दरमानजी ने भी श्री हारकोर्ट बटलर के बटने पर मन्त्रित्व स्वीकार कर लिया था। अब बहाय का दस्त दूरबी और चला और विद्यालय के निचे धन की अनन्तवृष्टि होने लगी।

४ फरवरी १९१६ को लार्ड हार्डिंग ने विन्डविणालय का रिमा म्यास किया। मैं उग अवनर पर उपस्थित था। समारोह का क्या बहना था। मासवीपत्री का स्वप्न जा पूरा हुआ था।

इस बात को हुए ४६ वर्ष हो गये। उनसे सम्बन्धित पन्नाओं की स्मरणता एवं उनका क्रम प्रामिल पद गया। अतः घटनाक्रम में थोड़ी भ्रान्ति हो जाना स्वाभाविक है। इसी अवसर पर था इसके कृष्ण ही आत्म-वास शिवाय्यास के मदान में एक सभा हुई। इसमें बड़े-बड़े राजे महाराजे राजगी ठाठ से मुमग्जित उपस्थित थे। गाँधीजी थे। श्रीमती एनी बेवन्ट भी थीं। सोमा के व्याख्यान हुए। इसने मे मासवीपत्री ने गाँधीजी से अपने रीसुग स कृष्ण बटने के लिये कहा। यह कन हो सकता था कि मना में गाँधीजी हो और मासवीपत्री उनसे बोलने का विष् न कहें? गाँधीजी उठे।

तोने हुए उनको अपना एक बीरता थी।

जाने हुए उनको गुनाहा एक बात था॥

( गिटू के प्रति एक बलि की उक्ति)

जाने व्याख्यान के किमी प्रसंग में महाराजाओं की ओर देखकर उन्होंने कहा विपन्न मार यह था— 'जब जनता सुर्तों पर रही

है आपकी हम हीरा जवाहराज के पहिने का कोई हक नहीं है।  
 य सब जनता की सम्पत्ति है। राजा लोगों ने बम्-बसाकर यहाँ  
 राजसी टाठ म सुनहराने हुए-एग गून के घूट का पी लिया।  
 पर जब गांधीजी ने किसी प्रसंग में यह कहना धारम्भ किया कि मैं  
 ता बस केनेशन की प्रशंसा करना है तो गजब हो गया। इतना  
 उन्होंने कहा ही था कि श्रीमती एनी बेन्टन भट्टे म गयी हो गयीं  
 और बोली— Stop Mr Gandhi और इसक पहिने कि बहु  
 और कुछ बहू—बहुत दिन की बात हा मयी परन्तु जहाँ तक  
 मुझे याद है—मस के पहिने महाराज दरमया वा महाराज भूमर  
 और उनके बाप एक-एक करके सब राजे-महाराजे पंढान के बाहर  
 पन गये। गांधीजी हुम्ने सगे। मै एग बोने में भीमका था मया  
 मठ मस ध्यागार दग रहा था। मानवीयजी क परों क तमे की  
 प्रमान मसा मयी और उनके हृदय म जार की पीदा उठी। लोग  
 उन्हें सुरत बाबू शिखरशाह गुन की कोश्री पर म गय। कोश्री  
 निरु ही थी और मार्पवीयजी उन शिनों बने उने थे। सुरत  
 बकिराज गणनाथ सेन आप जोग दग-एग मिनट पर कोई रख  
 देने सगे। मै पहिने ही कोश्री पर पदैन गया था। कोश्री के बाहर  
 जनता यांग सोके उद्विग मयी थी। मबर फल मया कि मानवीयजी  
 को हृदयापात (Heart attack) ने गया है। गांधीजी तो जनक  
 गाप ही जाने थे। राजा-महागजसों को भी मार हो देर म  
 मयी। जब मानवीयजी की मरीयत हुआ मयी तो गांधीजी ने  
 उनम बना—एग लोगों ने ही मुझे बोने ही मयी लिया और उउ  
 बर जाने लये। मै तो जाने जाने जा एग वा कि एग बस पंने  
 बनो का एग वा शि मसभार लयेकी पर एग रगता प्रसंग  
 मीन है। इगग बोन एगार का मकना है परन्तु के एग राये  
 पर है और एग अरे सुरत लोड देना मयी। मै तो लिये का  
 दुसायी है। मै जना हिजायत बाव की बँदा मरंग बर ॥

मामवीयजी को थोड़ी डाकड़ हुई। इसने मैं राजा महापद्मार्जुन की मोहरे घाने लगीं। मामवीयजी ने उनसे सब बातें जो गांधीजी से हुई थीं कहीं। राजाओं ने स्वयं कहा कि आप समा क्त फिर बुनावें। यदि उसमें गांधीजी इसका स्पष्टीकरण करने कहें तो हम सब लोग आवेंगे। मालवीयजी की जान में जान आयी। गांधीजी ने दूगरे दिन समा हुई। सब राजे महागजे आवे। गांधीजी ने स्पष्टीकरण कर दिया। बला टस गयी। काली विश्वनाथ ने मालवीयजी की इच्छा-पूर्ति कर दी।

यथा वेदा वाचा चिरन्ति तथा ब्रह्मतस्वत्

मालवीयजी—मिश्रुम

बर जाईं मांगूँ नहीं अपने हित के काज।  
बर-कारज हित मांगिबो मोहि न आवे साज ॥

दूसरे क मामने हाथ पसारना !! चिखनी धुलित बात है। कोई भी घादमी जियबी भाग का पानी हरक नहीं गया है यही बलेगा। 'मांगन ममो न बाप न जो बिधि रागे टेक। इस बहारत की मोग दोहार्द तेन है। परन्तु दुनिया में ग्य भीजा के भावाद होने हैं। यहाँ तक कि तासीराउ हिन्द ( Indian Penal Code ) में भी बड़े-बड़े जुमों क अदवात 'अंतरण एवमपूरान्ध' के नाम से लिखे हुए हैं। जमी प्रार इस मांगने के पाप का अदवाद है। साहित्यशास्त्र कटवा है—

अथमुन दुर्बारे क प्रियकरने न एव बरिजगा।  
इतरेपमत्रगा वो पुक न एवागुदमनबो पुक ॥

जो बाग तक क मुग न गाना मगतो है, कही बात प्रियजन के मुद्र स मनी लगती है। उगाउरण क लिए, यम की तापदी से निरमा हुआ पुमा दुगायी हाज है और उग पूम कटने है। यही पुमा जब अद की मरफी स निरपगा है वा मुगायी होगा है

और उस पून बहुत है ।

महाकवि आम्बर साहाबाजी ने भी कहा है—

तब मैं भाँप, जो दुग भाँपना हो ये 'घम्बर' ।

बनी जो दर है कि जितना नहीं तपान क बार ॥

इसका एक कारण भी है—

जिसने दुग लम्बी दिया एक बोझ सर पर रख दिया ।

सर से निचका क्या उभारा, सर से दूर रख दिया ॥

महाकवि ने कहा है कि 'म भूमिमानं विरह्यम सतिश्याम् —  
 बिना सतिश्या के दिया हुआ प्रचुर दान भी निरर्थक है परन्तु  
 सतिश्या की कौन बहै प्रायः सोय या तो अपना निद दुखाने क  
 निद दते हैं या अपने मन में घटमान ग प्रीति विग्रह सेन है  
 कि मन रखे और वस्तु पर काम आवे ।

क्या कहा है कि—

एतेषु ज्ञाने पून ज्ञाने धारणिकम् ।

बला दानकमेवु बला कश्चि क्व वरा ॥

( जो मैं एक पादमी बगदुर होता है हजार म एक आन्मी  
 वेद का पण्डित दग हजार में एक आन्मी मन पर धरने से  
 बोलने वाला होता है । परन्तु दान देने वाला मनुष्य होता है कपय  
 मनी होगा इससे मन्त्र है । ) सागपायरी में साध्य क इस मन्त्र  
 का निगहरण कर दिया । ज्ञाने जितना दिया कि कपय मन्त्र  
 की मनी ज तो लगा भी तो करता है कि सोपनेवाला के कम एक  
 हो और देनेवाले मन्त्रों हों ।

जसने बंधन सब छोड़कर सब भीतरा की रख लेता है ।

जो कर सर बरकने से मनी जितना बनी कर दार देता है ॥

सायब जी सांगने जो निरप ठो - ग्येनि हरारी की कानो  
 कर दिया और कर जितना मात्र बन गन ।

कोटा के महाराज ने मामवीयजी को धडाँजक्ति बर्षख करते हुए लिखा है—

'मामवीयजी अपने मित्रों से कहा करते थे कि भगवान् बिस्वनाथ स प्रार्थना करते हैं कि वे उन्हें बिद्वविद्यालय के रूप में दरौन में और उनकी प्रार्थना सुनी गई।

मामवीयजी के अन्त-करछ स निजसी हुई प्रार्थना में इतनी शक्ति थी कि—

अर-ब-अर परदे उट्टे, देसा तेरी तस्बीर थी।

अजय रिल की मेरी धरना तो यह तासीर थी ॥

परन्तु मुझे एक बात का आश्चर्य है। मोसा बाबा हर्म दासा करेंगे। इतना शक्ति-शाली अयमण्डल उनके सामने था। फिर उन्होंने शंकर ही स क्यों प्रार्थना की ?

एक बार महाराज रघु को भी बहुत से धन की आवश्यकता पड़ गई थी। संक्षेप में क्या इस प्रकार है—

त्रिस समय रघु विद्वज्जित यज्ञ में अपना सर्वस्व दान किये बटे थे उमी समय बरतन्तु के शिष्य कौतस अथि गुण-शिष्या देने के हेतु १४ करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं माँगने के लिए आये। रघु ने उनको मिट्टी के पात्र स अर्पण दिया। मिट्टी का पात्र देगकर अस्ता का माया टूटा और उनकी निघना उनके चेहरे पर प्रतिबिम्बित हो गयी। रघु तुरन्त ठाढ़ गये और मंत्रास का कारण पूछा। कौस ने जाने जाने का हेतु बताव हुए कहा—

तदयमनावावरनम्यवायो

मुच संतप्यु अर्त्तं बन्धिजे

स्वल्पान्तु के निर्वनिगन्तुवर्भं

आरुण्य नावेति वाताकी-ति ॥

(आपके पात्र तो कुछ नहीं है अर्थात् वे सब मिट्टी के हैं)

अर्थात्—रघुवंश-२-१७

अर्थात् वे सब मिट्टी के हैं

का द्वार सटगगता है। क्योंकि चातक भी जलहीन बादलों से जल की पुकार नहीं करता। आपस कल्याण हो। जब मैं जाता हूँ।)

रघु ने उन्हें साम्ब्यना दी और कहा कि आप पिन्ता म करें। मैं धन का धर्म प्रकाश करता हूँ। यह कह कर रघु ने अपनी मना को कुबेर पर तुरन्त बर्दाई करने की आज्ञा दे दी। युद्ध का डंका बजने लगा। कुबेर ने मुना। उना मरगा उठर गया। पत्रि ही में उहाने अयोध्या म सुवण रीं शृष्टि की। बाठ की बाठ में बीस को १४ करोड़ मुद्रायें मिल गई। वे बरिष्ठ हो गये और बान—

विश्वं विभ्रं यदि कामगुमुभुत

विचनरवापिनन प्रजावापु।

अविमलभोपानु तव प्रजाधी

वनीचिनं धीरपि येन युगा ॥

कालिदास—रघुवंश—१-१३

( धर्मनिष्ठ राजाओं को पूछी उनकी इच्छा क अनुमार यदि धन द तो कोई आरथय नहीं है। परन्तु आरथ प्रमाय देन कर यथमुच आरथय होना है कि आरने त्रिजना धन कहा उनना धन स्वत ग स सिपा । )

परन्तु महायज रघु में और मानकीयजी में कहा अन्तर था। वे वे दानिय और वे वे आश्रय ।

अथमुद्रि कहत है—

विश्वं ह्येनं वाचिधीय विजयत

वाद्यैः शीर्षं वत तत् अत्रिवास्तम् ।

( यह बात का गिड है कि वाद्य में वाचि कीय हाथा है। बाहु की बीर्षं का दानिया म दोश है । )

परन्तु इन संशय का निराकरण नहीं होता कि उम्हारे मानवान विरचनाप को क्यों पुना । ( आर सिदा मांगने द्वार नदें दयेता )



कोटा के महाराज ने मामवीयजी को अर्द्धांगिणी अर्पण करते हुए लिखा है—

'मामवीयजी अपने मित्रों से कहा करते थे कि मगवान् विष्णु-नाथ से प्रार्थना करते हैं कि वे उन्हें विश्वविद्यालय के रूप में दर्राँ दें और उनकी प्रार्थना सुनी गई ।  
मामवीयजी के अन्त करण से निकली हुई प्रार्थना में इतनी शक्ति थी कि—

अर-ब-तर वारे उटे बैसा लेरी तस्वीर बी ।  
अगवए रिल की पैरी धरणा ली यह लाघोर बी ॥

परन्तु मुझे एक बात का आश्चर्य है । भोसा बाबा हमें दामा करोगे । इतना शक्ति-शाली देशमण्डल उनके सामने था । फिर उन्होंने शंकर ही से क्यों प्रार्थना की ?  
एक बार महाराज रघु को भी बहुत से घन की आवश्यक्ता पद गई थी । संक्षेप में क्या इस प्रकार है—

अिन समय रघु, विश्वजित यज्ञ में अपना सबस्व दान किये बटे थे उमी समय वरदन्तु के शिष्य कौरव अथि सुरक्षिणा देने के हेतु १४ करोड़ स्वर्णमुद्राएँ माँगने के लिए आये । रघु ने उनको मिट्टी के पात्र से अर्पण दिया । मिट्टी का पात्र देकर कौरव का माया टनवा और उनकी निरपणा उनके चेहरे पर प्रतिबिम्बित हो गयी । रघु गुरन्त वाद गये और मैरास्य का कारण पूछा । कौरव ने अपने जाने का हेतु बताते हुए कहा—

तदगपततावदवन्तवरायो  
गुण बंजयन्तु मरं वनिजे  
तदगपन्तु मे निर्वनिताम्बुगर्भं  
वारापक नारनि वान्छोऽत्रि ॥

कालिका—रघुवच-२-१०

(भारते पाप तो कुछ नहीं है, इसलिए मैं अत्र विनी दूसरे

का द्वार छटसटाता है। क्योंकि चातक भी जमहीन बायनों से जम की पुकार नहीं करता। आपका कल्याण हो। अब मैं जाता हूँ।)

रघु ने उन्हें सान्त्वना दी और कहा कि आप चिन्ता न करें। मैं धन का सभी प्रबन्ध करता हूँ। यह कह कर रघु ने अपनी सना को कुबेर पर तुरन्त बर्दाई करने की आज्ञा दे दी। मुझ का डंका बजने लगा। कुबेर ने सुना। उनका मर्रा उठर गया। रात्रि ही मैं उन्होंने अयोध्या में सुवर्ण की वृष्टि की। बात की बात में कौत्स को १४ करोड़ मुद्रायें मिल गईं। वे चकित हो गये और बोले—

दिमत्र बिभ्रं यदि कामसूनु वृत्त

रिक्तस्यापिपत प्रजागाप्।

अबिन्तगोपस्तु तत्र प्रमाथो

मनीबिनं दीरपि वेन बुग्वा ॥

कालिदास—रघुबंध—१-१३

(धर्मनिष्ठ राजाओं को पूज्यी उनकी इच्छा के अनुसार यदि धन दे तो कोई आश्चर्य नहीं है। परन्तु आपका प्रभाव देख कर सबमुख आश्चर्य होता है कि आपने जितना धन कहा उतना धन स्वर्ग से स मिया।)

परन्तु महाराज रघु में और मानवीयजी में बड़ा अन्तर था। वे ये दानिय और ये ये ब्राह्मण।

भवसूति कहते हैं—

सिद्ध हृषेतर्वा वाचिबोय विजानां

बाह्यो बीर्यं यत् तत् अत्रिपालाम्।

(यह बात तो सिद्ध है कि बाह्य में वाचि बीर्य होता है। गह की बीर्य वा दानियों में होता है।)

परन्तु इस संशय का निराकरण नहीं होता कि उन्होंने भगवान् रवनाप को क्यों चुना। ('आर मियां मांगत द्वार राड़े दरबेण')

मगवान् दांकर तो—

स्वयं पंचमुखा पुत्री पद्माननपद्माननी ।  
द्विपम्बरं रूपं लोकेऽनमूर्त्ता न वेद् गृहे ॥

(शंकरजी के तो निज के पाँच मुख हैं । उनके एक पुत्र कासिकेय है जिनके ६ मुख हैं । दूसरे गगोरा जिनके हाथी का मुख है और अपने पान सिषाय भू जी भाँग के मगोटी तक नहीं है । दांकरजी के सिये इतनी बड़ी गृहस्त्री का पालना अमम्भव था यदि अतपूर्णा उसकी गृहिणी न होनी । ) गाँवारिक गृहस्थ इन अर्थों पर माव रतें कि उसकी गृहस्त्री का बेड़ा पार नहीं सग सकता यदि उनके पर में अतपूर्णा ऐसी सदुपमिणी नहीं है । परन्तु मानवीयजी बचनुर थे । उस ही उन्होंने कहा—

पर्यङ्कपरिचर्यापुत्रिपुलितनुःप्रपासनेवतभीतजामो  
रस्त.शाला रोपभ्युपरतमकमज्ञानकङ्केगिरपरय ।  
आत्मपारवानमेव व्यपगतकरणं वस्यस्तस्त्वहृद्यया  
घाम्भोर्धं पशु शुभ्येसालुघटिततयकह्यतान्य समापि ॥

पुत्रक । पृथक्कटिक

(पर्यङ्क पर आसन लगाये हुए, सब इन्द्रियों को ज्ञान से बरा में बैठ अपने को अपनी ही अन्तरात्मा में घनिष्ठिष्ठ बैठ अपनी तस्व-दृष्टि से ( हमारे अभिसापित को, देराते हुए, मगवान् दांकर की ब्रह्म में सीत गमापि हमारी रक्षा करे । )

दशना पर्याप्त था । शंकरजी ने सम्पूर्ण मार अपने ऊपर छोड़ लिया । उन्होंने जिना मेरे गुणदेव प्रातःप्रमरणीय पीठित बायकृष्ण भट्ट के सुपुत्र स्वर्गीय पण्डित लक्ष्मीरान्त भट्ट ने एक बड़ा गुम्बर बनाया था । जमदग्नि के ऊपर बारीक विस्तार स्थापित है । मानवीयजी बनना सम्पूर्ण बच—पगड़ी कुट्टा पायजामा इत्यादि—पत्तिले तिन की निंदी को अपनी बाँझों में मोट कर दड़ना से पकड़े हैं और जमता गगयें में धन भर कर निंदी पर उड़ेन रही

है। उस समय ब्राह्मी विद्वन्नाथ श्री निही करी हिन्दू विद्वद्विषय  
लय की आदृति का अनुकरण कर रही थी। कर्म का प्रसंगत  
यही भाव था। मुझे क्या मासूम था कि आगे चल कर मैं मान-  
वीयजी के संस्मरण लिखूंगा वर्ना मैं उम जगो कर रखता और  
आज उसका उपयोग करता। खर जो हुआ सो हुआ। मानवीयजी  
ने दाँकरजी के भंडे के नीचे विद्वद्विषय के नियम बन एकत्र  
करना आरम्भ कर लिया। यद्यपि उसका सम्पूर्ण भार उन्होंने  
विद्वन्नाथजी पर छोड़ रखा था तथापि अपने प्रयत्न में उन्होंने कोई  
घोर कसर उठा नहीं रखी थी।

मानवीयजी में भिन्ना भांगने में सफलता प्राप्त करने के लिये दो  
बहुत बड़े गुण थे। एक तो उनका बेसहूपा दूसरी उनकी मधुर  
बाणी। इन दोनों का बार विरस ही सम्हाला सकते थे।

संस्कृत साहित्य इनका समयम भो करता है—

बसने कि स्थाविति मेव बाध्य

बात्र समायाभुपकारतु ।

पीताम्बरं बीज्य बरी तनुजा

दियम्बरं बीज्य वि तनुजा ॥

बाग स क्या होता है पंजा कभी न कहना चाहिये। जनसमुद्र  
में बहन से बड़ा लाभ होता है। समुद्र-तल से जब बहुत स पार्य  
निश्चये तो उन्हें सेने के लिये दसठा मोग दौड़ पड़े। बिजगु भगवान्  
तो सब सत्र-पत्र कर पीताम्बर पहिने हुए गये। समुद्र ने बड़े आनर  
स उन्हें लामी दी। दाँकरजा को मंग पड़ंग देकर केवल पिर  
देकर टरका दिया।

मधुर-बाणी तो मानवीयजी का हिस्सा था। उनकी पद-  
सम्पत्ति थी। इमन ब मर्मी लोगों को मोत स मन थे।

बाला कारो चल हर, कोपन बाको देव ।

भीडे बचन मुनादके बाग बनो कर सैर ॥

संस्तुतघात भी यही कहता है—

बाह मायुर्याम्यवस्ति प्रियस्य

बाहपाठ्यारवोपकरोवि मष्टः ।

किन्तुह्यं कोविसेवोत्तोन ।

को वा सौत्रे गर्वजस्यापराप ॥

( बाह मायुरी म बह कर संसार में और कोई बीज प्रिय नहीं होती । और कठोर वाणी से निया हुआ उपकार भी विफल हो जाता है । आप ही बतलायें कि कोयल ने किन्हीं को कौन बीज दे दी और गद्दे ने संसार का बीज सा अपराध किया ? )

एक बार मामबीयजी स्वर्गीय रायबहादुर साँवसदास बनकड़ के पास जम्हा माँगने के लिए गये । साँवसदासजी प्रयाग के एक सङ्घप्रतिष्ठ रहने थे । उन दिनों घरेजी राज के उन्मुख अजमाना था । साँवसदासजी में घरेजों के प्रति खैरख्वाही की मात्रा अत्यधिक थी । फिर भी वे अरित्रवान अपने सिद्धांत के पक्के और भले लोग थे । शहर ही में मामबीयजी के पत्रिक मकान के निकट उनका मकान था । बचपन में मामबीयजी उनसे पढ़ने आया करते थे और उन्हें उस्ता कहते थे । मामबीयजी ने अपने उस्ताद को भी नहीं बताया और यद्यपि साँवसदासजी फूँक-फूँक कर पाँव रखने-वाम व्यक्ति थे तथापि उनसे जम्हा माँगने गये । साँवसदासजी एक स्थान पर लिखते हैं—

“एक दिन जब मैं दरवाज़े के काम से आ रहा था वे (मामबीयजी) मेरे पास (जम्हा के लिए) आये, मैं उनकी मनमोहनी वाणी से इतना बेवम हो गया कि मैंने बिना तनिक भी मोच-समझे उन्हें तुरन्त धेरे दे दिया । बाँ में मैं अकसर सोचता था कि मुझे उम्र पर विचार करने के लिए कुछ समय सना चाहिए था और इतनी जल्दबारी नहीं बानी चाहिए थी । परन्तु पण्डितजी के माँगने में कुछ देरी जानूँ की शक्ति थी जो रोकी नहीं जा सकता थी ।” साँव-

सदासजी सिद्धते हैं—'किसानावे-आजाद' का यह घेर उन पर पूरी तरह लागू होता है —

घरर नुमाने का प्यारे । तेर बयान मैं हूँ ।

जिसीजी चीन में जाऊ तेरी बबान में हूँ ॥

सावभदासजी ने उन्हें 'हिन्दुस्तान के सबसे सुकल भिक्षु' की उपाधि दी थी ।

ऐसी चिन्ता ही उपाधियाँ जितने ही आदिमियों ने मा'वीपजी को दी हैं । व जहाँ भी माँगन गये वहाँ प्रायः शिरा क साथ उन्हें यह उपाधि माँगिता क रूप में मिली ।

मुह-गुरु में मानवीयजी इगिहयन प्रेस क सूत्रार्थ प्रोफ़ेसर स्वर्गीय पिन्नामणि घोष क पास भोपी मकर पहुँचे । घोष महोदय उदार-प्रकृतिक था वे ही उन्होंने विश्वविद्यालय सम्बन्धी, प्राप्यकृत बुनटिन इत्यादि छापने का भार निर्युक्त करने ऊपर ल लिया कुछ घन भी लिया और साथ में 'बैंगर-अजरल की उपाधि भी ।

सन्त जाम्ब बापज के बैमिस्ट्री क प्राप्यारक थी क० श्री० पाण्ड्या न मानवीयजी को 'prince of beggars' 'भिक्षुपञ्च की पदवी दी है । उनके सन् ३० के एक सत्र का यही शीर्षक है । उसमें क लिखन है—

...But not many realise that within only the last two decades we have given to the world two master-mendicants who have easily dwarfed all others even as our Himalaya has dwarfed all other mountains.

Undoubtedly one of the two is the Mahatma. There is only one other of whom we can think by his side. And that is our Pandit Malaviya. Like every true master of the

craft he has his own style his technique He almost disdains small fishing He would not worry small men but would take care to get in his net Rajas and Maharajas merchant princes and Marwaris millionaires

His manner and modus operandi are necessarily unlike those of the half-clad Fakir The U P mendicant must naturally be more courtly more polished even magnificent in his appeals His scale is admirably sustained by his spotless white clothing by a noble figure and a soft captivating voice

(परन्तु बटुर्वा ने हमें एमान नहीं दिया है कि पिछले २० वर्षों के भीतर हम लोगों ने गंगार की दो सर्वोत्कृष्ट मिरुन दिये हैं जिनमें गामन और गर बहुत छोटे जखत हैं जिस प्रकार हिमाचल के घामने गण पहाड़ होने में समत है। निम्नन्दू उनमें में एक महात्माजी हैं हमारे ध्यान में कथल एर ही व्यक्ति और है जो उनके बगल में रगत जा गच्छा है। और ये हैं पण्डित मानसायरी। प्रथम जना के आचार्य की भौति उनका अरता एक बंग था अरनी एक निरामी पदुक्ति। वे छोटे आश्चर्यों का पग्गान नहीं करत थे पर इगुरा में हमें ग्यान रगत थे नि रात्रे मगगत्रे व्यापारिक जगत-गर् और करोड़पति उनके आश में)।

जानिए मा यात कि उनका बंग और कायप्रणामी अर्पणन करार में भिन्न हार्गी। उत्तर प्रग के मिरुन के लिये यह ग्यामा रिह था कि बटु मिरुन मीगन में अधिक शिष्ट और अद्विज पणि मारिजा ही मी अर्पिह गानशर भी हा। उनका यह ईय उनके

निष्ठान्त निर्मल श्वेत वस्त्र मध्य शरीर और मीठी मनोहारिणी बाणी से बड़ी खूबी से सन्तुलित था ।)

एक दिन की बात है । मासवीयजी नियमानुसार अपने कमर में लेन मासिरा करा रहे थे । वे कुछ चिन्तित स दग्ध पड़त थे । पान में बैठे हुए एक मित्र ने चिन्ता का कारण पूछा । मालवीयजी ने कहा मुझे एक लाख रुपया आज ही चाहिए । इंजीनियरिंग कामजक प्रिम्सिपल किंग माहब की मांग है । परन्तु रुपया नहीं है । सोचता हूँ कहां से जुटाऊँ । इतने में तत्कालीन प्रो-वाइस चानसर प्राचार्य ध्रुवजी आये और मासवीयजी के हाथ में एक तार रख लिया । वह तार महाराज पट्टिमात्रा का था । उसमें लिखा था कि महाराज पाँच लाख रुपया इंजीनियरिंग कामजक लिए दान देते हैं । तार पढ़ कर मासवीयजी का कण्ठ भर घाया और आँसुओं में घाँसू आ गये । बोले 'मेरे लिए मयबानु को यह कष्ट करना पड़ा' और वह तार किंग माहब के पान में डाल दिया ।

एक बार राजा बननेवाले बिड़ला ने कहा कि वे गद्दारी में बैठ कर कुछ काम किया चाहते हैं पर शर्त यह है कि गद्दारी में बैठ कर कोई श्राद्धाय उसे स । मासवीयजी को 'मरी खबर लग गई । वे तुरन्त तैयार हो गये । मालवीयजी के मायियाँ ने 'मजन बड़ा बिरोध किया । कारी के परिदृष्टाँ से आपस में बैठकर मानवीयजी को मना-बुरा कहा । उन्हें विमुक्त करने के लिए उनका पास लागों का ताँता बंध गया । परन्तु मासवीयजी टग-मे मज म हुए । बिड़लाजी ने जब मूमा कि मासवीयजी गद्दारी में बैठ कर दान लेंगे तो अबाक रह गये । परन्तु मूँह से उनका बाल निकल पुरी थी । उन्होंने यज्ञमान के घनुरूप मन का आशार कर दिया । राजा और मिश्रक दोनों ही गद्दा में बैठे । दान देने के लिए मासवीयजी उनका सामने घाये । ऐसा मयठा था जैसे विष्णु मयबानु वामन का रूप धर कर राजा बलि के सामने खड़े हों । राजा बननेवाले ने



बुद्धा मकर मानवीयजी के हाथ में बेक रस बी। ठीक रकम तो याद नहीं परन्तु सास ने ऊपर अवश्य थी। मानवीयजी ने राजा गाहब को भारीबाद दिया और बिड़नाजी से मिल हुए घन पर बोड़ा मा अपना घन मिलाकर उसी समय गङ्गाजी के भीतर विद्वविद्यालय के नाम संकल्प कर दिया। उपस्थित व्यक्तियों के मुग्ध से सहसा साधु साधु निकल पड़ा।

राष्ट्रस्व वि श्री संघिनीशरस्य श्री पुत्र ने गीऊ ही कहा है—

भारत को घनिमान तुम्हारा तुम भारत के घनिमानो,  
 पुत्र पुरोहित के हम सब के रहे सर्वे तनापानो।  
 तुम्हें बुद्धव पात्रक करते हैं किन्तु कौन तुमना जानी ?  
 घनय घिना-तम तुम्हारा हे आदर-वस्तुमानो !  
 स्वर्ग वरन-भोहन की तुमने लप्यना है नया पई  
 कर्मानो वाली जनकन के शिठ में पूनी रवा गई।

पार्थी हिन्दू विद्वविद्यालय या वातावरण

बाब रविपेमा जग कर्म जनी को देखकर।

जरे-जरे में दिले-मरुप की लखीर है ॥

याद रगियगा जब कभी आज कराा हिन्दू विद्वविद्यालय के भीतर जाये तो कर्म गम्गनकर रगियगा क्योंकि उस जमीन के बाग-बाग में मानवीयजी ने अरपान बिगरे पड़े हैं। विद्वविद्यालय के घन्य प्रपेगार के ग्रामने मानवीयजी की बिगाम मुठि ऐसी लगती है, जैसे सांगान् महामनाजी कहें रू हां कि—

कर्मकर्म लपुरेणु मुनिबिषयः स्वानं विद्यानु प्रब  
 अन्तारं प्राणिबुध कर्मिभरना बाकेरमेकं वरम्।  
 लपुरेणु भवः तदीयमुपुरे इयेगना तदीयाना  
 औनिम इयोव तदीयकर्मन्तु परा तत्तानुप्रीविष्ः ॥

मेरा शरीर पद्वार को प्राप्त हो जाय और सब तरह गूर्वी मयिन

तबो वायुगकागमेव च भरने भरने अंगों में मिल जाय परन्तु विनाठा स न्तमम्भक होकर एक बर यह मांगू गा कि मेरे शरीर का जन्मवासा तब विन्वविद्यालय क कुम्भों के जप में मिल जाय मरा तब-तब बहो क दर्पणोंकी ज्योत्स्नामें मरा दृष्टी-तब वही क मार्गों के जमीन में मेरा आकाश-गन्ध विन्वविद्यालय क ऊपर आकाश म्द में और मेरा वायु तब बही बहने-बाम वायु में मिल जाय ।

इस प्रकार आत्म-अमराग करनेबाम एक महान् पुष्प की यह विन्वविद्यालय विभूति है । महामनाजी क समय का विन्वविद्यालय विविध विद्याओं एवं कलाओं का सन्द्र हान हुए एक बहन बडा धार्मिक क्षेत्र था । यह छात्रों को मोर-रस्याण के लिए आदर्श मनुष्य बनाने की एक मशीन थी । इस विराट् मशीन का बनाने वाला बही एक छोटे स मदान में मगवान् विरवनाय का प्रतिनिधि-स्वरूप होकर मशीन का मञ्जापन करना रहता था । मन् १६३५ में महामनाजी ने विन्वविद्यालय क ज्ञान में भागरा न्न दृष्ट् अथ्या परों और छात्रों स कहा था—

‘आप योग जानत हैं कि हिन्दू युनिवर्सिटी के इन्डियनियम कालज स जो पाकर हाउस है धीरे न्नु पश्चिम मगरी के एव तरफ बना गया है उसका सम्बन्ध सब विद्याम मवनों कालजों छात्रावासों और भवनों स है । न्नुस सब कमरों में प्रकाश जाता है । भिन्न-भिन्न प्रकार के दस्य मगे हैं पंग बनन हैं, कुम्भों स पानी गिबना है और मात्स्य विभाग में कनेर बापे हान रहने हैं । इस सबका करनेबामा बनी एक पाकर-हाउस है । उसी तरह न्नु विचित्र सृष्टि का वभव एक परमात्मा गिया रहा है । बर सब करना हुआ हुआ है न्नु ही मय देणता है । रिमापन की मबम ऊचो बांरी सैराग पर और समुद्र के गर्भीर तब में उनकी मँसा का नृप होता छाता है । उसी विन्वमर विन्वबाप की कृपा स हम लान इग भूमि में उसका दुःखान्त कर रहे हैं । इसकी

धृपा स विश्वविद्यालय का प्राधुर्भाव हुआ है। वही अपना स्वरूप बना रहा है। सन् १९०४ में इसने बनाने का विचार हुआ। देश भर में प्रपीक की गयी। जनता और राजा महाराजाओं ने सहमता दी। सन् १९१५ में पन्द्रह साल एकत्र हुए। सन्दूभ हिन्दू कॉलेज कामादा (काशी) में बना। अठारह वर्ष की अवधि में विश्वविद्यालय नगरी की रचना हो गयी और होती जाती है। डेढ़ करोड़ रुपये मिन चुक। उन्नी परमात्मा से प्रार्थना है कि इसकी पूरा रचना कर दे। विश्वनाथ प्रार्थना सुनेंगे और मनोरथ पूर्ण होगा। इसी माण्ड में आगे कमर मासवीपजी ने छात्रों का बताया है कि छात्रों की दिनचर्या क्या हानी चाहिए।

विश्वविद्यालय में निवास करने का पहिला कर्तव्य यह है कि व्यायाम करके शरीर को दृढ़ बनायें। पहिले स्वास्थ्य सुधारें, फिर विद्या पढ़ें। स्वस्थ शरीर में स्वस्व मन करें तो जीवन का नाम उदा राखत है। नियम सुबेरे-नाम नियम से व्यायाम करें। शाम को रोम मैदान में विचरें। जल्दा भोजन करें और नियम से नियम अध्ययन करें। धार्मिक उरगों एकादशी क्या गीता-प्रबचन आदि में उपस्थित रहें और विचारों का आदेश से उनका अनुभव प्रदण करें और आशीर्वाद से। अपनी रक्षा आप करें। समय की पाबन्दी रखें। अध्ययन समय न नष्ट करें।

धरती पर महारत्न का वगाठ के अन्तर्गत पर मासवीपजी ने छात्रों का उपदेश दिया था उगक कृष्ण भंरा उद्घृत करता है—

प्रभुता मनुष्य को प्रेषा को काम में करना चाहिए जो यह माना म म कर गये। जगा नियम देने दिया था। दृग नियम से मे कर्ष पात्रों ग यथा मुक्त शक्ति मिर्मा और मंग जायत उन्गार और नियम ज्योति ग उन्गयत हावा गया। ... यदि पाप दिया है ता प्रार्थना कर म। आगे फिर पाप म करे। सबरे और काम मन्त्र्या कर ईश्वर ग प्राथना कर म। जंग स्तान स शरीर शुद्ध

होता है वैसे ही मजन से हृदय । मजन पहिल धर्म भाग और पर  
 मात्मा का स्मरण हृदय का माता-पिता और गुरु की सेवा  
 तीसरा काम प्राणिमात्र का साम, चौथा अन्नदा और सब जगत्  
 की सेवा का भार स ।

अथैव बहुबेदा ध्यायामेवाव विद्या ।

द्वैतानुभवाभ्यापन सम्मानाह महा प्रब ॥

सत्य बोध बहुधर्म प्रथ पावन करे व्यापाम कर विद्या पढ़े,  
 द्वा-भवा करे और लोक म सम्मान प्राप्त कर । यह धर्मिम उपदेश  
 हर एक छात्र को हमारा स्मरण करना चाहिए और यह मत  
 सार आर्जीवन आधारण करना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म है ।

उपरोक्त उद्धरणों में आपकी पता चलना कि मानवीयजी के  
 समय में विश्वविद्यालय का क्या बानाबगु या और किस प्रकार वे  
 चाहते थे कि वहाँ के विद्यार्थी पुन और कर्म ।

द्विज प्रकार 'मागर मागराण' मागर की उरमा मागर  
 ही म नी जा सकती है, उनी प्रकार कागी त्रिन्दू-विश्वविद्यालय की  
 उरमा कागी त्रिन्दू-विश्वविद्यालय म ही दी जा सकती है । पर  
 'विश्वीर्णो योदतगर्भ' अठमध्यायमात्रा नवमी अध्यायेय है ।  
 द्विज तन्त्र निगात्र अद्याय विदने ही बड़े-बड़े विद्यालय कायत्र  
 हजार-हजार विद्यार्थियों म परे दोमस्त्रिय अनेक छात्रावास  
 और हर एक कान्ठ और छात्रावास के सामने गेज-बु  
 के विना विश्वीय मैदान जिन पर प्रायः अन्तर्जातीय विमर्श पुत्राय  
 और हावा की मर्से हुआ करती है प्राध्यापकों के मीकड़ों आवास  
 दिग्माई पढ़ने हैं और उन सबों की ग्यातन्त्र-क्या विदुड भार्गीय  
 है । और मानवीयजी के समय में वे सब सबक गन्ध रंग सु पुन  
 थे । उन्हें कथम देखते ही म हृदय में एक घामिर भावना उत्पन्न  
 होती थी । मानवीयजी के दहाबनाल के बाद बुद्ध रंग भी छात्रावास  
 और प्राध्यापकों के निवास अने हैं जिनका ग्यातन्त्र पुगने मर्णों म

मेव नहीं खाता और वे हलके-पीले रंग के पुते हैं। वे आँसों में सटकरा है। जिस विद्यालय में यादस मीन सबके और इतनी अधिब संख्या में विद्यालय भवन हों उसे विद्यालय कहें या नगरी। माल बीयत्री ने अपन मापण में गीक हो कशा या घट्टारह वर्ष की अधि में विश्वविद्यालय नगरी की रचना हो गयी और होती जाती है। यद्यपि यह विद्यालय चार मील की परिधि में है फिर भी आये दिन भवनों के निर्माण की आवश्यकता पड़न पर वह स्थान संकृषित सगता है। मन् ५१ में जब मैं वहाँ एकत्रुबटिब आफिसर था तो और भूमि सने की बात पस रही थी। उसी समय शाकुन्तल की यह बात याद आयी जिसमें शाकुन्तला अनुसूया से शिकायत करती है कि प्रियवदा ने उगकी सोली कम कर योधी है—शाकुन्तला कहती है हला अनुसूये ! प्रति पितृमेन कल्पानेन प्रियवत्या दृष्टं पीडितामि तत् शिषिसय तावदेताम्

(उगकी अनुसूया ! प्रियवदा ने इस बस्त्रान को बहुत उमादा बन दिया है। उससे मुझे पीड़ा पहुँच रही है। सो तुम इसे ठीका कर दो) उस पर प्रियवदा भनगाकर कहती है—

‘यत्र तावत् कयोपरविस्तार्येनुवत् आत्मनो बीबनारम्भं उपात्तभवत्, तं विबुधात्मने ।

(तुम अपने बदन हुए योवन की गिरायत करो जो तुम्हारे स्ननों का उगवर विस्तार करता जा रहा है। मेरी शिषिसय क्यों करती है)।

और विश्वविद्यालय के लिए यह योवन या अग्नि-वस्त्र एक महा मानव त्रिगती पबित्र कल्पना और मगवान् विद्वनाथ की कृपा से यह विमग्म कम प्रकार प्रमरा उगा गदा होता जा रहा था प्रंग—

प्रग इवापाररतिरुत्तमामे सम्प्रीडाशुद्रिषाण ।  
 बुनादिषाण पुनरो विष्णुः पुतान्निरोपुभुरदिन् ध्वविष ॥

माप-शिषुतात्मप ३-१५

[ द्वारिकापुरी स ( यहाँ मातृकीयत्री के मस्तिष्क स ) मगवान्  
 दृष्ट की समा ( यहाँ इतने विराम भवन ) इस प्रकार निकली  
 उस अरविनाम बिष्णु क अङ्ग स सम्पूर्ण सृष्टि भावाम् शंकर  
 के अटाकट स मंवाबिनी का अवाह प्रवाह और अहा क मुग स  
 सम्पूर्ण धृतियाँ ]

इन समान भवना क निर्माण करने का प्पान भी बड़ा विचित्र  
 है । यह त्रिकोण मयूर पंख के मन्दा है । एक कोने पर अत्रल एम्प्टी-  
 यियेन्टर जिनके विशाल प्रोण्ड स बापिन बानबोवगन एम० सी०  
 सी० का परेड तथा बड़ी बड़ी समाण हुआ करती हैं । इस अन्त स  
 कामज फिर आवावास और सन्तन्त्र प्राप्पापकों के रहने के  
 बगम अषषन्डावार छोली में बने हुए हैं । और इस पात्रसिपुत्र के  
 समान विशाल नगरी में मुख्य प्रवेश-द्वार स चौड़ी ही दूर पर  
 मातृकीयत्री का एक छोटा सा निवास-स्थान प्रहरी के समान गड़ा  
 है । सादगी का एक समूना है । न उममें कोई घानगर फर्तीबर है  
 और न सैनिटरी किठिय । एक कमरे में मातृकीयत्री क सोने क  
 लिए आरपायी और अत्रल काम करने क लिए तम्ब बिछा रखा  
 था । भीतर प्रोण्ड में तुलसी की भाङ्ग और कोने में ग्नीर्दपर और  
 निकट में इधन गहन क मापन । इस उस भवन की दरवार  
 आरक्ष्य क मदत की याद बगबन आ जाती है जिसका चित्र बिरा  
 गदत्त में मूद्रासंगस में खींचा है—

उपनगरनयेनर	केर०	शोमपानी
बहुभिरुपट्टतानी	बर्षिणा	सोपयेनम् ।
घररुचनि सविद्वि	गुप्पवासात्रिरामि	
बिनमिनरुत्तानं	हम्पते	बोत्तुत्तम् ॥

( एक स्थान पर उपरी पायने क लिए दरवार की एक चित्र  
 रखी है । एक दूसरे स्थान पर छानों क मातृ बर्षियान का अङ्कार  
 लगा हुआ है । जीव-शील भवान जिसकी छत्र पर दज के

कृत्री हुई तबड़ी गुप्तने व लिए मान दी गयी है और जिसने वीर  
 क. कश्यप उस कृत्री की मुँह पर मुक गयी है )

यह निवागस्यान या मौर्य-सम्राट् के प्रधान मंत्री वा जिसमें  
 बड़े-बड़े राज्यों के तन्त्रा उत्तर देने और एक दूसरे राज्य के स्थान  
 एवं निर्माण करने की शक्ति थी। उनको अगामी बुद्धि पर गव था।  
 एक अवसर पर चाणक्य कहते हैं—

के घाता विमर्षि प्रपाप हृदये वृत्र क्वा एव ते  
 के विच्छिन्नि भवन्त्यु तेऽपि ममने कार्बं प्रकामोक्षणा ।  
 एषा हेतुत्ववर्धनापनबोधी सेनाऽस्त्रैःशोषिका  
 मयोम्पुननदृष्टबीर्बमहिना बुद्धिस्तु मायागम ॥

( चाणक्य म जब यह बला गया कि ममा के कुछ अहम पर  
 त्याग कर पन गय तो वे बोन जो लोग कुछ मन में ठानकर  
 पन गय उन्हें मर जाने दो। जो रचना चाहत हैं वे प्रमत्तता से  
 टकरें और वे भी यदि हमें छोड़कर जाना चाहत हैं तो मय ही  
 बन जाय। मवन मेरी बुद्धि मझे छोड़कर न जाय। यह बुद्धि जो  
 चाणक्यात्मन से अन्त ममा म भी अधिक शक्ति रखती है और जिसमें  
 शक्ति एवं मर्त्या की गरीबा सम्बंधन व उगाह पेंचने में ही गयी  
 है। )

एकी प्रकार वा शक्ति सन्देशन मायर्षीयर्षी उस छोटे से  
 मरात म रहत थे। एकी बिम्बबिद्यालय वा पादर हाउस था।  
 विद्याविद्यालय की विष्णीय भूमि पर जहाँ पहिल मृग स्थान व  
 शौर शक्तिर स्रोत अगिरे शिवात्म विद्यारिमा क अमंगम  
 मृगा पेंचने म जागत व एकी मगवान् विद्वनाय की कृपा से  
 प्राप्त राम बन्धनि एवं पहिल अंतरनाय गायु तथा उनके  
 शक्ति की मपुर शक्तिर म जब प्राप्त वाय शोभा की अगि  
 गुप्तने मगी। शिवा की विद्याविद्यालय है जो बड़े-बड़े मरात म

स्पष्ट है परन्तु यह नगर के त्रिमसुम बाहर ।  
 देहर वह है, पाठ के बरों को दर दे उन निवार ।  
 इन्हीं इन्हीं बोटियों पर पुर बरसाने ने क्या ॥

गण्डत मीताराम अमुवैदीजी विवक्त है—

‘मानवीयजी का घगसा एक मराय है । हर तरह के लोग  
 वहाँ आरको लेखने में मिलगे । उनका दरबार सबक लिए खुला  
 रहता है । इससे होता यह कि हर-एक परा-मग नभू खग वहाँ  
 पहुँच जाता है और उनका समय व्यय नष्ट करता है । वे मन्त्रोप  
 में आकर किसी न ज्ञान को नहीं बढ़ते थे ।

गांधीजी का क्रम इससे विपक्षित मित्र था । वे पत्रिम ही न  
 कह देते थे कि अमुक व्यक्ति को वह विद्वाना समय दगे और यही  
 मानने रखकर बात करते थे । जब निर्धारित समय समाप्त हो जाता  
 था तो वे आगन्तुक से यह तो नहीं बतत थे कि अवधि समाप्त हो  
 गयी अब तुम जाव । ब तक घंगौ । न मद् इकर मीन हो ज्ञान  
 थे । दो एक मित्र धार वेचारा आगन्तुक स्वयं ही ग जाता था ।

अच्छी शायत न तो सर कृष्ट नहा पर मानवीयजी जब  
 बीमार पड़त हैं तो उनकी दशा देखकर दया आती है । न मात्रम  
 झों-झों से भोग अपना पबड़ा लेकर जान ह और मानवीयजी  
 बेमर पर पड़े-पड़े उनकी गाथा सुनत जान है । विद्वान मान जब  
 बीमार पड़े ठा इत्यग न बतत दर सब उपरा दिया और  
 पाठ ही कि आरको किसी न मित्रता न शक्ति लोगों का जाना  
 ना बत कर देना शक्ति कम बोधना शक्ति इत्यादि । सब  
 प्र मुन कर मानवीयजी जान—कह पुर न ? देया एक शायर ने  
 है—

नापेहा । बन दे तपीत जो मेग पबराय है ।

दे उके सबक है दुमन जो मुभ तपमाय है ।

नकसर बरों की पुगनी भाव्य मना सुमग अब गोदने को



बहुत ही। कम दस एक शेर में सारे जीवन की कहानी भरी है। एक बार उनका छोटे पुत्र गोविन्दजी ने भी उसका कहा था कि बापको लोग बहुत परशाम करते हैं। मैं सब लोगों को रोक देता हूँ। इस पर मामवीयजी बोले जब तक मैं हूँ तब तक यह नहीं हो सकता। "म मुझे बरबार के कारण म जाने कितने दुःखिया पुसिसवाने भी उनके बंगसे के चारों घोर मकराया करते हैं पर बाँव की गज पर बाँव मारेगी तो अपना ही मुह ठोड़ेगी। कतुबेदीजी का यह विवरण मालवीयजी के निवामस्थान एवं उनके दृश्य का एक सजीव चित्रण है।

गांधीजी ने एक स्थान पर लिखा है—

पण्डित मालवीयजी ने मुझे अपने ही कमरे में शरण दी। उनके जीवन की मादगी की एक भाँकी मुझे हिन्दू विश्वविद्यालय के शिष्यावास के अवसर पर मिली। परन्तु इस अवसर पर उनके साथ एक ही कमरे में होने के कारण मैंने अत्यन्त निवृत्त स उमड़ी नियम की जीवनधर्या देगा थी और देकर मैं मजबुत हो गया। उनका स्वान गर्मी दग्धों के लिए एक घमगासा भी मालि था। वह इतना टगात्म भरा था कि एक कोने स दूमरे कोने तक जाना जाये लिए बहुत बर्जिन था। उगमें सब समय के लिए निर्मा भी अस्यागत के लिए जी जाने को आनी इच्छानुसार उनका समय सने का अधिपारी ममभत्रा था आने की को मनाही न थी। इस पर्यशापा के एक कोने म बड़े गम्मान म मेरी गन्धिया बिछी थी। "म माँति मुझे मालवीयजी स लिए वार्तालाप करने का सुयोग मिला। यह मुझे मित्र दस और मित्र बिपारों क होने हुए भी बड़े एक दिन एक मित्र, मामवीयजी स मित्रने आये। बटों को हर समय लोग मालवीयजी को परे रात स। आगमुक्त विद्वान् देर कर म कोणमग बाहर ही सडे रह गन। जब न रहा गया

तो उन्होंने एक पुर्जे पर यह लिखकर कि समुद्रे शान्तकस्मोन  
 स्नातुमिच्छति सूत्रधी ( यह मूर्ख विद्युत् समुद्र में स्नान करने की  
 इच्छा करता है ) मानवीयजी तुरन्त समझ गये और बाहर आकर  
 हँसत हुए बोले दामा श्रीजियेगा आपको विमम्ब हो गया। यह  
 तो हुई मालवीयजी के लोक-व्यवहार और घर के वातावरण की  
 बात। वे जिज्ञासु थे। व सब की बात ध्यान में मुनत थे। शायद  
 कोई अच्छी बात सुनने को मिले। इस बात में वे इस नीति का  
 अनुसरण करते थे—

न कश्चिद्वचनमयेन सब स्य शृणुपागतम् ।  
 वातस्याप्यवचनडाक्यमुत्पुत्रो न पण्डितः ॥

( किसी की सलाह की अवहेलना न कर। सबक मत को  
 ध्यान में सुने। शायद भी यदि मारगमिथ बात बड़े तो उनका  
 आदर करे )

व जानते थे कि—

गुणः पूजास्मान् गुणेषु न क नियं न च वयः ।

( गुणीजना में गुण ही पूज्य होता है। बह व्यक्ति ही है  
 अपवा पुरय उन्न में छोटा है या बड़ा यह सब सही देखा जाता। )  
 अब मालवीयजी का व्यवहार छात्रों के साथ जना होता था  
 उस थोड़े में कहूँगा। यों ता इमक अनेक उदाहरण दिये जा मरत  
 है पर दा र्शन ही पर्याप्त होंगे।

मानवीयजी का प्रतिनिधि यह नियम था कि वे नियम स  
 निवृत्त होकर कभी आचार्य प्रवृत्ती के साथ और कभी अकन ही  
 किसी छात्रावास या कानन में जाकर निरीक्षण करते थे। छात्रा  
 वास में लड़कों का दुःख-सुख पूछते थे। पूछते थे क्यापाम करत हा  
 या नहीं दूध पीत हो या नहीं सन्ध्या-स्नान करते हो या नहीं  
 इत्यादि। एक दिन एक छात्रावास में जा रहे थे कि रात में एक

सदका खाता हुआ दिखलाई पड़ा। मालवीयजी ने उस रौककर पूछा कि दूध पीते हो कि नहीं? उसने उत्तर दिया कि वह बहुत गरीब है, दूध पीने के लिए पस कहीं से पावे। मालवीयजी जब यह सोचता उन्हाने उम लड़क के लिए दूध का प्रबंध करा लिया गया घण्टा आय दिन हुआ बरनी थी।

एक बार रात्रि में छिपी साक्षात्कार में गये। एर संस्कृत का विद्यार्थी दमनून्हा पर दूध गरम कर रखा था। मालवीयजी उम पर नाराज हुआ और कहा कि हमसे सम्बन्धी फलसी है और बचकर भीतर दमनून्हा जवाना नियम के विच्छ है। यह कहकर उन्हाते उमके ऊपर ५ ) गया जुमाना किया। परन्तु पर जाकर पास घामर्री ने उमके पाग ७) ६० भेज दिया कि वह उम जुमाने के क्रमा कर के घोर फिर मविष्य में गया आगप में कर।

पण्डित अम्बिकाप्रसाद विगत ह

जयन्तुमात्र नाम का एक मरा छात्र आशाम अन्तिम वर्ष में पढ़ता था। छात्र बुद्धिमान तथा मून्दर और बलिष्ठ था। उमके पिता का स्वर्गवास हो गया। अल्पवय के लिए पर गया। आने के विमम्ब हुआ दृग्गिण उपस्थिति पूरी न हो सकी। फलतः परीक्षा में प्रविष्ट होने की सम्भावना नहीं थी। मैने क्या कि एक प्राधता पर विषय कर मालवीयजी के पास जाओ और वहां जाकर

या क्या डीपरीप्रमो के स्वर्ग मज्जाताल।

मायाय बदमायाय ! सा स्वर्ग कर मया छि ते ॥

[ छोटनी की म्मा करने में जा तुम्ह जन्नी था जो जल्द तुम्हें पकड़ मोन में थी ते बरगुनाय ! कः तुम्हारी जन्नी ( हमारे विषय में ) बनी बनी गयी । ]

यह श्लोक रात्र पढ़ना। उमके पास ही किया। मून्हा मापरीपरी के देनों में भी श्रीमू आ गये और विगत किया 'ही मु की एहमिन्द। उनी गुमव में मया १० बानीप्रमात्री दोने

मिसने गय। हम दाना को देखकर महाराज ने पंतजी स कहा कि यह प्रार्थना-पत्र रजिस्ट्रार क यही मत भेजो। इस व्यवस्था में बाधा होती है। अध्यक्ष बग हुए मानेगा। मेरे मन म हुआ कि हम लोगों क जान म यह बना-बनाया काम बिगड़ रहा है। मैंने मालवीयजी महाराज स कहा कि महाराज! बिधाता क सत्य कटता नहीं है। मालवीयजी ने कहा कि बिधाता क सत्य तो नहीं कटता है। मैंने कहा तब कस आपका सत्य कटेगा / उन्होंने कहा मैं क्या बिधाता हूँ। मैंने कहा बिम्बविद्यालय क तो आप बिधाता ही है। इस पर ५० कासीप्रसादजी ने कहा—आपको यही बिधाता पुरख कहल ही है। इस पर मालवीयजी हमने भग और भोत कि पदितों का कहना मामना चाहिए भेज दो। उस वर्ष बह छात्र परीक्षा में प्रविष्ट हो गया और प्रथम श्रेणी में उनीष मी हो गया। बात तो यह है कि जमकूमर के पिता उस मचहन में छोड़कर स्वयं चले गये परन्तु मालवीयजी "स पिता पित्रस्तानां कर्त्तव्यं जन्म हेतुव" वाक्य में तो मालवीयजी इसक पिता प। उसक असली पिता न तो कर्त्तव्य जन्म दिया जा।

### अध्यापकों और मन्त्रारियों के प्रति व्यवहार

किसी मी मित्राण संस्था का मुखार रूप म संचालन करना कोई हसी-गल नहीं है। इसन मित्र एस प्रयान की आवश्यकता होती है जिसमें धर्म क प्रति लिप्ता प्राध्यापकों क प्रति भाए, छात्रा के प्रति प्यार और कमचागियों क प्रति सहायकृति और उनक पेट का र्यान हा। एसा प्रयान किस काम क—

जिमे एत में पार-बरा न रही,

जिमे तंत में छोड़-बरा न रहा।

अम्बिम मुगल मझाद बहादुरगार 'शक' विम्बविद्यालयों में इन गेग के विभिन्न शान्तों म अध्यापन के

हेतु प्राप्त्यापर्यन्त आते हैं विभिन्न प्रान्तों से धान और छात्राएँ पाती हैं। य सब विभिन्न बालावरणों में पस हुए रहते हैं। उनके अलग अलग स्वभाव और मापताएँ होती हैं। वे मिट्टी के इच्छा का विरोध नहीं है कि उनके प्रति दमन-भीति का व्यवहार किया जाय। वे इति नगै हैं। वे विन्वविगलयों में बिगादान देने और मने क लिए आते हैं। विद्यापत्रण ने मृदायुद्धाग क मरुतबाक्य में घसमा लिया है कि प्रधान अथवा नामक कमा होना चाहिए—

“धीरमत्त पश्यन्तु वृष्ठी प्रामित्तित्विगे धननिष्ठासु युवाः।

( वृष्ठीगतिं ता वृष्ठी की ( संस्था की ) रक्षा करे और शासक धननिष्ठ हों और बिनाधियाँ का शमन करे दमन नहीं )।

शासन परमरा उरुता है जब शासक क्षाम

“निष्ठावष्टाल्पमव निभरा न प्रलभति ईवताम्या क  
धनपत्तिं धाम्यान् ‘धाम्यस्तारिजव’ इत्यनुपत्ति  
लक्षितोपदेशाय वृष्पति स्तिपादिने

यागुमन्त्र-आदर्शरी धुरतामोपदेश

(मूठे मूठे बड़पन पालन प्रस्थीक के मद में मूर देवताओं को मगमरुतक नहीं होत आदरणीय जनों का आश्रय नहीं करत अपनी बुद्धि की हेरी होती है यह गमभार जाने गुनागुण की भवद्वेषता करत है और हिन की बात करत यामों पर क्रोध करत है।)

यदि किन्ना रिश्याय संस्था का प्रधान जगा हुआ तो वह स्थिी काम का मनी। बिग संस्था का जगा प्रधान हो उगता मगबान् ही मासिक है। जब कर्मी किन्नी बिनालय में उबान-गुपल होती है तो बात की तदुत्तर जाने पर आन पावेंगे कि प्राय—मे मरदा मनी कृता—शासन पन की शासन-प्रणाली में दान का जाने से होती है। प्रायः दगागुबारी मे बड़ पन की बात करी -

इस लकड़-बालक क लीकै ये पड़े क्यों ?

इतना ही बस इतना जवाब—घाय लड़े क्यों ?

मैं काई गिझा शास्त्री नहीं हूँ परन्तु मेरी यह धारणा है कि जब तक गांधीजी स धर्मनिरपेक्ष भाव और पर्यवेक्षण न हागा यह ममता हम ही नहीं हा सकता । और फिर प्रधान को भी ता अपनी इज्जत का श्वास हाता ही चाहिए—

इन्सान को तर्कबल अपना भी है बरुओ ।

बहु मर बुरा कि जितको परवा न हो अपन की ॥

प्रकाश "नाइबाणी

मानवीयता का दृष्टिकोण एवं उनकी कार्य प्रणाली विषमभूत भिन्न थी । स सबसे माध समान भाव स व्यवहार करन ये अप्पा पक हो या छात्र दफ्तर का बाहू हो या पशुधर्म धेरी का मौकर इस प्रान्त का रहन बासा हो या अन्य किसी प्रान्त या बग का उसके राजनीतिक विचार एवं मान्यताएं चाहे कुछ भी हा उन सबको अपने व्यवहार स अपन साथ में साथ सना मानवीयता का ही हिस्सा था । और नायक यह उम्मीं स खुश भी हो गया । सभी मानवीयता को समान भाव स पूजन ये ।

प्राध्यापकों के प्रति मानवीयता का कसा व्यवहार था "सक कहन क पहिले दफ्तर क बर्माचारिया क प्रति उनका कैसा व्यवहार था उसका एक विषिन्न संस्मरण भाषक सामने उपस्थित करता है ।

उन दिनों मेरे ज्येष्ठ भ्राता स्वर्गीय पण्डित ब्रजनाथ व्यास विश्वविद्यालय क सा बानज क प्रिन्सिपल ये । मानवीयता उनकी योस्यता एक गुणों स आदृष्ट हाकर उन्हें प्रयाग स काणी स गया ये । उन्हीं दिनों मेरे एक भारतीय का पुत्र बहू क एकाउण्ट विभाग स प्राबिडेंट पद बनक था । बहु एक भव परिवार का लड़का था और स्वयं बड़ा मना था । उसका गृहस्थी बड़ी थी । कम केवल के

कारण उसका निर्भीक तरह पुरा नहीं पढ़ता था। स्वभाव से भला  
मापी था। वह मुदा व्यपिठ रहता था पर जबान से उफ नहीं  
करता था।

जब की इन्तहा तो होती है।

तब की इन्तहा नहीं होती ॥

बिस्मिल इसाहाबाती  
"सदा कबल एक ही अगवाव है। धुमा-धीड़ित गृहम्भी। जब  
बुमुदित बरषा के सामने से एक कुला रानी का टुकड़ा लेकर भाग  
गया तो महाराजसा प्रताप उस दृक्प्रतिज्ञ वीर का आसन जिन गया  
सौं उनक मग्न की इन्तहा हो गयी सो एक गरीब प्राविष्टेंट फंड  
कलई की क्या विमात ' उन दिन मालवीयजी पाटन जांस  
सर और ध बजी प्रो बाइम सामनर थे। यद् कल्प ध बजी क  
पाय गया। यहीं उमम पूर बन पड़ी। यदि वह मालवीयजी क  
पान बना गया हाता का भाग का पत्राक्रम ही बन गया होसा।  
के अरथ उग गरीब की निवारण का बुध न बुध समाधान करत।  
नंर होसब्यता को कोन टान मरता है। ध बजी से उग कलई मे  
दा टपी बाउ कही— मरी सनम्बाद बटूठ कम है। मरे बनाप  
गृहम्भी नहीं बनयी। बरष भूमे रह जात है। मरे येउन म २०)  
मार्गिक की बुद्धि की जाय। ध बजी न उग बुरी तरह से डाय  
और निराशा हासल वट सो भया। उन दिन उसने प्राविष्टेंट फंड  
के गये म २०) मार्गिक निदान पने का प्रण किया। न एक पना  
कम और न एक पना भिषत। यद् व्यापार बरमां बनता रहा और  
सिरी का पना न बन पाया। एक दिन गदमा आदिग आ धमक।  
कमर पसय उग। आना २०) का बर उग महीने के प्राविष्टेंट  
फंड का पना सममग १०००) गजाने से जमाकर भाग निपाना।  
इसेधक से उरी। दिनां मे बनारम गया था। यहाँ मुझे पना पना  
दि वर ले दिन म गापब है। पठा मगातर मे उगर एक पानिष्ट

मित्र के पास गया। उन्होंने मेरे सामने उसका भेजा हुआ एक पोस्टकार्ड रखा लिया जिसमें लिखा था—

प्रिय जब यह पत्र तुम्हें मिलना में संभार में न रहूँगा। मैंने यह नाम धुबड़ी की डाह से किया है। बच्चों को तुम पर छोड़े जाता है। उनका ख्याल रखना। उस पर मिर्जापुर न भेजे जाने की सूझ थी। पढ़कर मैं मग्न रह गया। धुबड़ी की डाह! रहस्य कुछ समझ में न आया। इतक एकाएक दफ्तर से गायब हो जाने से इसके हिसाब की जाँच शुरू और पता चला कि इतने मग्न मग्न ६००) गबन किया है। जब मिर्जापुर में कुछ पता न चला तो मैं प्रयाग वापस चला आया। पूछ-ताछ करके-करके यह पता चला कि उसका एक धर्मिष्ठ मित्र लखामपुर मेरा (उत्तर प्रदेश) में रहता है। वहाँ फ़ार्मी भेजा वहाँ हुस्वरत मिन। मेरा फ़ार्मी समझ-बुझकर उस मेरे पास निबा लाया। बहुत पूछन पर उसने सब उपयुक्त बातें बतलाई और कहा मिर्जापुर में मैंने १। की संख्या खरीदी और शाम के बख्त गंगा-सट पर जाकर मैंने उस खा लिया। मुझे तुरन्त उमंग हो गयी और मैं बेहोश होकर गिर पड़ा। जब होश हुआ तो मैं स्टेशन की ओर भागा और टिकट बटोरकर लखामपुर पहुँच गया। मैंने कहा 'दफ्तर की जाँच से पता चला है कि तुमने लगभग ६००) गायब किया है। क्या यह सही है? उसने कहा "बिलकुल सत्य। अमुक महीने से प्रमुक महीने तक २०) माहवार के हिसाब से जाइ मीत्रिण। और जोड़कर उसने बताया कि २० ) होता है। म कम न ज्यादा। उससे और बात करना फ़ायदा समझ। उसके परिवारवालों से जोड़-बटोरकर २० ) मुझे दिया और मैं उस सहर बारी में मानबीदनी से मिला। उस समय वहाँ बिस्वविद्यालय के अन्तर्गत बोधार्थक पण्डित कन्हैयालाल दश अक्षराराधक हार्डिबट क जज और धुबड़ी बटे थे। मैंने पूछ किन्ना गबन सामने कइ दिया और



२ ) एतत् मामर्षीयजी क गामने एतं न्यि । एतया को दण्डकर  
 मानर्षीयजी की आत्मा म प्रामू आ गय - तस्य कश्चिद्दार्ढ्यं स पेट  
 काकर उग गारिषक परिवार ने उत एतये एतन्न न्यि ह्ये उम  
 सदन क बाल-वक्त्रा क भविष्य म क्या होगा "त्यादि अनेक बार्ने  
 सम्भवत उन हृदय का मथ ग्ही थीं । सवाल उग उम कसक के  
 विरुद्ध क्या कारवां की जाय । कोशाध्यक्ष महोदय और ध्रुवजी  
 की राय थी कि मामला पुनिस म मुपु कर दिया जाय । सबकी  
 बात सुनकर मानर्षीयजी बाप "यु सदन ने बर्माना नहीं की  
 बाल-वक्त्रा की ग्हा क हनु पाप दिया बर्न भागने क न्ति वह  
 ? ) क्या जमा करता ? दूसर हम माग तो कबल ह ) उसके  
 गिम्मा निराय पाये हे । लटक न मा स्वयं २० ) एतमाया और  
 उमन गरीब परिवार न उग म भी न्या । वह लड़का बर्दमान नहीं  
 है । परिस्थितियों क कारण यह पागल और भरी हो गया । मैं  
 उसक गिम्मा कर् बानूनी कारवां न करूंगा । बहुत सम्भव  
 है कि पुनिस-मुपु करने म उगना जीवन बिगड जाय या ग्ही बीष  
 ही म कृण एमा कर बड त्रिगम उगक बाल-वक्त्र भूया मर  
 जाय और मरी और मुद्दार उगान क्हा म्यागजी । आर उग  
 सदन म वह कि व एग पाप का प्रायश्चित्त कर और आने  
 जीवन म भय म काम त । मभा उगरा कन्याएण हो गच्छा है ।  
 मैं एक बड़ा मागरक म बर्दमानी और पाप क मू म विषयन  
 और म्याय का सुनकर एग रू गया । एग प्रकार मानर्षीयजी  
 विचरिगतय क बमबागिया क प्रति व्यवहार करते हे ।  
 श्री क० भा० त्रिगुणापन बापक घाब रेवनागजी क तन  
 प्राप्तयात है । लक्ष्मी गरीम आर्मी मस्य भूति और मप क गर्जन  
 क गमान बाटा । जय मै बिचरिगतय म धा मुभम उनम यही  
 पत्नी थी । मुझ उदग-एग क आर्मी गमल है । मुष मुष  
 आर्मी - गुणत । त्रिगुणापन की जतिना गा गग य पर

'जल्दू पर ( border line ) अवश्य थे । उनमें मराठा मोल मना आसान न था । उनसे और मालवीयका म सम्बन्धित दो तीन मसमगण उन्हीं क शब्दां में प्रस्तुत कर गा । नेटिव की क्या सग है माहूब कहे लो मानू ।

'मालवीयजी क एक प्रिय अध्यापक क विरुद्ध बहुत मा शिकायतें की जा गी थी । एक टाइप किया हुआ गुमनाम पत्र जब आया तो मालवीयजी ने उसकी सहृदयीकरण करने का निदेषय किया और एक कमरी बना दी जिसक से स्वयं अध्यापक घने । मेरा सुभाष्य कि कई अन्य लोवा क माय सांजन मेरे ऊपर भी सगाया गया । मेरी पेसी हुई आर जब मालवीयजी ने कहा कि उपरोक्त पत्र मैंन लिखा है मेरे पास अपना गणपराइटर भी है और मैं ही लेंगी कड़ी भाषा का प्रयोग कर सकता हूँ ता मैंन उत्तर लिया कि आवश्यकता पड़ने पर कड़ी भाषा का प्रयोग मैं कर सकता हूँ मेर पास टाइप रास्टर भी है परन्तु यदि मुझे कुछ शिकायत करनी हानी ता मैं निर्भीक भाव से करना और पत्र पर हस्ताक्षर कर उसका जिम्मनारी भी ग्या सता । इसना बहुत-बहुत आंगों में आँसु भर आर और म बिलग्न ग्या । पंडितजी क माय काम करने का मोसाय्य प्राप्त हुआ था सत्र्व म्मह हा पाया था उन्नी धामिक गाल हूय सट न सका । मरी पगी फिर म दई ।

इस समय क उपगत मुझे परिश्रमों का मन्ग मिया कि म उनम मिस सु । बिम विप्र हा गया था । मैं न गया । फिर सुभग मिला । उसमें भाषण था । मैं इरत इरत गया । मुझे इयन का मालवीयका उठ गइ हूण और भर हूण हृदय म ल्होने मुझे माम म गम्बोपन किया । अरिे उनकी इबाइवा घाँ और आग पृष्ठ म कह सक । मेरे जम सुयय पुरण न भी जो परग कभी न लुण थे परइ मिय । यह था उनरी इमामामता । बारन बान्धव और सायावक क बोध पर स्पेह, क्या कभी भुलावा का मरना है

लगभग १९३६ की बात है। माइन्स कामज स अलग होकर  
 कामज भाप टकनापोजी बना। कैमिस्ट्री डिपार्टमेंट की साइबेरी  
 एक ही थी। इस कैमिस्ट्री डिपार्टमेंट उठाकर अल्पस से गया और  
 इंडस्ट्रियल डिपार्टमेंट क पाय पुस्तकें रह ही नहीं गयीं। कठिनाई  
 बहुत होने लगी तो शैतानी सूझी। एक दिन साइबेरी बाईं मकर  
 पहुँचा और साइबेरी क्लब स कुछ पुस्तकें माँगी। वह ब्यस्त था।  
 दूसरे कमरे में कुछ टाइप कर रहा था तो उसस अममारियाँ  
 गोप देने को कहा। बेपारे ने छोल दीं। कोई गटक तो था नहीं।  
 बस जल्दी-जल्दी जिनकी पुस्तकें इंडस्ट्रियल कैमिस्ट्री सम्बन्धी थीं  
 मैंने डिपार्टमेंट क काराखी टाय जिनका पहिल ही प्रबन्ध कर  
 रखा था मित्रवा दीं और वारायदा पाम बुक स दर्ज करके पास  
 बुक साइबेरी क्लब को पेश कर दी वट तो हकना-बकना रह गया।  
 एत ही सादमी ८०० २० पुस्तकें बस स जा गकता था ? निक  
 यठ हुई मानवीयता तक पहुँची। इयी बीच स सब बिठाके टीक  
 टीक मन्बर लगाकर एक अण्डे ग रक स क्रमानुसार रग दी गयी  
 थी और तापा-गुँजी आने पाम थी।

“एक जिन बुक स मानवीयता तथा प्रयोजी अपने निरपेक्ष  
 नियमानुसार पन्थ प्रमन निरपेक्ष ता इंडस्ट्रियल कैमिस्ट्री डिपार्टमेंट  
 में पहुँच गये और मुझे बुवाकर पूरा कि डिपार्टमेंट की साइबेरी  
 बना है। बेरे गन में गोग अन्तरे लगी परन्तु हिम्मस करके सब  
 कुछ जिगा दिया। गेकर बोन कि यट तो बहुत अचली मग रही  
 और प्रयोजी की ओर देखकर विपित् मुगकराय। मरी जान में जान  
 भापा। निरायत जा की गयी थी बापूर हो गयी।

“यह सब की बात है और सब जना बुनात्म करने की कोई बेरता  
 भी बरे तो कर मना बिलेगी कि एनी को पार था भावणी।

“मानवीयता का अनुभव था कि शीघ्र बर्दी सब बाठा का  
 निर्दिष्ट कार्य सिपा करन थे और छोटे बड़े गबर्बा भावदयकताओं

को पुरा किया करते थे। और यह भी उनकी महत्ता कि छोटी सी बात से ही गहराई पर पहुँच जाते थे। इस घटना में प्रश्न इतना ही नहीं था वह था एक सम्पादक के सम्मान का जिनकी प्रतिष्ठा से सबके ऊँची बनाय रखना चाहते थे। उस समय की तुलना में आज राना भाठा है।

मेरे एक पुराने मित्र हैं श्री-श्रीकृष्णदास। उन्होंने वास्तविक शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पायी है बड़ी लगन से आदमी है। एक लगन से आदमी के लिए माफ़ीयजी के समय से विश्व विद्यालय क्या कर सकता है यह आप समझ सकते हैं। उन्होंने जो आप-वीथी कहाँ है उस निष्पत्ता है। आप-वीथी अपने ही शब्दों में टीका से भरा होती है।

उन्हीं से ज्ञान मिल रहा है, ज्ञान उनकी है बात उनकी।

उन्हीं की महकम तबारता है, चिराम मेरा है रान उनकी।

फरक मेरा हाथ बल रहा है उन्हीं की आँहें निजल रही हैं।

उन्हीं का मजसू, उन्हीं का गज बलमे मेरा है बचात उनकी।

श्रीकृष्णदासजी निश्चय हैं— मे एम० ए० कम पास हुआ ?

आज तब मानने में अब उस घटना को लपटा है और पीक उठता है। अगर माफ़ीयजी महायज्ञ का विशेष अनुग्रह न होता यदि उन्हें मेरी सरयवाणिका पर छुट्टे बिन्दुस न होता तो मैं अराध्य अपमानित होकर अपने उस विश्वविद्यालय से निराना जाता जिसका जर्न-जरी भर लिए शिक्षालय था।

घटना कुछ विचित्र एवं अमाधारण सी है।

उन दिनों आदमी के संपर्क की सहायता के साथ वह रही थी। मैं उसमें आपा-अम्तर हुआ हुआ था। जिस कथा में जाने और पहने-निगने का पुगल भी? अपनी समझ में मैं अपने जीवन का हर क्षण उस संपर्क में झुमने में व्यतीत कर रहा था। नतीजा यह हुआ कि मेरा नाम बन गया हाजिरी गावज हो बड़ी। मैं

जितने तिनो पक्षा में जाकर बटा उमरा कोई मेसा प्रोत्साह रहा । परीक्षा में बैठने व निण मुझे अनुमति मिलना या नहीं यह संदिग्ध हो गया । तत्कालीन रजिस्ट्रार मरे सन्त विरोधी थे । मगर मेरे प्रोपेसर थी मुद्राबिहारीलाल ने मेरी सारी बजाया फीस जमा कर दी । वट मेरी राजनीतिक बागुमारियों से बहुत ज्यादा प्रभावित और घावस्त थे । समस्या हाजिरी बरि आयी । आचार्य गुन्मुख नितामसिंह ( जो बाद में राज्यपाल हुए ) पनपोर देरा मक्त और विषयार्थी-कस्मन महानुभाव थे । उन्होंने मेरी हाजिरी की समस्या विचारिश ग इन कर ली । रजिस्ट्रार महोदय सब भी मन्नुष्ट न थे । मामलापत्री महागज के मामने मेरा मामला पैग हुआ । उन्हें मेरी सारी राजनीतिक हकतों का पूरा पता था । बड़ा ठेक ठेकमक्त मरयुक्त का परीक्षा में बैठने का अवसरान न लेना गवषा अनुचित होगा मुझे परीक्षा में बटमे की अनुमति मिल गयी ।

अब एक बटिन समस्या और आयी ।

उन दिनों पाप विषय अनिषार्य और दो एरिष्टक होते थे । मैने परम मरा तो उसम गलती हो गयी । अनिषार्य विषय तो टीक-जीव निण दिये । एरिष्टक विषयों व चुनाव में अगाधधानी हो गयी । मैने तल्लि यगों म म दो विषय चुनने के बजाय एक ही यर्म में म दो विषय चुन लिय और परम मर लिया । सिन्धी म मेरी मद्र गलती था मून म पकड़ी । मरा परम य्यों का य्यों मंजूर हो गया और मै परीक्षा में बटन लगा । आगिरी दिन में पकड़ गया और मरी बारी पर मर्याद गुन्मुख नितामसिंह के सिमाक सिण लिया कि यह परीक्षार्थी मात्र मरसु विषय म परीक्षा ले र्ना है । उन का विषय चुनने का अचितार न था ।

'मामला रजिस्ट्रार व यो पट्टीपा । यः गुगी म पूर म समावे । नार यों के मर लागों का बदला निताम का र्हे

वेहूँ मथला बबलर मिल गया था । मेर मन को इमस चोट पहुँची । राजनीतिक कारणों से मुझे रजिस्ट्रार किया जाता तो मुझे यह होता । मगर यह तो सवथा अलतिक अपराध था । मैं अपने को सर्वथा निर्दोष समझता था । यदि फार्म भरने में मुझमें गमती हुई थी तो रजिस्ट्रार महोदय के कर्पणभय को उसकी पूरी जाँच करने के बाद ही उसे स्वीकार करना चाहिए था । जानबूझकर बेईमानी करने का आरोप मुझे असह्य था । प्रो-ब्राउन पासकर राजा उवालाप्रसाद से मैंने सारा चिन्मा बताया । उन्होंने मुझे मासवीयजी महाराज के सामने उपस्थित कर दिया । उस समय उनके कमरे में राजा उवालाप्रसाद के अतिरिक्त पण्डित बलदेवप्रसाद एवं पण्डित कन्हैयालाल पंडेय बाबू शिवप्रसाद गुप्त थी गंगाप्रसाद महता ( रजिस्ट्रार ) आदि मौजूद थे । मासवीयजी ने पूछा ही कहा मुझे तुमसे ऐसी आशा नहीं थी ।

“मेरे तन-बदन में आग लग गयी। मैंने दखनों का मासवीयजी कीर विचारविषय के अतिरिक्त स सबको जो और उन्हें पराजित किया था । मगर मेरी नीयत पर मुझमें और ईमानदारी पर कभी शक नहीं की गयी था । आज मासवीयजी महाराज स्वयं मेरी ईमानदारी पर संदिग्ध बन रहे थे । सगा सीता की तरह मैं भी विलय पड़े—

‘जब मैं मासवीयजी के रजिस्ट्रार बनूँगा तब’

मासवीयजी मेरे मनोभावों का ताड़ गये । बाव ‘तुम्हें इस सम्बन्ध में कुछ बताना है ?’

घाबेरा के कारण अर्धपते स्वरों में मैंने उत्तर दिया बाव आज मुझे बेईमानी न समझे । मुझे बग इतना ही चाहिए । मुझे लय० ए० की सिंगरी न मिल स मही । आरखी मजदूरों से उत्तर जाना मेरे लिये असह्य होगा ।

उस समय मेरी आँगां ग कंधु की अन्तरण घाग प्रकाशित

हा रही थी। ये आँसू मायिक पोष के ये निरपराधी की बेबम प्रतिहिमा के ये अलमरनापापूर्ण स्वामिमान के थे।

आँसू अमर कर गया। मोसे बाबा का आसन डोल गया। ब्रह्मरति की पत्तों भीष मपीं। विस्रोबनजी (मासबीयजी महाराज के निजी मधिम पणित तिमोमन पंथ) को आदेश मिला 'इस लड़के को मेरी गाड़ी में स जाओ और रसपुञ्जा मिमाकर वापस में आओ। उप-नुनपति की बर म अरगपी विद्यार्थी रसगुम्मा गाने क विग पन पड़ा।

बागग आया तो बाबू अपने कमरे में बिस्तर पर सते हुए थे। अपने पाम बुवाएर पूरा— रसपुञ्ज भरछे थ ?

'जी हाँ बहुत अच्छे थे। मैंने बहुत म रसपुञ्ज ग्या सिम। म चहुँक बोपा।

दूध भी पिपा।

मै मान रह गया। गोविन्द का प्रादग मिला दूध लदक के लिए एक गिवाग दूध म आभा। गोविन्दजी अपने गम तो बाबू म दान्त गर्भार बिना मम म्बर म कहा देगा तुम्हार गुम्बन्ध म निगम कर्त्त का मगुण्य धपिवाग मुझे दे दिया है। मुम तुम्हारे ऊपर पूरा बिवाग है। तुम्हार परीणा एक वर्षा म फिर में भी पावगा।

बाबूने म बेठगर है इन्कार कवना।

बनर इनके चहुँको है मितम बिवाग ॥

'मेरी गिवाग्या अब बाप मोहनेशमी थी। तिम ममय गारिगत्री कमर म आय शाप उर्तने यही दूध देगा हीगा — प्रभुार पत्र कति क गीमा। तापद मरे प्रति गोविन्दजी का भी माग आयोग उनी। आगो की राह बह गया होगा।

बाबू कर्त्त है। मकर उनी माया भवन्ध बिगदिगामय में मरगा क। लोग मरे अम अर्गिता तातो क अभिवादन क विग।

मैं अपने 'बाबू' अपने उप-कृमपति की पुण्यस्मृति को प्रणाम करता हूँ। बाबू विश्वास मानो मैंने अपनी वेध मक्ति को बेचा नहीं है। मैं अब भी ईमानदार हूँ। मेरे ऊपर विश्वास करो बाबू।

इस सम्बन्ध में मुझे एक बात याद आ गयी। सन् १९२५ में जब संयुक्त प्रान्त की बटपुतली मिनिस्टरी काम कर रही थी जवाहरलालजी ने एक तीखा मेख लिखा था। उसमें उन्होंने लखनऊ मिनिस्टरी की पोल खोली थी। उसकी एक प्रतिमिषि हस्ताक्षरित कर उन्होंने मुझे दी। कहा कि इसको यु० पी० के कागज भारों ने जब न छापा तो यह मदराम में छपा। उस मेख का आरम्भिक अंश था—“Politics said George the Third of England are a trade for rascal not a gentleman (इंगलैंड के जार्ज तृतीय ने कहा है— राजनीति व्यापार है बदमाश का मन धादमी का नहीं)। जब पेनी बात है तो यह भय धीरुच्छदासजी की थी कि उन्होंने एम० ए० में पालिटिक्स की। उसका खमिमात्रा तो उन्हें नुगतमा ही था। बहुत जिनों ने कुछ अधिस्वरीयक उन्हें फ्रीमने में पगे थे। परन्तु मैं तो यही कहूँगा कि धीरुच्छदासजी

तल्ले छूटे जो तरे रए प्रमाणा उतरा।

सर से इक बाबू-करोणों का तराजा उतरा ॥

फरक प्रामाणा ही उतरय इज्जत ता मानवीयजी महाराज ने बचा ही ली।

धीरुच्छदासजी लिखने है—

परीणा प्रमाणा हुई तो विश्वविद्यालय छोड़ने का पहिले अन्त बाबूजी का करार करने गया। व बाहर ही बराम में कुर्सी पर बठे हुए मिस गये। प्रणाम किया आशाय मिसा। वह हासिल आशीर्वादा था— देगो अन्त विश्वविद्यालय को माद रखना फिर अर रण कर जोत — सुन्दारी शायरनों और बन्धुमित्रियों के



क्षरण गर्भा भोग गुमग माराज गृत थे । मगर मैं जानता था कि गुम भागे चणकर अवश्य बूझ करोगे । यह विन्धविद्यालय तो गुमारा पिता अम्याग-दात्र मरीया था । जीवन के बिगाय मंगान में पब तुम्ह लेनमे वा अवसर मिसगा । अगनी माँ अगनी मातृभूमि क श्रम नो मठ भूजता । उस गुम जैसे गच्छा मे प्रभुत धारा है । उस निन्दवविद्यालय मे प्राप्त शिक्षा का यही बीजियम श्री होगा । तुम्हारा मंगल हो ।

बाबूजी की मत्र समकमी भोग अने श्री भांगुमां में पूब मयी थी । मैं कुछ न था मरा । मरा गया रु पा हुआ था । मन ही मन बड़ा — विन्धविद्यालय क अणु का बाबूजी के अधीम स्नेह क श्रम नो मातृभूमि क श्रम नो मयी भूलूगा नहीं । अरणु म्पगं द्रिया धोर बोई चिहारी मीमी । भाई त्रिलोचनजी मासर्वायजी का ग्य जोडा या चित्र म भाष । मग जी न भग । मैंन मीग अरक मासर्वायजी महाराज की पगडी बन्धावर और अगरगा विवा । जब तर मे स्वत निन्दनदु गानी क फर मर पर म रू, इतर धाने-धाने की पूजा रदी मरी छी ।

१९४ की मई को म गिरगार हा गया । फिर गिरगना गिया ओर अरगामा जान का अट्ट नम रग । एर बार १९८८ मे मासर्वायजी प्रयाण अत्र मत्र अने गुगत पर मे रूरे । बाबूजी बमरे म उनहा अरर मगा हुआ था । मैं दर्शन करने पहुँचा ता दवाडरू श्री गोबिन्द मसर्वायजी मिन मय । एर बाबूजी क गग मुझे म गय । गोबिन्दजी के अरणु ही कय — बाबू बमगबा भा दया । मैं यग की मत्रा का भाषा है ।" मीग ग बाबूजी मे दुःखनिष्ठ बसाया ओर मरे मर पर गय ऐरन हा धार म बहा — गोबिन्द गगा मैंने बग था न कि यः मदत अणु चवरा बूा बगगा । एरने मरे मूग की माया गग मी ।"

बाबूजी अरणु हा गय व । मैंन गगा रि उरर म गगेर

सगनेबाम गोविन्दबा का दिन भी पर्वीय गया था। उनकी भी ओल्ले मम हो गयी।

गोविन्दजी ने भाइ कृष्णदास को बदमशावा कहा इनम उनका शेष नहीं है। आर सत्यबादिना देगनाछि एव मम्मदशापा क पुत्रस ही क्यों न हा किमी क हृदय को ममक पानबाम बिरन होते हैं। बेबारे गोविन्द ने

रात रीता को ख्यात में देया ।

भारी मूरत जगाव की ली थी ॥

बस एम० ए० क साय-साय बन्मगवा की भी उपाधि पिलौम में मिल गयी एक तस्त्रनलीन वाइम-वासपर स दूसरी भारी वास पाम्पर से। मूत न बर्नमान आर मक्किय देना का मुपार दिया।

### उपमहार

महिमानं यदुत्तीर्य तव ननुयते मम ।

भवेत्त तदगत्वा वा न गुणान्नामिषत्तया ॥ वातिशाम ।

( अर्थात् भगवान् की महिमा का बर्णन करता हुआ कोई भी व्यक्ति यदि अपने मस्मरण का उपमहार करता है तो वह अपने भ्रम क कारण अथवा अधिष्ठ जानने की शक्ति न होने क कारण करता है। भगवान् क गुणों की समाप्ति हा गयी हा एमा महीं।)

मीर म एमी धृष्टता बंस कर मकता है जब—

स्वाकीर्तिमीक्षित्त्वात्तानि गुणैस्त्वदीये

सर्वभित्तु विबुधवामहतात्प्रवृत्ता ।

नाप्तो पुत्रस्तु न च कीर्तित्तु रग्मनेतो

हारो न ज्ञान इति ता स्वनिषो ह्यग्नि ॥

( गिया में जानने की शक्ति अर्थात् शर्ती है। एर आर उर्हृति आपके गुणरूपी— डोर आर कीर्तिरूपी शुद्ध मानिया म एर मासा गु पने की शर्ती। पर जब उर्हृति दया नि न तो आपके गुण शरी

दोरे या बोर्ड घन्त है और न कीर्ति रूपी मोतियों में उनिक सा भी छिद्र है तो माया कसे बने यह देखकर वे अपनी अदाधि पर आपस में हंसने लगे।)

प्रब मैं अपनी दुकान समेटता हूँ। 'एम० एम० पी० Senior Superintendent of Police की रूपी स या यदि वक्रागति स कहिय—व्यक्ति दो है पर यात एक है—तो PS.S (प्रधान मन्त्रालय मरम्यती क अनुग्रह से निर्धारित अवधि के उपरान्त भी मेरी दुकान खुली रह पायी इमफा में आमायी है। पर उनकी दफ्तर १४६ का भी तो गवाय है। घत में अब इन संस्मरणों को घटाता हूँ और अपनी दुकान बढाता हूँ। गरीबों का ताँता तो मया ही रहेगा। व मुझे दामा करेंगे।

मालकीयती का गुणानुवाद करने स जी नहीं भरा। अभी निर्धारित अवधि स दस-पौच मिनट बाकी है। तब तक थोड़ा सा और बणन कर क्यों न अपने हृदय को पवित्र कर लूँ ?

वस्य स्मरतामात्र तु अमर्त्यनारव्यपनात् ।

विमुष्यत नमस्कारे नमो नमः ॥

( जिसने सम्मगल मात्र स संसार क बाधनों स प्राणी मुक्त हो जाना है उस बाग्म्बार ममस्वार है।)

श्री मी० एच० तेंदुज मालकीयती के प्रति लिखत हैं —

"It remains to try to sum in a few words his character which all who have known him intimately have found so gentle and winning. No one no even Mahatma Gandhi himself is dearer to the vast majority of the Hindu public. He has also a great record of public national service which places him very high indeed among those Indian leaders who are still living in our

own times. There is in him a bravery of spirit which is equal to his tenderness of heart and his religious faith is as simple as that of a child. Behind all is a personality so attractive that he has won the hearts of millions who have never even seen him but have only known his great sacrifices both on behalf of his motherland and his Hindu faith.

( मुझे सब चीज़ें स शरों में उनका परिवार के सम्बन्ध में लिखने का प्रयास करना बच रहा है, जिस सब मार्गों ने जा उनका प्रति निष्ठा सम्पन्न में आये हैं इतना सीम्य और आश्चर्य पाया है। कोई भी व्यक्ति यहाँ तक कि स्वयं महात्मा गांधी भी असंख्य हिन्दू जनता को इतने प्रिय नहीं हैं जितना मासवीयजी। उनकी देरा-संघा का बहुत बड़ा आता उन्हें उन भारतीय नेताओं के बीच में, जो हमारे बीच आज भी मौजूद हैं बहुत ऊँचे स्थान पर बिठा देता है। उनकी धर्म-निष्ठा बर्षों के विश्वास के समान मरत है। और इस सबके पीछे उनका व्यक्तिगत इतना आश्चर्य है कि उसने उन सारों आत्मियों के हृदयों का मोह लिया है किन्तु उन्हें देगा भी नहीं है परन्तु कबल उनका मातृ-भूमि और हिन्दू-धर्म के प्रति महान् उत्सर्गों के द्वारा जानत हैं। )

एक मातृम नहीं किन्तु प्रशासक बाक्य बड़े-बड़े लामाने मासवीयजी के सम्बन्ध में लिखे हैं। उन सबों का इन छोटी सी सग मासा में समावेश असम्भव है। अतः मैं इन सगों का संस्मरण ही में सीमित रगू गा। वो एक पुरानी बातें महान् यात्रा की हैं उन्हें लिखता है।

स्वदेशी वस्तुओं का स्वयं उपयोग करना और उनका प्रचार करना मासवीयजी के जीवन का एक अंग था। १५ मई १९३३ का

उन्होंने "लाहाबा" म्युनिसिपल म्युजियम का निरीक्षण किया और  
उसकी निर्माण योजना पर यह स्पष्टी अपने हाथों से  
लिखी—

मैंने आज प्रयाग म्युनिसिपल म्युजियम को देखा। इसको  
दृग्गुरु मुझे प्रशस्तता है। छोटे समय में एक द्वेयन के योग्य नया  
स्थान बन गया है। बहुत ही महूर्ति पदार्थ अनमोल हैं जसा  
संस्कृत का शास्त्री लिखित पुस्तकें जो मर स्यागवामी मिश्र द्वारा  
जयगुप्त श्यामजी का पुस्तकालय "म नाम से म्युजियम को भेंट  
की गयी हैं यसा ही अरबी और फारसी की हस्तलिखित पुस्तकें  
करमान आदि। ये म्युजियम मरे मिश्र परहित प्रजमोहन श्याम के  
परिभ्रम और उत्साह का फल है। "मरी जो उन्नति इस छोटे से  
समय में हुई है उसमें मुझे आशा है कि आगे चल कर हमारी और  
स्वाधी उन्नति होगी। मरी राय में हर एक जिले में एक स्वाधी  
स्वदेशी म्युजियम स्थापित होना चाहिये और अच्छा होगा यदि वह  
म्युनिसिपल बोर्ड की आ स या उसकी सपन गहायता में स्थापित  
हो। "यमें दरा की बनी गये आरक्षक यन्त्रुओं का संग्रह होना  
चाहिये और उनमें मिनने का पना आर उता मोन की भी सूचना  
होनी चाहिये। इसमें दरी व्यापार की दृष्टि में बहुत गहायता होगी  
और म्युजियम की उपकारिता बहुत बढ़ जायगी। हर तीगरे महीने  
म्युजियम में जिन के भीतर बर्नार्ड गर्द चीजा का प्राग प्रदर्शन होना  
चाहिये। इसमें जिन के निवासियों में गर्द चीजा के पताने का  
उत्साह बढ़ेगा।

ता० ११/४ १९३३

(\*) मदनमोहन माधवाय

मन् १९३४ में कामगी में आयोजित स्वदेशी प्रदर्शनी के  
अवसर पर मानवर्ष की म जो महत्वापुग सदस्य भेजा था वह इस  
कारण है—

'स्वदेशी का प्रोत्साहन काय है जिनमें आता ही है'

सबका मसा होगा। जिस प्रकार सासटैन अंधकार को हटाकर प्रकाश फैलाता है उसी प्रकार स्वदेशी का व्रत कुस और दरिद्रता को दूर हटाकर सुख का प्रसार करता है। मैं यत् ५९ वर्षों से स्वदेशी का उपयोग कर रहा हूँ। मैं देश-सवा को ईश्वर की उपासना मानता हूँ। आज देश के साथों काँगर अपने गुणों का सहारा लकर भी अपने परिवार का पालन नहीं कर पा रहे हैं क्योंकि विनायती वस्तुओं में उनका बाजार बन्द कर दिया है। स्वदेशी व्रत से देश के सभी लोग सुखी होंगे देश का धन देश में रहेगा। परमात्मा आप सबको अपनी भक्ति के साथ-साथ देश भक्ति भी प्रदान करे।

मासवीयजी का जीवन स्वदेशी निष्ठा से भोज प्रोत्साहित था। अब इस विषय पर कुछ अधिक कहना पुनर्बुद्धि होगी अथ समयक्रमानुसार बर्णन की अवहेलना कर कुछ थोड़े से संस्मरण प्रस्तुत करता हूँ।

बीस वर्ष कापी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुसपति रहने के बाद मासवीयजी ने अस्वस्थता और बाधक्य के कारण अकाला ग्रहण कर उस पदभार को भी सर्वपल्ली राधाकृष्णन (वर्तमान राष्ट्रपति) को सौंप दिया।

बार्धक्ये समतो मूत्रं स्वदेहजनैर्भवि न ।

विपित्तप्रप्यप्रसिद्धः ततः कीदृक् विपास्यति ॥

—कृमारदान जानकीहरण ।

( एक लो मनुष्य बुढ़ाई में स्वभावतः दृच्छील हो जाता है और अपना शरीर ही उठाये नहीं उठाता तब दृच्छा रखने शुरू करे तब जिस प्रकार कर सकता।) विश्वविद्यालय के कुसपति का पद भार किसी तप से कम लो था नहीं।

अकाला ग्रहण कर वे मासवीय मवन में रहने लगे। बहुत बुर हो गये वे कमर झुक गयी थी शरीर के सहारे समतल थे। दंत पर भी उनसे मिलने वालों की मीढ़ लो लगी ही रहती थी। पक्षि

क अक स आता-जाता रहता है। जो बात मुझे धोर पीडा दे रही है वह यह है कि प्रतिपियो मे यह समझ कर कि अत्र इनके पास धन नहीं रह गया आना छाड़ दिया )।

इसा प्रकार अर्थाभाव मालवीयजी को पीडा पहुँचाता रहता था।

### विश्वविद्यालय में विश्वनाथजी का मन्दिर

सन् ७५ वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में आयोजित स्त्रय में भाषण देने हुए, मालवीयजी ने इस सम्बन्ध में कहा था—

इस मन्दिर के लिए मैं क्या कहूँ। यह अथ तब क्यों नहीं बना इसके लिए मुझे बड़ा दुःख है। पचास मीन पवन चल कर एक तपस्वी महामा आये और उसकी सीप गल गये, तबसे यह अभी तक नहीं बस सबा। पर मरना सब दोष मुझ पर ही है। आप जब राहसे नहीं रिदरों में भी बह-चड़े मकानों क बनने में यों ही देर होती है। बृहुरमुता तो यों ही उग आता है, पर बड़े धन के यदन में गमय सगता है। मेने इसके लिए काफी समय नहीं दिया मुझे इसकी बड़ी शर्म है। हम सबको जतन करना चाहिये कि सामग्री इकट्ठी हो। सब विषयों इस मन्दिर के लिए प्रयत्न करें और धन इकट्ठा करें तो समुचित प्रबन्ध हो। मेरा दम बर्ष कर कार्यक्रम है। आप रिश्वास रगो में अर्था नहीं मरू गा। ( मविष्मवाली!!! ) राधिर छूने पर भी मैं नहीं मरू गा बस्कि हिन्दू विश्वविद्यालय में या यहीं नहीं जम कर हिन्दू जाति और देश की सेवा करू गा। यदि भगवान् की मर्जी होगी तो मैं मुझे और आपु दंगे। यदि उन्हे इस राधिर ग और मरा बरानी होगी तो मेरे ग्यास्थ्य में और बन में इन्दि करोगे और यदि उनकी इच्छा नहीं होगी तो उनकी मर्जी। उग याग का भगवान् गमना है।

उक्त भाग को एक पत्र सम्मिलित करने जा रहा है जिनको

विगने में लवीयत मिमन्त्रिणी है—

गुनाता बहता है किरतये-यम उनको मैं लेकिन ।

भुबारा बहते बहते प्रांत मर प्रायो तो क्या होना ॥

### वज्राली की मृत्यु

मासवीयजी क उद्वेष्ट पुत्र पण्डित रमाकान्त मासवीय का प्यार का नाम बंगामी था । मासवीयजी को वृद्धावस्था में अपने प्येष्ठ पुत्र का विदोह बनना बड़ा था । विधि के इस दाखल बिपाल को कौन टाल सकता था । शरराम्या पर पड़े, भीष्म पितामह स निम्नी ने पूछा— 'महाशय ! दीर्घसिु अच्छी या बुरी ?' बोले— 'अच्छी भी और बुरी भी । अच्छी इस अर्थ में कि सुत्कार्य करने के लिए अधिक समय मिलता है परन्तु बुराई यह है कि प्रियजन विदोह की सम्भावना बढ़ जाती है । अपनी माता के मरने पर उनका दाह-कर्म बंगामी ने ही किया था । परन्तु उनकी बर्षों करने की मौखत न आयी और वे बीमार पड़ गये । मासवीयजी उस समय सिद्धविशालय में रहते थे । अपना पुत्र अपनी आँसों का सामने छे और उसकी अच्छी स अच्छी बना की जा मुह मत बंगामी बाहू सिद्धविशालय गुप्त की कोठी में जो सिद्धविशालय का बहुत निकट थी रहने लगे । वहाँ सब प्रारत की सुविधा थी । परन्तु बीमारी आम की तरह बढ़ती ही गयी । कोई दवा काम नहीं कर रही थी ।

मि प्ये नहीं बहता कि क्या कुछ नहीं करती ।

बहता है किरत हृत्पे-यरा कुछ नहीं करती ॥

—अरपर 'साहाबादी

एक दिन उनकी हागत बहुत बिगड़ गयी । अब-सब मर गया । स्वर बहुत तत्र बढ़ आया । आँसों का निरन्तर गढ़ती थी पर प्राण नहीं निबन रहे थे । सोणा ने जाकर मरर दी और कहा— 'महाशय रमाकान्त की मृत्यु समय घोर बल में है । अब कुछ ए



नहीं गया केवल प्राण नहीं निकल रहे हैं। वे आपके आत्मावरी मुक्त हैं बिना आपकी आत्मा के प्राण नहीं छोड़ेंगे। आप उमकन कष्ट से उद्धार जल्दी कीजिए। मातृवीयजी सुस्त मोटर पर आये और कमरे भूकाये मट्टी टेकते रमा के सामने जाकर सड़े हो गये। कुछ क्षण उन्हें देखते रहे और फिर आँसों में आसू भरकर बोले 'बेटा! तुम्हें बड़ा कष्ट है अब तुम जाव। रमा की आँसू जो अब एक क्षण के कारण निरन्धी पड़ती थीं वे करबपी सन् १९४३ में सदा के लिये बन्द हो गयीं।

उस दिन से ११ महीने पूर्व उमरि माता सौभाग्यवती कृष्ण देवी ने श्री मातृवीयजी की आत्मा लेकर अपने प्राण छोड़े थे।

रमाकान्त जी को देखने में करीबी गया था। यह सब व्यापार मैंने अपनी आँसों से देखा। रमा की मृत्यु के बाद कुछ सोग मातृवीयजी को मोटर में बिठाकर उनके भवन में ले गये। मैं उनके साथ मोटर में बैठ गया था। रास्ते में वे मुझसे एक शब्द नहीं बोले और मैं भी कुछ बोला। सोपने ही को क्या था। केवल धीरे रगड़र विधि के बिगान को मन मस्तक होना था।

मोटर से उतरकर मातृवीयजी जसे-तैसे अपने कमरे में बिना बिगिरी से कुछ सोप घाम ले गये और कमरे को भीतर से बन्द कर दिया। कमरे के भीतर क्या हुआ कौन जान सकता है।

जो घारपी वे गुबरनी है पाग में हरकम।

निशा लुभा के बिनी को खबर नहीं होनी ॥

—अमीर

हम सोग बाहर के कमरे में बहुत धीरे धीरे पुग-पुग बात्र कर रहे थे। वना समता था उस मातृवीयजी के कमरे के दरवाजे पर कोई दर पुग घान मुद् क सामने अंगुली रगे पड़ा हो और हम सोगों से बन्द रहा हो—पुन।

मभी लाग जीवन की असरता पर लुप्त थे ।

मग्ने बाला, मरते हम एक बात छाँडि कह गया ।

हमरो देखो, तुमको अपनी जिम्मेगी पर बाँड है ।

दिन बीतत डेर नहीं सगती । मासकीपजी भूट गये पर संसार  
अपनी गति स बनठा रहा ।

लगभग एक वर्ष बाद मैं किसी काम से कारी गया । मास-  
कीपजी के दशन करने गया । वे अपनी चारपायी पर सेट थे । मुझे  
अति निपट बुलाकर मेरे परिवार का कुजन समाचार पूछा । उनकी  
दहाड़ने वाली आवाज जब बहुत धीमी पड गयी थी । सहसा मास-  
कीपजी ने मुझसे बहुत धीरे स कहा— 'भ्यासजी कुछ सुनाइय । मेरे  
मुह स निश्चय पडा—

रखि से छूगेर टुघा इमताँ ती निट बाला हूँ रंड ।

पुसिर्न हल पर पड़ी इतनी कि धाराँ हो यवीं ॥

—गासिय

मासकीपजी की आँखों स आँसू बहने लगे । भर्राई हुई आवाज  
स बोले—फिर कहिये । मैंने उनस आँखा पामन ती किया पर  
मुझ बडा पछतावा हुआ कि यह धेर पडा ही क्या । उनके आँसू  
मेरे हृदय में तीर के समान चुभे ।

इन आँसुओं की हजीरत को कीज समझेपा ?

कि इतने मौन गरी जिम्मेगी का मानन है ॥

दस भीयस दुषटना के बावजूद वे करने कर्नभ्या स बिरत नहीं  
हुए और अपना शरीर धमीटकर काम करते रहे । गोमाशानी के  
नृशंस अत्याचारों स उनकी आत्मा हिल उगी और वे विह्वल हो  
गये । अपना एक सम्बा वस्तुधर् तीयार किया जिनमें उन्हें कई दिन  
बड़ी मेहनत करनी पडी ।

मालवीयजी या देहावसान

दसके तीन चार दिन बाद वे संध्या समय जाठ मीम दूर दिव  
 पुर गोपाला के उत्सव में गये ।

कील ता भोंवा बुझा देया, निते माशुम है ?  
 बिगदवी एक तामा रोजन ई हुवा के सामने ॥

—विस्मिता-ब्रमाहावादी

उल्लास से रात्रि को देर में सोटे और ठण्ड भग गयी । उन्हें  
 क्या माशुम था कि यही हुवा का आगिरी भोंवा है । दो एक दिन  
 कुछ स्नान न दिया । दगा बिगदवी गयी ।

प्रतिपुनतामुपगतै हि बिपौ  
 विचलितशमेनि बहुभाषमता ।

पक्षान्तरनाय दिनमत्तु रमुम्न  
 बनिप्यन करतहसर्गनि

माप—शिशुपाम बप

(जब विपि प्रतिपुन हो जाता है तो मारे साधन विफल हो  
 जाते हैं । सूर्य ही को देगो यन्त्रि संध्या के समय उग उगते महस  
 कर (दण्ड—दिरण)—शाय उस उगाय रहते हैं पर दूबने न उसे  
 मने बषा मकन) अन्त म १२ नवम्बर १९४८ को ८२ वष की आयु  
 में भारत का सूर्य अस्त हो गया ।

मानवीयजी के अन्तिम दर्शन करने न मिग भीठ दूरी पड़ रही  
 थी । दर्शनों का वातावरण न था । बादर बरामद में जर्न राव रगा  
 था यहाँ एक बीने में शय पर मैं आंग यदाय निस्त्वण गदा उनक  
 दर्शन के समूह को पीठ महाँ बषाठा था । मेर अन्तिम निवास  
 अंगों म सून मय थे । मेरि—

एक न कर बेरी लारक जांगी कर ।  
 दुँ की जांगु ब्याये बजे है ॥

मानवीयजी की अग्यी बा जो इमूम इयानपाय गया या उमका कोई वणम न करेगा। इतना बहना पर्याप्त होगा कि अग्यी ने इमके पूर्व इतना बड़ा जुमूम न देगा होगा।

जब शय बिता पर रखा गया तो महमा मेरे मंह म निरल पड़ा—

अपि निर्दय देव ! कि हृत । विविधं तेनैक बुभिक्षेऽस्तम् ।  
 प्रथमं दुर्निगान्तिरस्तम् । हृन्म्येन्नामनागमनामनाम् ।  
 मगदम् पदमेकेनां दुर्म । मगरामन्ति हृगत्रयेष ते ।  
 किमुनाककगत्रमीहयां । विविधं तत्रि विविधं विष्टे ।

कव क्वात्स्य किमात्स्य केवना  
 कव क्वासा वाकपदुता कव भा कव पीः ।  
 कव नु वातनवाग्ना गवा  
 मुवि लेमेय विविधं विष्टे ।

( हे निरदय देव ? तुमने यह क्या किया ! हे यम ! तूने इन्नु दुःखेष्टा को यिकवार है कि तूने सहसा हमारे हृदय पर कथपात किया। यह मगवत्स्य परिवार तो तुम्हारी कृपा का पाप है। यद तूने कैसे उसके साथ अकुरुल और गर्हित व्यवहार किया। (मिया) इनकी केवत शक्ति कहीं कमी गयी ? वह वाकपदुता प्रस कहीं रती ? वह तमम्बिता वह मुद्रि कहीं विमीन हो गयी ? वह मुग का मौन्य कहीं लुप्त हो गया। आज यह शरीर पृथ्वा पर पड़ा मौ र्हा है। )

तब और अब

दिन पर दिन धीतते पत गये। मानवीयजी अब स्मृति मात्रावरोप र्द गये।

जानेजाना कभी नहीं थागा।

जानेजाने को पार धानी है।

असे धीणा के सार दूटने पर अंकार आती है।  
 "Then came a change as all things human  
 change

(तब परिवर्तन आया जब सभी सांसारिक चीजें परिवर्तनशील  
 होती हैं)।

मानवीयजी के देहावसान के पहिले लोगों में घुस-घुस बात  
 होने लगी कि मानवीयजी को कारी की परिधि के भीतर से  
 जाया जाय क्योंकि नगवा जहाँ विश्वविद्यालय है, शाख के अनु  
 गार कारी की परिधि के बाहर है और वहाँ मरनेवालों को मोग  
 नहीं होता। मानवीयजी को इस बातचीत का किसी तरह पता  
 बन गया। उन्होंने वाक्य "योतिभूयण्य गुम को बुलवाया। गुमत्री  
 स्वर्गीय राजा मोक्षीचन्द्र के उपराधिपारी हैं और आजात विन्व  
 विनास्य के अवतानिक बोधायदा हैं। मानवीयजी उन्हें अपने पुत्र  
 के गमान मानते थे और यज्ञोपवीत में उन्होंने स्वयं उनको मंत्र  
 दीया दी थी। उस मानवीयजी ने कहा "दिगो ज्योति। मुझे वे  
 मोग कारी न से जाने पायें। मैं अभी मोक्ष नहीं चाहता। मेरे काम  
 अपूरे पडे हैं। मुझे विश्वविनास्य और देश की सेवा करनी है।  
 जोतो बचन देन हा कि तुम मेरे दस प्रादेत का पालन करोगे।  
 ज्योतिभूयण्यजी जगा-जसा हो गय और वचन दे दिया। तब  
 मानवीयजी को शान्ति मिली।

मानवीयजी के अन्तिम समय की एक घटना और स्मरणीय  
 है। सर जुगुतनितोर बिदाया उन्हें लेगने गय थे। उनमें उन्होंने  
 कहा, "मरने का कोई समय नहीं है परन्तु मन्दिर के बनने की बिन्दा  
 मुझे गजा रही है।" इस पर बिदायाजी गुरस्त बोव उठे— "मर।  
 पूरा मार मैं बनने उार सेवा है। भर आर द्यरी बिन्दा दोड़  
 दे।" बिदायाजी के आश्चर्यन म मानवीयजी को जो शान्ति मिली  
 पर उनका अन्तिम की प्रार्थना कर ली थी। शायें म वह आता

महो हो सकती ।

इसी प्रकार मासवीयजी के देहावसान के बाद विद्वद्विद्यालय का वातावरण और परिवार का ना संगठन क्रमशः शिथिल ही होता गया । याद रहे कि यह मैं मासवीयजी की कसौटी पर कसकर कह रहा हूँ । सन् १९३१ में मैं वहाँ एग्जिक्यूटिव आफिसर के पद पर नियुक्त हुआ और साढ़े छः वर्ष उस पद पर रहा । इस बीच मैं मैने देखा कि—

यह हलत हो गई है एक सारी के न होने से ।

जि जग के काम भरे हैं मन से और मजाना सारी है ।

मैं मासवीयजी की स्मृति को हृदय में जुगाहर अपन नाम में पत्र गया । यद्यपि कर्तव्यों के पालन काल में मैं पूज्य मासवीयजी के उपदेशों का सदा ध्यान रखता था फिर भी दिमाग में साट साहबी तो थी ही । इसका एक संस्मरण कहकर इस लगमाना को समाप्त करूँगा ।

विद्वद्विद्यालय की इस विस्तृत भूमि पर पहिले किसान लोग रहत थे और उनक खेत थे । बहुत भूमि जब विद्यालय के लिये ली गयी तो वे सब उखड़ गये । मासवीयजी को बना यह बड़े सहा ही सरथा था । उन्होंने विद्वद्विद्यालय से संसम्न दो बड़ी जमीनें खरीद लीं और उनमें उन सब उखड़े किसानों को बसा दिया और वे पूर्ववत् अपना काम करने लगे । लगान भी उनके ऊपर बहुत कम ममाया । उन दोना गाँवों के नाम—एक का जनाते गुण्य पण्डित आदित्यराम भट्टाचार्य की स्मृति में आदित्यनगर और दूसरे का बनने परम मित्र पण्डित मुन्दरनान दस की स्मृति में मुन्दरपुर रख दिया । उनन ममान वसूण करना मेरे विभाग का काम था । मैने देखा कि निदान मोतह वर्ष स चिन्नी म समान वसूण ही मत्री किया गया । यह अवश्य है कि उनमें बहुत से बड़े गरीब थे पर ऐस भी तो थे जो दे मखे थे । मैने तार में आकर कह

निश्चय किया कि मैं गम्बूह दिन के अन्दर वसूल करूँगा। मैंने राबो को एक हफ्त की रजिस्ट्री मोटिस बेगनी की दे दी। व मोस गममे कि यह बदरमपची है। दसवें दिन एक बड़ी मोटर पर दस लपटे लम्बों के साथ सुन्दरपुर पहुँच गया। पहिले स जिमादार को उन मोसों को इपट्टा करने के लिए भेज दिया। मैंने उन लोगों से कहा— दसो! आज मैं यह निश्चय करके आया हूँ कि या तो आज मैं सब बनाया वसूल करूँगा या तुम्हारे घर का सामान बाहर निरसवाकर तुम्हें बेगल कर दूँगा। इमने करने में आज पाहे मारा गिर जाय। वहीं मासवीयकी वहाँ पर होत सो यन् मरा नान पबन्दकर विरवविगामय म न निकाल देन तो सुन्दरपुर ग चल जाने क सिय भयान्य कहते।

ये घंटे क अन्दर मैं वसूलपाची कर सी। जितने गरीब थे उन सबका माफ कर दिया और माफ़ी कर पुर्जा तत्पनत ठहरे दे दिया दूसरी मनमनी आन्वियतगर में चेंस गयी। दूसर न्न वही गया और दगा प्रचार वही क यथाये की वसूलपाची कर सी।

प्रा-शाम चांसर, प्रोनेयर मार्तनर यह मुत्कर पन्ठ हो गय और उन पर मरी कार्य कुरागठा का मिशा जम गया।

तीन-चार दिन बाद मेरे विभाग का एक गारामी एक अत्यन्त गरीब पासिन का मरग आया। उसका साथ उगरी बिपवा बहू होर तीन मार पटे हास दुबन-दुबन बरुन थे। व विरवविगतय क अत्यन्त स्वान पर भाग जाना महीने क तिरापशा थे। इत पासिन क जिम्मे याम गपना बनाया का। अशयवर सिंह मे वता— एर मरी बहू व गम की समुनी गिरो गगारर मापद गपया तो मैंने मराने म जमा कर लिया है। अर त गपया क विप क्ता हवम हागा ? अशयवर गिह पर गुम्ता आया और मन में मया कि का दू कि समुनी तो एर गया, अर गरदन भी उतरवा

नो। मेरे हृदय में दबी हुई मासवीयजी की स्मृति ने करकट सी और मेरी आँसों में आँसू आ गये। बोला— भयपत्र मित्र ! तुम्हें इस गरीब बहू के गने में हसुनी उतरवाते सज्जा नहीं आयी। तुम्हारे यह बेटी नहीं हैं क्या ? अमी खान और उस आदमी का हँसुनी का साथ हाजिर करो। मैं अपने दफ्तर से उठकर प्रो-बाइस सांसकर के कमरे में गया। राप में इन गरीबों को सेवा गया। प्रो-बाइस सांसकर स मैंने कहा— प्रोफेसर नारलिकर ! मैं इस समय बड़ा खुशी हूँ। हमारे इन यमदूतों ने हम गरीब पागिन की हसुली उतरवा ली और उस गिरी रखकर मोनह खया बकाया बसूस कर लिया। अब छ खया वाक्ये रह गया है। हूपया गरीबी के कारण इस माफ कर लीजिये। उन्होंने तुरन्त माफ कर लिया। मैं कुछ हिचकते हुए बोला— यदि मैं आप स यह सिफारिश करूँ कि सोमह खया जो खजाने म जमा हो गया है वह इस वास करे ता आडिट इस पर आपसि करेगा। पौड़ा ठमककर मैंने कहा अबछा इस मैं दूगा।

इसपर प्रो० नारलिकर मुसकिरकर बोला—“Let us share it half and half” (ब्यासनी ! हम लोग इसे आपा-भापा सहन करें।) मैं तुरन्त बोस उठा—Prof. Narlikar I am prepared to share my sins with you not my good deeds (प्रो० नारलिकर ! आपके माप अपने पापों का बटवारा करने के लिए प्रस्तुत हूँ पुण्यों का नहीं।) प्रो० नारलिकर मुसकिरये। कमरे का बाहर वह आदमी हसुनी लिये लड़ा था। मैंने जेब स सोनह खया निघमतर उम आसुनी को दे दिया और हँसुनी लेकर नारलिकर माहब का सामने ही उम गरीब पागिन की बहू का गले में पहिनरा दी। वे लोग अमीसते पये गय।

येही किननी ही पटनायें प्राये निन तुभा कर्ती पों। परन्तु जब-जब मैं सहायता करने में आने को बेचस पाता था तो मुझे



प्रो० त्रिगुणायत की बात याद आती थी—उस समय की सुसना  
में आज रोना आता है ।

परन्तु साबारी थी । किससे कहें और कौन चुनता है ।

काका-जो मिस तो उन्हें उल्टे बहेंविल ।

बाबे में ईट चुने से परवर से बपा उन्हें ॥



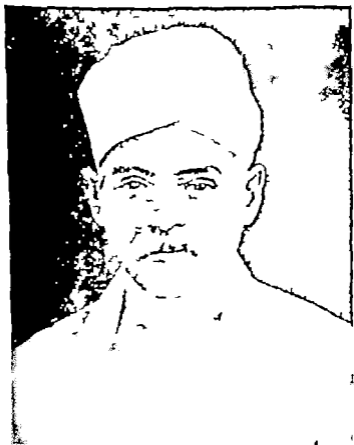
मालवीयजी के पूज्य पिता पं० राजनाथजी मानवीय





मालवीयजी की पूजनीया माता धामती मुनादेवीजी





महामना मालवीयजी

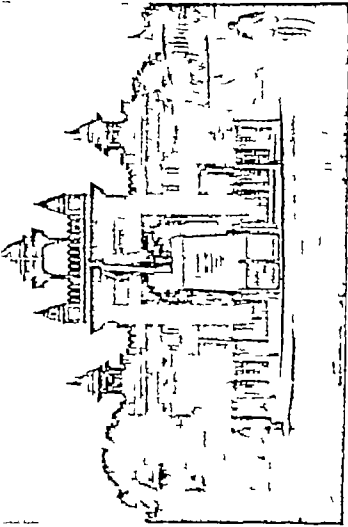




मासवीपत्री श्री पत्नी धीमती पुन्न दवी जी







गारा हिन विश्वविद्यालय का मुख्य द्वार



